

नम्बर	विषय	दोहा	पृष्ठ
१३	दशमूं चमर सुधमार्गत अधिकार	२७	४५
१४	इकारमूं वली कम्मा अधिकार	४७	४८
१५	असहेजाधिकार	५५	५४
१६	वारमूं यात्रा अधिकार	२६	६०
१७	तेरहमूं इक्कीस हजार वर्ष तीर्थ रहसी ते अधिकार	४३	६३
१८	चौदहमूं आगम अधिकार	१६	७२
१९	पनरमूं मुख वस्त्रिका अधिकार	७२	७४
२०	सोलहमूं स्याद्वाद अधिकार	४२	८१
२१	सतरमूं विषंवाद अधिकार	१०१	८६
२२	अठारमूं निर्युक्ति अधिकार	२२	९६
२३	उगणीसमूं नन्दी थिरावली अधिकार	६६	९८
२४	बीसमूं नदी अधिकार	२६	१०६
२५	इक्कीसमूं दानाधिकार	१७८	१०६
२६	षावीसमूं श्रावक ने दियीं स्यूं थाय अ०	६६	१२७
२७	तेवीसमूं अनुकम्पा अधिकार	१४०	१३७
२८	चौवीसमूं सुभद्रा अधिकार	२६	१५१
२९	पच्चीसमूं गोशालाधिकार	२८६-२-४	१५४
३०	छब्बीसमूं प्रतिमा वैराग्य नो हेतु कहै तेहनुं उत्तर	२०	१८७
३१	सत्तावीसमूं लिपि अधिकार	२०-२	१६०

॥ श्री जिनाय नमः । श्री सद्गुरुभ्यो नमः ॥

॥ कर्त्तव्यता ॥

इस संसार रूप महा अरण्य में अनादि काल से जीव श्री जिन प्ररूपित मार्ग से विमुक्त होके कुगुरुहीणाचारियों की संगति से कुमाग अङ्गीकार कर परिभ्रमण कर रहा है, नरक निगोदादि के अनन्तानन्त दुःखों का उपभोगी हो अपने पवित्रात्मा को पाप कर्मरूप अशुचि से अपवित्र करता है, ज्ञान दर्शन चारित्रादि निज गुणों को बिसार पञ्च इन्द्रियों की विषय विकारों में लित होके उन्हें ही अपना कर्त्तव्य समझ रहा है, जैसे कोई मनुष्य मदिरापान के नशे में पागल होके अपने अच्छे अच्छे प्रसादों की सुख शय्या को छोड़ महा दुर्गन्ध भूमि को ही सुख शय्या समझ किसी चतुर पुरुष का कहना न मान वहीं लौटना अपना परम कर्त्तव्य जानता है । वैसे ही जीव मोह मित्य्यात्व मयी नशे की मतवाल में मतवाला बन जिन कश्चित सुख शय्या को छोड़ इन्द्रियों के काम भोगादि शय्या को ही सुख शय्या जान उस ही में रङ्गरत्ता रहना अत्यावश्यक कार्य्य समझता है, यदि सच्चा और स्वच्छ धीर मार्ग में चलनेवाले महाभ्रष्टि शुद्ध निःस्नेही मोक्ष मार्ग बनावे तो उल्टी उन्हीं महात्माओं की न मान कर उन निरारम्भो निष्परिग्रहों की निन्दा करने को तत्पर बने रहते हैं, किन्तु जिन कथित मार्ग क्या है इस को पहचानने की कोशिश नहीं करते, संसारी मार्ग जिन कथित मार्ग से एकदम विरुद्ध है इसलिये चतुर्गति संसार अटवी में भ्रमण करनेवालों को मुक्ति मार्ग अच्छा नहीं लगता है यदि कभी वीतराग मार्ग जानने की कोई हलु कर्मी जीव इच्छा करे तो हीनाचारी कुगुरु कुदृष्टान्त लगाके मोले लोगोंको वहका देते हैं; परन्तु न्यायी और विद्वान पुरुष तो सत्यासत्य का निर्णय किये बिना नहीं रहने, जिन हलु कर्मी को संसार के सुखों

से अरुचि हो गई है वे समदृष्टि तो जानते हैं कि जितने जितने सावध जोगों का त्याग किये सो धर्म और आगार रक्खा सो अधर्म है, जिस कार्य को साधू मुनिराज सावध जान के त्यागा है उस कार्य को करने कराने और अनुमोदन मे पाप है, जिन आज्ञा में धर्म आज्ञा बाहर अधर्म श्रद्धना ही सम्यक्त्व है, जिस कार्य की जिन आज्ञा देते नहीं और अनुमोदना भी नहीं करते तथा अनुमोदना करने से साधू को प्रायश्चित आवे तो वही कार्य गृहस्थ करे करावे और भला जाने तो एकान्त पाप है, वस यही जिन मार्ग की कुञ्जी है इसे जो अच्छी तरह से जान लिया है उसी के निग्रन्थ प्रवचन अर्थ और परम अर्थ। सदगुरुओं ने कृपा पूर्वक भव्य जीवों को संसारमयी समुद्र से तैरने के लिये जिनागमानुसार अनेक ग्रन्थ सरलता से बना के उपकार किया है इस के लिये उन महापुरुषों को जितना धन्यवाद दिया जाय सो थोड़ा है 'निन्दक लोक भले ही उन जितेन्द्रियों की निन्दा करे परन्तु जो संसार मार्ग से विमुख और मोक्ष मार्ग से सन्मुख विद्वज्जन हैं सो तो उनका हृदय से आदर करते हैं, स्वामी श्री भोखनजी के चतुर्थ पाठ श्रमद् जयाचार्य (श्री जीतमलजी स्वामी नाथ) महा प्रभाविक और शास्त्र वेता हुए उन्होंने भगवती आदि कई सूत्रों की जोड़ ढाल बंध सरल भाषा में बना के जिन बचनों को यया तथ्य प्रगट किया है तथा अनेक ग्रन्थ बनाये हैं जिन्हे पढ़ने सुनने से न्यायाश्रयियों को तत्प्यातथ्य का स्पष्ट ज्ञान होता है यह हित शिक्षावली "प्रश्नोत्तर तत्वबोध" स्वामी का ही बनाया हुआ है।

॥ प्रश्नोत्तर तत्वबोध बनने का कारण ॥

सम्बत् १९३३ की साल में अजीमगञ्ज (मकसुदाबाद) शहर से बाबू कालूरामजी १ प्रश्न पत्रिका ५२ दोहा में बना के लाडनू के श्रावकों को स्वामी श्री जीतमलजी महाराज से मालूम करने को भेजी जिसकी नकल—

॥ प्रश्न पत्रिका ॥

॥ श्री जिनाय नमः ॥

॥ दोहा ॥

घरण-कमल जिनराज का, जामें मुज मन लीन ।
मधुकर जिहां गुञ्जत रहै, ज्ञानासृत रस पीन ॥ १ ॥

नाभेयादिक जिनेश्वरा, तीर्थङ्कर चौबीस ।
गणधर पाठक साधु पद, ध्यावत विश्वावीस ॥ २ ॥

जिनवर भोषित शुद्ध नय, आगम उद्धि अपार ।
भ्रमत द्रव्य कलि काल में, जिन प्रतिमा आधार ॥ ३ ॥

स्वर्ग निवासी देवगण, बलि पाताल कुमार ।
साश्रुत जिन प्रतिमा भक्षी, नित प्रति करत जुहार ॥ ४ ॥

एहवी प्रतिमा जिन तथी, प्रथमी तेहना पाय ।
प्रव लिखूं अति प्रेम सुं, मुनिवर ना गुण गाय ॥ ५ ॥

क्रोध लोभ मद मोह सबे, त्यागी विषय-विकार ।
जीतमल महाराज कूं, नमत सकल नर नार ॥ ६ ॥

दोष बंयालीस टालते, लेते शुद्ध आहार ।
भविजन कुं प्रतिबोधता, विचरै धरा सकार ॥ ७ ॥

॥ सोरठा ॥

तीन करण धिर धार, जीते बावीस परिषद ।
जपते दिल नवकार, शुद्ध करि सङ्गम निरंवहै ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

सतावीस गुण्ये करी, पालो निज आचार ।
पञ्च महाव्रत पालता, एहवा तुम अणगार ॥ ९ ॥
निरजित मद् उनमाद पणो, वर्जित विषय विकार ।
तर्जित कर्मादिक अशुभ, गर्जित नाण उदार ॥ १० ॥
शहर लाडनूं अति भलो, विचरो तिहां धर नेह ।
अप्रति बन्ध विहार करी, बैठा सम्बर गेह ॥ ११ ॥
तुम गुण गण मकरन्द से, भविजन भमर लोभाय ।
देश विदेशे मानवी, कर जोड़ी गुण गाय ॥ १२ ॥
मैं पिण्ड गुण्य अवणे मुण्डी, भेटण की मन चाय ।
ते दिन सफल गीणिस हूँ, वन्दौ तुमरा पाय ॥ १३ ॥
कर्म ईंधन कूं जालवा, प्रत्यक्ष अग्नि समान ।
इन्द्रिय पांचु वश करी, एहवा तपकी खान ॥ १४ ॥
गुण सगला तुम अह में, दीखत है प्रत्यक्ष ।
आगम अर्थ विचार की, किम ताणो इक पक्ष ॥ १५ ॥

पक्ष पक्ष काइ मत करो, ज्ञान दृष्टि मनलाय ।
 जिनवर प्रतिमा देखता, दुःख दोहग टल जाय ॥१६॥
 चार निक्षेपा जिन कक्षा, भाव स्थापना नाम ।
 सप्त नय करी देखल्यो, वरणन ठामों ठाम ॥१७॥
 अम्बड श्रेणिक राय तिम, रावण प्रमुख अनेक ।
 विवध परै भक्ति करी, पाभ्या धर्म विवेक ॥१८॥
 पञ्चम अंगे भाषियो, प्रगट पणै अधिकार ।
 सूर्याभे जिन बन्दिआ, राय प्रश्रेणी मजार ॥१९॥
 विजय देवताये करी, जिन पूजा जिनराज ।
 पक्षपात कूं छोड़के, सारी आतम काज ॥२०॥
 छठे ज्ञाता अङ्ग में, द्रौपदी पाण्डव नार ।
 मन वच काया वश करी, पूज्या जिन इकतार ॥२१॥
 जङ्ग विद्या चारणा, मुनिवर गुणकी खान ।
 ते पिण प्रतिमा वन्दता, पञ्चम अङ्ग बखान ॥२२॥
 जिन प्रतिमा जिन सारखी, भोखी-श्री महावीर ।
 कोई शङ्का मत आणज्यो, जीम पामो भव तीर ॥२३॥
 जिनवर मत स्याद्वाद है, मत जाणो करी एक ।
 दया दान मन धारल्यो, जद आवै विवेक ॥२४॥
 जीव दया पाल्यां यक्षां, निश्चै होय उपगार ।
 दया धर्म को मूल है, एहवो आगम सार ॥२५॥

घात करन्ता जीव की, छोडावे कीई जाय ।
 अभय दान तेहने कछो, आगम में जिनराय ॥२६॥
 ज्यो न छुडावो जीव कूं, तो अनुकम्पा नांय ।
 अनुकम्पा बिन जीव की, समकित पुष्टि न थाय ॥२७॥
 गोशाली जलतां थकां, जिनजों दिथी विचार ।
 सीतल लेश्याये करौ, तेजु लेश्या वार ॥२८॥
 ज्याने कहता चूकिया, ते तो मिट्था बात ।
 कल्पातीत स्वाभाव है, तीन लोक के नाथ ॥२९॥
 नेम कुंवर तोरण चढ्यां, देखी जीव विनाश ।
 अनुकम्पा मन लायके, छोडाई प्रभु पास ॥३०॥
 आप बड़े अणगार हो, पिण ये मोटी खोट ।
 ज्यो नवि जीव दया करो, वधै पाप शिर पोट ॥३१॥
 पञ्च अधिक चाखीस तो, कछ्वा सूत्र जिनराय ।
 दातिंस तुम मानता, कुण हेतु के न्याय ॥३२॥
 भाख्या नहिं सूत्र में, सह आगम के नाम ।
 ते बत्तीसां बीच है, देखो चित करी ठाम ॥३३॥
 सांचा बत्तीस मानता, और न मानो सांच ।
 कै कीई प्रगव्यो ज्ञान तुम्ह, अथवा मनकी खांच ॥३४॥
 सत्य परुपणा ज्यो करो, तो मानो महाराज ।
 गहन अर्थ आगम तथा, भाष्या श्री जिनराज ॥३५॥

मुखपती मुख बांधता, कौन सूत्र अनुसार ।
 मन की भ्रमता मिटो नहिं, ऐ २ विषम प्रकार ॥३६॥
 श्लेष्मा के संजोग सुं, उपजत जीव असंख्य ।
 जीव समूर्च्छिं इन्द्रियन, यामे नहिं को बंक ॥३७॥
 गणधर गौतम स्वाम कुं, मिया देवी कछो एम ।
 मुख बांधो वस्त्रे करी, गन्ध न आवै जेम ॥३८॥
 ज्यो पहलां बंधो हुन्ती, बलि बंधन किम होय ।
 एह व्यतिकर तुम जाणजो, सूत्र विपाकी जोय ॥३९॥
 जम्हा छिकां कारणै, मुख ठांके मुनिराय ।
 दशवैकालिक सूत्र में, देखो मन चितलाय ॥४०॥
 सूत्र सबे तुम देखल्यो, बंधण का नहिं पाठ ।
 भगवती ज्ञाता चादि में, साख सूत्र की चाठ ॥४१॥
 इत्यादिक सूत्रां तथा, मानो नहीं वचन ।
 आप मतै नहीं मानता, करल्यो लाख जतन ॥४२॥
 लिख्या अजसौगंज शहर सुं, पत्र अधिक उच्छरङ्ग ।
 खतम खामणा मानज्यो, करि तीन कारण द्रक संग ॥४३॥
 मुनि गुण अति मुज अल्प धी, कैसे लिखूं बणाय ।
 जैसे जल सब उदधि की, घट बिच नहिं समाय ॥४४॥
 कुशल खेम वरतै तिहां, धर्म थकी जयकार ।
 इच्छां पिण सुगुरु पयास थी, आणन्द हरष अपार ॥४५॥

भक्ति पत्र भावै लिख्यो, धरज्यो चित अधिकाय ।
 अधिको ओछो ज्यो हुवै, ते खमज्यो मुनिराय ॥४६॥
 लिखज्यो उत्तर एहनो, मत धरज्यो मन रीस ।
 मुज मति सारू में लिख्यो, धरज्यो मन मुजगौश ॥४७॥
 एहवि परुपणा ज्यो करी, तो होय लाभ अपार ।
 मुग्ध जीव संसार का, उतरै पैलै पार ॥४८॥
 देखी बूटे रायजी, तिम बलि आतमराम ।
 त्यागी मन भ्रम आपनो, साखा भविजन काम ॥४९॥
 थावो ज्यो तुम एहवा, आगम अर्थ विचार ।
 मारवाड ठूँटाड में, बहु जन पामै पार ॥५०॥
 सकल संघ श्रावक सह, बांचीज्यो धर प्रीत ।
 उत्तर पाछो अपावज्यो, ए पण्डित जन रीत ॥५१॥
 मुनिवर ना गुण गांवतां, होता चित आराम ।
 मन तन कपट तजी करी, वन्दत कालूराम ॥५२॥

॥ कलश ॥

इम करी रचना अति ही सुन्दर, बांचता मन उल्लसै ।
 देवाधि देवतिलोय स्वामी अन्तर जामी मन वसै ।
 संवत उगणीस साल तीतीस मास आश्विन सुद पखे ।
 मुनि विनयचन्द पसाय करी मे, गोपीचन्द इम उपदिशै ॥

पूर्वोक्त प्रश्न पत्रिका अजीमगञ्ज से लाडनूँ आई सो वहाँ के श्रावकों ने महाराज से मालूम करी तब स्वामी ने हित शिक्षावली प्रश्नोत्तर तत्त्वबोध बनाया जिसको श्रावकों ने कण्ठाग्र धार के लिखा कर अजीमगञ्ज बाबू कालूरामजी के पास भेजा था ।

यह प्रश्नोत्तर तत्त्वबोध सूत्रों के प्रमाणों सहित जिन प्रणीत बच्चों को यथा तथ्य बताने वाला और आत्मार्थी भव्यों को लाभदायक है इसको वांचने से निष्पक्षी हलु कर्मों जीव जिन मारग को सहज में अच्छी तरह जान कर यथाशक्ति व्रत पञ्चखाण अङ्गीकार करके अपनी आत्मा का कल्याण कर सकते हैं; जो राग द्वेष रहित धीतराग कथित मार्ग है जिस आत्मार्थी को पुद्गलीक सुखों से अरुचि है उन्हीं के लिये यह ग्रन्थ मानो अमृत समान मिष्ट है; इसमें से कितने दोहा आगे श्री० खेतसी जीवराम ने मुम्बई में एक पुस्तक में छपाय थे परन्तु सम्पूर्ण ग्रन्थ यह आजतक छपा नहीं अब शहर जयपुर में निम्न लिखित श्रावकों ने धाखा जिन्हों के नाम ।

गणेशीलालजी-सीधड़,

जोरावरमलजी बाँडिया,

गुलाबचन्द लूणियां,

सुजानमलजी खारैड,

चन्दनमलजी दूगड,

नाथूलालजी सरावगी,

उपरोक्त पाँचों श्रावकों के पास से पत्र लेकर मैंने संग्रह करके लिखा और सर्वसाधारण को लाभ पहुँचाने के निमित्त मेरी लघु बुद्धि प्रमाण शुद्ध करके छपाया है, यदि कोई अक्षर या लघु दीर्घादि मात्रा की गलती रही होय उसका मुझे चार-बार मिच्छामि दुकड है पण्डित और गुणी जनों से मेरी यही प्रार्थना है कि कोई अशुद्धि रही हो उस के लिये क्षमा चाहता हूँ ।

आप का हितेच्छु और गुणवानों का दास,

श्रा० जौहरी० गुलाबचन्द लूणियां, जयपुर ।

प्रश्नोत्तर तत्वबोध

॥ दोहा ॥

नमूं देव अरिहन्त नित, जिनाधिपति जिनराय ।
 द्वादश गुणों सहित जे, बन्दू' मन बच काय ॥ १ ॥
 नमूं सिद्ध गुण अष्ट युत, आचार्य मुनिराज ।
 गुण षटतीस संयुक्त जे, प्रणमूं भव दधि पाज ॥ २ ॥
 प्रणमूं फुन उवज्जाय प्रति. गुण पणवीस उदार ।
 नमूं सर्व साधु निमल, सप्तबीस गुण सार ॥ ३ ॥
 द्वादश अठ षटतीस फुन, बलि पणवीस प्रगट्ट ।
 सप्तबीस ये सर्व हौ, गुणवर इकशय अट्ट ॥ ४ ॥
 नवकरवाली नां जिकी, मिणियां जगत मभार ।
 एक एक जे गुण तणो, इक इक मिणियो सार ॥ ५ ॥
 इकसौ अठगुण सहित ए, परमेष्ठौ पद् पंच ।
 ते तो भाव निक्षेप ह्यै, हूं प्रणमूं तज खच ॥ ६ ॥
 ए सद्धु नें प्रणमौ करौ, सखर समय रस सार ।
 तत्व बोध अबिरोध तर, आखूं अधिक उदार ॥ ७ ॥

॥ इति मङ्गलाचरणम् ॥

॥ अथ पहलो विजयसूर्याभाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै जे विजय सुर, बलि सुर्याभ विचार ।
 प्रतिमा नौ पूजा करौ, हिव तसु उत्तर सार ॥ १ ॥
 प्रतिमा पूजौ विजय सुर, जीब अनन्तौ वार ।
 विजय पथै सहु जपना, पाग्या नहिं भव पार ॥ २ ॥
 शक्र सामानिक संगमो, देवलोक स्थित हित ।
 पूजे जिन प्रतिमादि ते, राज वैसतां तेह ॥ ३ ॥
 तिमहिज सुर्याभादि सुर, राज वैसतां तेह ।
 प्रतिमा पूतलियांदि प्रति, बहु वाना पूजेह ॥ ४ ॥
 सुर्याभे सुरलोक नौ, स्थिति ना बश थौ जान ।
 पूजा जिन प्रतिमा तनौ, कौधी कही पिछान ॥ ५ ॥
 कृत ओघ निर्दुक्ति नौ, तेह विषे ए स्यात ।
 आचार्य गन्धहस्त कृत, है तिहां बहु अवदात ॥ ६ ॥
 मित्थ्यातौ वा समकितौ विमान अधिपति देव ।
 देवलोक नौ स्थित चुन्तौ, प्रतिमादि पूजेव ॥ ७ ॥
 समदृष्टि पूजे तिमज, मित्थ्यातौ पूजंत ।
 देवलोक नौ स्थित दशात्, पिष-धर्मकार्ये नहौ दुन्द ॥ ८ ॥
 सुर्याभे, जिन बन्दिया, प्रमु षट्कच आख्यात ।
 यह पुराण आचार तुझ, जीत आचार मुजात ॥ ९ ॥

वह तुम्हारो कार्य है, बलि तुम्ह करवा योग ।
 ए तुम्हने आचरण है, है मुम्ह आष आरोग ॥१०॥
 नाटक नौ पूछा करौ, तिहां आदर न दियो स्वाम ।
 मन में भलो न जाखियो, प्रगट पाठ में ताम ॥११॥
 बलि मौन राखी प्रभू, देखो पाठ प्रसिद्ध ।
 जे भाव निखेपै आगले, नाटक आष न दीध ॥१२॥
 बलि मन मे भलो न जाखियो, ए मिथ पाठ मभार ।
 आज्ञा विन नहीं धर्मपुण्य, देखो आंख उघार ॥१३॥
 तो ताम स्थापन आगले, आज्ञा किम दे वीर ।
 एह न्याय है पाधरो, धारो धर चित धीर ॥१४॥

॥ इति ॥

॥ अथ दूजो द्रौपदी अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै समकित कृतां, द्रुपद-सुता अवलोक्य ।
 प्रतिमा नौ पूजा करौ, तसु उत्तर हिव जोय ॥ १ ॥
 वृत्ति ओव निर्युक्ति नौ, गंधहस्य कृत मांय ।
 जे इक्क पुत्र थयां पछै, द्रौपदी समकित पाय ॥ २ ॥
 पूर्व कृत निदान करौ, प्रेरो कृती सु आय ।
 पांच पाण्डव त्यां द्रौपदी, कछो मुञ्जाता मांय ॥ ३ ॥

तीव्र भोग अभिलाष तसु, निदान विन पूरिह ।
 समकित किम पामै तिका, देखो वर चित देह ॥ ४ ॥
 दशाश्रुतस्कन्ध सूत्र में, कीदक जेह निदान ।
 पूखां समकित नवि लहै, दुर्लभ बोधी कछ्छा जान ॥ ५ ॥
 निदान दोय प्रकार है, न्याय थकी अवलोक्य ।
 द्रव्य प्रते धुर भेद है, भव प्रत्येय फुन जोय ॥ ६ ॥
 निदान द्रव्य प्रत्येय तथा, दोय भेद पहिछाण ।
 प्रथम भेद जे मंदरस, द्वितीय तीव्र रस जाण ॥ ७ ॥
 द्रव्य प्रत्येय मंदरस तणो, पूखां थकां जु तेह ।
 समकित चारित बिहुं लहै, द्रौपदी नौ परै एह ॥ ८ ॥
 द्रव्य प्रते तीव्र रस तणो, समकित चर्ण न पाय ।
 दशाश्रुतस्कन्ध विषेज वै, दुर्लभ बोधिया थाय ॥ ९ ॥
 भव प्रत्येय ना भेद वै, धुर मन्दरस नूँ होय ।
 द्वितीय तीव्र रस नूँ बली, न्याय विचारी जोय ॥ १० ॥
 भव प्रत्येय मंदरस तणो, समकित प्रति पामेह ।
 पिण चारित पामै नहौं, बासुदेव जिम एह ॥ ११ ॥
 भव प्रत्येय तीव्र रस तणो, समकित नहौं पामंत ।
 बलि चारित पामै नहौं, ब्रह्मदत्त जिम हुन्त ॥ १२ ॥
 द्रव्य प्रत्येय नै भव प्रत्येय, मन्द तीव्र रस ख्यात ।
 तेह न्याय थी संभवै, बलि जाणै जगनाथ ॥ १३ ॥

ते माट ये द्रौपदी, निदान विन पूरेह ।
 प्रतोमा पूजो तिण समै, समकित किम पामेह ॥१४॥
 ज्ञाता वृत्ति विषै कञ्चूं, एक वाचना मांहि ।
 द्रौपदी जिन प्रतिमा तणौ, अरचा कौधी ताहि ॥१५॥
 दौसै एतोहिज इम कञ्चो, तेह वृत्तिरै मांहि ।
 नमुंत्थुणं नुं पाठ त्यां, आख्यो दौसै नांहि ॥१६॥

॥ चार्त्तिका ॥

कोई कहै द्रौपदी समकित धारणी प्रतिमा क्यूं पूजी ॥तेह नुं उत्तर॥
 ओघ निर्युक्ति ग्रन्थ नें अभिप्राय द्रौपदी प्रतिमा पूजी तिण वेल्यां सम्यक
 धारणी नहीं ते देखाडै छै, “द्वन्द्वं मि जिणहरा” इति व्याख्या ॥ ओघ
 नियुक्त रन्याख्येयं ॥ द्रव्यलिङ्गी परिग्रहितानि चैत्यानि किं सम्यग्दृष्टिर्न
 संभावितानि इति कस्मात् द्रव्यलिङ्गी मिथ्यादृष्टित्वात् ॥ यद्येवं तर्हि
 दिग्भ्यर संबंधीनि चैत्यानि किं सम्यक्दृष्टी न संभावितानि एतत्सत्यं
 यद्ये तत्सत्यं तर्हि स्वर्गलोकेषु सास्वतानि चैत्यानि सूर्या भाधादेवाः
 सम्यक्दृष्टयः प्रपूज्यंते तच्चैत्यानि संगमवत् अमन्यः देवाः मदीय मिति
 बहुमानात् प्रपूज्यंति पूवी परं विरुद्धं न स्यात् चतुसूर्या भाधादेवाः
 तत्कल्पस्थिति वसानुरोधात् अतः एव विरुद्धं न संभवति यद्येवं तर्हि
 द्रौपद्या सम्यक धारण्यायानि चैत्यानि नमस्कृताह्नि किं द्रव्यलिङ्गी परि
 ग्रहीतानि न भवंतीत्याह द्रौपदी न सम्यक्त्व धारणी स्यात् ॥ ओघ
 निर्युक्त्या इत्युक्तं ॥ इत्थी जण संघट्टं तिविहं तिवों ॥ वज्ज प साहु
 इति वचनात् ॥ स्त्री जनस्पर्शो त्रिविधः त्रिविधेन साधुनां वर्जनीयः
 साधोश्च अकल्पनीयः कर्माचारतः सम्यक्भावात् द्रौपदी भागमेषु श्रूयते
 ॥ लोमहृत्त्येय परामुसई ॥ लोमहृस्ते न परामृशति परामार्जयतीत्यर्थः तत्
 परमार्जने न जिनस्पर्शो जातः जिनस्य स्त्री जनस्पर्शो न आशातनास्थात्

अशातनात्सम्यक्तमाव अतः एव द्रौपदी न सम्यक्त्व धारणी संभाव्यते
पुनः ओघ निर्युक्ति चिरंतन टीकार्यां गंग्रहस्त्याचार्येण उक्तं द्रौपद्या नृप
पुत्रिका निदान कृति मर्त्तार पंचस्यछेता निदान भोजितवान जातैक पुत्रः
पुनः पाश्चात्साधू सकाशमाप्य प्रवरं सम्यक्त्व मार्गो घरते ॥ इति ॥

॥ एहनं अर्थ बार्त्तिका करो कहै छै ॥

इहाँ कह्यो द्रव्य लिङ्गी परिगृहीत चैत्यप्रति प्रतिमा ते स्युं सम्यक्
दृष्टि संभावित नहीं ते किण कारण थकी इसो कोई प्रश्न पूछै तेहनं
उत्तर द्रव्य लिङ्गी मिथ्या दृष्टि छै ते कारण थकी जो इम छै तो दिग्म्बर
सम्बन्धी चैत्य प्रतिमा स्युं सम्यक् दृष्टि संभावित नहीं ए सत्य जो ए
सत्य तो स्वर्गलोक ने विषे शाश्वता चैत्य सूर्याभादि देवता समदृष्टि
पूजै ते माटै ये पूर्वा पर विरुद्ध नहीं हुवै कोई पहवी तर्क कीधै छतै
हिव एहनं उत्तर कहै छै, सूर्याभादि देव स्वर्गलोक ने विषे सास्वता चैत्य
पूजै ते कल्प देवलोक नी स्थित वश अनुरोध थकी इण कारण थकीज
विरुद्ध नहीं हुवै जो इम छै तो द्रौपदी समकित धारी चैत्य ने नमस्कार
कियो ते स्युं द्रव्यलिङ्गी परिगृहीत न हुई कोई पहवी तर्क कीधै छतै हिवै
एहनं उत्तर कहै छै । द्रौपदी समकित धारणी न हुई इम कहै छतै बलि
पूछयो द्रौपदी समकित धारणी किम नहीं, तेहनं उत्तर । ओघ निर्युक्ति ने
विषे इम कह्यो स्त्रीजन ने स्पर्श साधू ने त्रिविध २ बरजवो साधू ने
अकल्पनीय कर्म आचरवा थकी समकित नुं अभाव हुवै ते कारण थकी
साधू ने स्त्री जन नुं स्पर्श त्रिविध २ बरजधूं द्रौपदी आगम ने विषे
सामंलीये छै “लोमहस्त्यं परामृसई” लोमहस्त करिके फरसै पूजै इत्यर्थ,
ते पूजवै करी जिन नुं स्पर्श हुवै जिन ने स्त्री जन स्पर्शवै करी अशातना
हुवै आशातना करिवे करी समकित नुं अभाव इण कारण थकी द्रौपदी
समकित धारणी न संभाविये, बलि ओघ निर्युक्ति नी चिरंतन टीका ने
विषे गन्धहस्त आचार्ये कह्यो द्रौपदी नृप पुत्री निहाणारी. करण हारी

तिणे भर्तार पंच ने वरी निहाणो भोगवी एक पुत्र थर्यां पळे साधू
समीपें समकित पामों पहरवो ओघ निर्युक्ति नी टीका नै विषे गन्धहस्त
आचार्य कहो ते भित्थ्यात्न ना वश थकी पुण्यादिक करी प्रतिमा
पूजी ।

॥ अथ तीसरा निक्षेपा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै बाबौस जिन, तसु मुनि प्रतिक्रमणेश ।
किस्थुं करै चौबोस्थो, द्वितीय आवश्यक जेह ॥ १ ॥
तसु कहिये महाविदेह ना, मुनि प्रतिक्रमण विषेह ।
द्वितीय आवश्यक स्थुं करै, न्याय विचारौ खेह ॥ २ ॥
नहीं तिहां अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी पिण नांहि ।
ते माटे नहिं घट भरा, सम अद्वा कहिवाहि ॥ ३ ॥
तिहां अनन्ता शिव गया, जासे मुक्ति अनन्त ।
मेल नहीं चौबौस नुं, देखोजी बुद्धिवन्त ॥ ४ ॥
इक इक विजय विषे बलो, एक एक जिनराज ।
वर्तमान काले हुवे, उत्लाष्ट पणै समाज ॥ ५ ॥
हिव ते घेव विदेह ना, जिन थया सिद्ध अनन्त ।
तसु बांदां चौबौस नौ, संख्या नथौ रहन्त ॥ ६ ॥
थासे सिद्ध अनन्त जिन, तसु बंदे जे क्षीय ।
तोपिण जिन चौबौस नी, संख्या न रहै क्षीय ॥ ७ ॥

विजय विषै जो वर्त्तता, बंदै इक जिनराय ।
 तो पिण जे चौबीसत्थो, किण विध कहिये ताय ॥ ८ ॥
 विदेह क्षेत्र ना मुनि करै, द्वितीय आवश्यक जेह ।
 बिचला जिन बावौस ना, मुनि पिण तिमहिज करेह । ९ ॥
 बे टंक नूं तसु नियम नहौ, पिण ज्यो किणहिकवार ।
 पडिक्कमणा मे स्युं करै द्वितीय आवश्यक सार ॥ १० ॥
 ज्ञाता अध्ययने पञ्चमै, शैलक ऋषि ना पाय ।
 पथक पडिक्कमणो करत, बांदा आख्या ताहि ॥ ११ ॥
 ते माटे जे जिन हुवै, तेह तणो खे नाम ।
 द्वितीय आवश्यक नूं तदा, नाम उक्खिता ताम ॥ १२ ॥
 जिन चौबीस तणों जिहां नियम नहौं छै ताम ।
 तिण सुं चौबीस्या तणों, स्थान उत्कौर्त्तन नाम ॥ १३ ॥
 अनुयोग द्वार विषै अमल, आवश्यक षट मांय ।
 अर्थ तथा अधिकार षट, आख्या श्री जिनराय ॥ १४ ॥
 द्वितीय आवश्यक नै विषै, उत्कौर्त्तन आख्यात ।
 कच्छं अर्थ अधिकार ये, जिन गुन नाम विख्यात १५ ॥
 विदेह क्षेत्र मे मुनि तणै, द्वितीय आवश्यक जान ।
 ख ख जिन गुन नाम ते, उत्कौर्त्तन अमिधान ॥ १६ ॥
 जेह विजय नहौं जिन तदा, द्वितीय आवश्यक मांहि ।
 पूर्व जिन गुन नाम ते, इसो सभवे ताहि ॥ १७ ॥

बिचला जिन बावीस ना, मुनि ने स्वजिन नाम ।
 उत्कीर्तन अभिधान तसु, द्वितीय आवश्यकताम ॥१८॥
 धुर जिन ना मुनि ले तिमज, स्वजिन गुन फुन नाम ।
 द्वितीय आवश्यक संभवै, उत्कीर्तन अभिराम ॥१९॥
 वा धुर जिनना मुनि तणे, चोवीस्यो ज्यो होय ।
 तो गत चौबीसी हुई, जाणे कीवली सोय ॥२०॥
 थया नही चोवीस जिन, तसु वारै अवलौय ।
 द्वितीय आवश्यक ने विषे, चोवीस्यो किम होय ॥२१॥
 चोवीसमा शासण धणी, तेह तणी अपेक्षाय ।
 आखुं छे चोवीस्यो, द्वितीय आवश्यक मांय ॥२२॥
 द्वितीय आवश्यक ना कछा, उभय नाम अवलौय ।
 उत्कीर्तन चोवीस्यो, तसु हेतु हिव जोय ॥२३॥
 पञ्चम अगे धुर कछुं, इन्द्रभूति सुप्रसिद्ध ।
 वृत्ति विषे कछो नाम ये, मात पिता नूं दीध ॥२४॥
 गोतम गौत्र करि तसु, गौतम नाम कहाय ।
 उत्तराध्ययन तेवीस में, गाथा छट्टी मांय ॥२५॥
 तिम जिनवर चोवीसमा, तसु वारै अवलौय ।
 गुणै नाम चोवीस जिन, ते चोवीस्यो होय ॥२६॥
 ते चोवीस्यो नै विषे, उत्कीर्तन अभिराम ।
 अर्थ तथा अधिकार छे, पिण मुख्य चोवीस्यो नाम ॥२७॥

विदेहचेत्रमें बौस जिन, तसु मुनि स्वजिन नाम ।
 अर्थ तणा अधिकार करि, ते उत्कूर्तन ताम ॥२८॥
 सूत्र उववाई ने विषै, तप ना द्वादश भेद ।
 तृतीय भेद भिच्चाचरौ, - वारु' नाम संवेद ॥२९॥
 समवायंग विषै कच्चा, बारै भेद अभिराम ।
 भिच्चाचरौ ने स्थान जे, वृत्ति संक्षेप सु नाम ॥३०॥
 भिच्चाचरौ ना नाम बे, द्वितीय आवश्यक तेम ।
 उत्कूर्तन चोवीस्थो, उभय नाम तसु एम ॥३१॥
 नवमा जिन ना नाम बे, सुविध अने पुफदन्त ।
 आरुया लौगस में प्रगट, देखोजौ बुद्धिवन्त ॥३२॥
 पुष्प सरिसा दन्त तसु, पष्प दन्त अभिराम ।
 इम अर्थ तणा अधिकार करि, उत्कूर्तन पिण नाम ॥३३॥
 कृष्ण अने बलभद्र नो, केशव राम आख्यात ।
 उत्तराध्ययन बावौसमें, तिम द्वितीय आवश्यक ख्याता ॥३४॥
 किहां च्यार महाव्रत कच्चा, तास कच्चा चिहुं याम ।
 उत्तराध्ययन तेवौसमें, केशौ मुनि गुण धाम ॥३५॥
 द्वितीय आवश्यक ना तिमज, उभय नाम अवलौय ।
 उत्कूर्तन चोवीस्थो, सहू भावे जिन जोय ॥३६॥
 चोवीसम जिन ना मुनि, करै चोवीस्थो ताम ।
 विदेह तेवौस तणा मुनि, उत्कूर्तन जिन नाम ॥३७॥

मुक्त ने-स्यासै एहवा; बाहू-न्याय-विचार ।
 बलि-केवलौ जे-बदे, तेहिज सत्य उदार ॥३८॥
 भाव-निक्षेपे भरत नौ, चौबीसी वर्तमान ।
 पाठ-वन्दे बहु ठाम-कै, जोगस-माहिं सुजान ॥३९॥
 भाव-निक्षेपे ऐरवत, चौबीसी वर्तमान ।
 पाठ-वन्दे बहु ठाम कै, समवायगे जान ॥४०॥
 चौबीसी भरत ऐरवत, अनागत जिन नाम ।
 द्रव्य निक्षेपो तूर्य अह, वंदे पाठ न ताम ॥४१॥
 अष्ट अने चालीस-ना, वर्तमान जिन नाम ।
 भाव निक्षेपो ते भणी, पाठ वंदे बहु ठाम ॥४२॥
 अष्ट अने चालीस-ना, अनागत-जिन नाम ।
 द्रव्य निक्षेपो ते भणी, वंदे टाल्यो स्वाम ॥४३॥
 द्रव्य निक्षेपे एह जिन, गणधर वंद्या नाहि ।
 तो चौबीस्यो करतां छतां, द्रव्यजिन किम वंदाहि ॥४४॥
 तीर्थंकर घर मे छतां, द्रव्य निक्षेपे जेह ।
 तेहने मुनि वंदै नहौ, तुम लेखे पिण तेह ॥४५॥
 तो होनहार जिनवर भणी, चौबीस्यो विषेह ।
 मुनिवर किम वंदे तसु, न्याय विचारौ स्तेह ॥४६॥
 बलि कछी अनुयोग द्वारमे, जे आवश्यक नू जाण ।
 होस्यै पिण न थयो हजौ, ते द्रव्य आवश्यक पिछाण ॥४७॥

तिमजे कोर्द्धे इक मुनि हुस्ये, पिण हिवडां ग्रहस्य पणेह ।
 कहिये द्रव्य साधू तसु, भावशकवत् एह ॥४८॥
 जो वन्दे द्रव्य निक्षेप ने, तो तिण द्रव्य मुनि रा पाय ।
 तुमे वन्दता क्यूं नथी, तुम अद्धारै न्याय ॥४९॥
 चौबीसी वर्तमान ने, वन्दे बहु ठामेय ।
 अनागत वांदा नथी, देखो तूर्य अंगेय ॥५०॥
 द्वतीय निक्षेपो द्रव्य तसु, गणधर वंद्यो नाहि ।
 तो द्वितीय निक्षेपो स्थापना, किम वंदीजे ताहि ॥५१॥
 द्रव्य तीर्थंकर कृष्ण या, दीधो नेम बताय ।
 नेम तथा साधु साधव्यां, त्यां क्यूं नहीं वंद्या पाय ॥५२॥
 उलटो कृष्ण मणी तिणां, दीधो मगां लगाय ।
 तो चौबीस्यो करतां छतां, किम वंदे मुनिराय ॥५३॥
 द्रव्य जिन श्रेणिक नृप हुंतो, दीधो वीर बताय ।
 वीर तथा साधु साधिव्यां, त्यां क्यूं नहीं वंद्या पाय ॥५४॥
 तीर्थंकर वन्दन तथां, तसु राण्यां रै चाय ।
 तो कृष्ण अने श्रेणिक तथा, त्यां क्यूं नहीं वंद्या पाय ॥५५॥
 उलटो करी विडम्बना, जाणी ने भरतार ।
 तो चौबीस्यो करतां छतां, किम वंदे अणगार ॥५६॥
 जिन वन्दे तिहुं काल ना, नमोत्थुणं रै अन्त ।
 किणी सूत्र में ते नहीं, देखोजी बुद्धिवन्त ॥५७॥

जे कोर्ब जीव अजीव नूं, नाम आवश्यक देह ।
 ते आवश्यक नो प्रभु, नाम निक्षेप कहैह ॥५८॥
 अनुयोगद्वार विषै ब्रसो, प्रगट पाठ पहिछाण ।
 तिमहिज तीर्थकार तणूं, नाम निक्षेपो जाण ॥५९॥
 जिम कोर्ब जीव अजीव नूं, ऋषभ नाम है जेह ।
 ऋषभ देव भगवान नो, नाम निक्षेपो तेह ॥६०॥
 जो वांदो नाम निक्षेपने, तो तिण ऋषभारा पाय ।
 क्यं नहिं वांदो छो तुम्हे, तुम्ह अज्ञा रै न्याय ॥६१॥
 किण रोनाम दियो बली, अरिहन्तने भगवान ।
 नाम अरिहन्त वन्दो तुम्हे, तो क्यं नहिं वन्दो जान ॥६२॥
 सिद्ध निरञ्जन नाम पिण, दीसै बहु जग मांहि ।
 नाम सिद्ध वन्दो तुम्हे, तो क्यं नहिं वन्दो पाहि ॥६३॥
 केरुक मनुषां रा कारटा, ते पिण बाजै आचार्य ताय ।
 वन्दो नाम आचार्य तुम्हे, तो क्यं नहिं वंदो पाय ॥६४॥
 केरुक ब्राह्मण लोक में, बाजै है उपाध्याय ।
 नाम उपाध्याय वंदो तुम्हे, तो क्यं नहिं वंदो पाय ॥६५॥
 जोगी सन्यासी प्रमुख, साधू नाम कहाय ।
 नाम साधु वांदो-तुम्हे, तो क्यं नहिं वन्दो पाय ॥६६॥
 ज्ञान दर्शन चारित्र ना, गुण नहीं है जे मांय ।
 तेह वंदवा योग किम, निमल विचारो न्याय ॥६७॥

कोई कहै आचार्य्य ना, उपाध्याय ना ताहि ।
 उपग्रण नी आशातना, कहि टालवी काहि ॥६८॥
 ज्ञान दर्शन चारित्तःतणा, तेह उपधिरै माहि ।
 केहवा गुण छै ते भणी, उपधि संघटवुं नाहि ॥६९॥
 नवमें दशवेकालिकै, द्वितीय उद्देशै ख्यात ।
 इम कहै उत्तर तेहनुं, सांभलजो अवदात ॥७०॥
 सूत्र विषै तो इम कछो, गुरु कायाइ करेह ।
 तिमहिज गुरु नां उपधि करि, संघटे थये छतेह ॥७१॥
 मुझ अपराध खमो तुम्हे, बलि न हूँ करुं कोय ।
 इम भाषै सुविनीत शिष्य, तास न्याय हिव जोय ॥७२॥
 आचार्य्य ना उपधि ए, तास प्रयोगे आय ।
 जिम गुरु कै सहबर्ती तनुं, तेम उपधि पिण ताय ॥७३॥
 भाव निचे पै गणपति, तास उपधि तनु जेम ।
 तासु संघट थयां खामवुं, आख्युं सूत्रे एम ॥७४॥
 थयुं बलि अपराध मुझ, खमूं तुम्हे अवलोय ।
 ए बच प्रत्यक्ष गुरु तथै, न्याय विचारी जोय ॥७५॥
 जो खमायवो हुवै उपधि ने, तो देखो चित देह ।
 वन्दना करो खमायवे, उपग्रण स्युं जाणेह ॥७६॥
 ये तो उपधि सहित जे, आचारज नौ जोय ।
 कही अशातना टालवी, नथी अन्यथा कोय ॥७७॥

सयनाशन गणपति तथा, तास संघट्टवुं नाहि ।
 तेहिज आचार्य विहार करि, गया ह्वै जो ताहि ॥७८॥
 सयनाशन तेहिज तब, शिष्य सेवै के नाहि ।
 भोगवियां आशातना, लागै के नहिं ताहि । ७९॥
 जे पृथिवी शिल ऊपरै, बैठा श्री भगवान ।
 कालान्तर गोयम सुधर्म, बैठे के नहीं जान ॥८०॥
 छाया गणी ना तनु तणी, शिष्य आक्रमौ तास ।
 चाले के चालै नहीं, जोवो हिये विमास ॥८१॥
 तुभ लिखे छाया भणी, आक्रमवुं पिण नाहि ।
 संघटो पिण करवुं नहीं, गुरु छाया नुं ताहि ॥८२॥
 ते माटे ए स्थापना, वन्दन योग न होय ।
 ज्ञान दर्शन चारित्र तथा, तिणमें गुण नहिं कोय ॥८३॥
 अथवा आचार्य तथा, पगल्यां तणी पिछाण ।
 तुम्हे करो छो स्थापना, तेहने वन्दो जाण ॥८४॥
 तो चाले गुरु केड शिष्य, गमन करन्ता जोय ।
 धरती ऊपर गुरु तथा, पगला मंडै सोय ॥८५॥
 शिष्य ना पग ते ऊपरै, पडियां दण्ड रयुं आय ।
 वन्दनीक पगला कहो, ते लिखै दण्ड माय ॥८६॥
 चारित सहित जे गुरु भणी, वंदै तीरथ च्यार ।
 काल कियां तमु कायने, भस्म करै तिह वार ॥८७॥

ज्ञान दर्शन चारित तथा, तिणमें गुण नहिं कोय ।
 तिणसुं दहन क्रिया कियां, अशातना नहिं होय ॥८८॥
 करी, स्थापना तेहने, वांछा कहो हो धर्म ।
 तो ए सागे तनु बालियां, लागै आशातना कर्म । ८९॥
 आवश्यक नो जाण थो, कान् कियो तिहवार ।
 द्रव्य आवश्यक तनु कछो, देखो अनुयोगदार ॥९०॥
 तिम मुनि काल कियां छतां, जीव रहित जे देह ।
 द्रव्य साधु कहिये तसु, न्याय विचारो लेह ॥९१॥
 वन्दनौक द्रव्य मुनि कहो, तो तुभ लेखै ताय ।
 द्रव्य साधु बाल्यां छतां, अशातना पिण थाय ॥९२॥
 जम्बूद्वीप पन्नतीमें कछो, जिन जनस्यां सुर राय ।
 जन्म भुवन जिनवर तथा, तसु प्रदक्षिणा दे आय ॥९३॥
 जिन ने वा जिन मात प्रति, प्रदक्षिणा तण वार ।
 देई कर जोड़ी करी, वंदै शक्र अवधार ॥९४॥
 हे धरणहारो रतन कूचिनी, थावो तुभ नमस्कार ।
 इह विध सुरपति ऊचरै, ए पिण जीत आचार ॥९५॥
 इण लेखै मरुदेवी प्रति, इन्द्र कियो नमस्कार ।
 पिण समकित किये पै लही, वारुं न्याय विचार ॥९६॥
 यहस्य प्रये जिन जनक ना, पद प्रणमै अवलोय ।
 लौकिक हेते जाणवुं, धर्म हेतु नहिं कोय ॥९७॥

ज्ञातां अध्ययन आठमें, मल्लिनाथ भगवान ।
 लागी पगां पिता तथै, लोक्कि कहते जान ॥६८॥
 मल्लिनाथ थया केवलौ, तठा पछै मा तात ।
 बाणौ सुणौ आवक थया, पाठ विषे अवदात ॥६९॥
 द्रव्य लेखै मल्लि नी पिता, पहिलां आवक नांहि ।
 तास पाय प्रणम्यां मंल्लौ, धर्म नहीं तिथ मांहि ॥१००॥
 तिम हिज द्रव्य जिनवर भणी, इन्द्र करे नमस्कार ।
 ए तसु जीत आचार छै, श्रीजिन आजा वार ॥१०१॥
 जीव रहित जिन देह ते, द्रव्य जिन तास कहैह ।
 ते बन्दनीक किण विध ह्वै, न्याय विचारी लेह ॥१०२॥
 जो बन्दनीक ते द्रव्य ह्वै, तो तुभ लेख कहैह ।
 तनु प्रते दग्ध कियां छतां, आशातन लागैह ॥१०३॥
 ज्यो द्रव्य निक्षेप वन्दो तुम्है, तो जमाली आदि ।
 द्रव्य माधु कहियो तसु, वन्दो क्युं न संवाद ॥१०४॥
 भावे जे साधु हुन्तो, सेव्यो तिण अणाचार ।
 भाव निक्षेपो तसु गयो, कै गयो द्रव्य जिवार ॥१०५॥
 मुनि वैसे सेव्यो तिण, अणाचार अवधार ।
 ते द्रव्य मुनि वन्दो कै नहि, धर्म हित धर प्यार ॥१०६॥
 कृष्णादिक नरकी पडा, द्रव्य जिनवर कहिवाहि ।
 भावे कहिये नेरिया, बन्दनीक ते नांहि ॥१०७॥

तीर्थंकर जनम्यां पछै, ते पिण्य द्रव्य जिनराय ।
 भाव निक्षेपै तेहने, ग्रहस्थी कहिये ताय ॥१०८॥
 तीर्थंकर दीक्षा लियां, तसु द्रव्य जिन कहिवाय ।
 भावे ते मोटा मुनी, वन्दनीक तसु पाय ॥१०९॥
 चौतीस अतिशय ओपता, बाणी गुण पैतीस ।
 केवल ज्ञान थयां पछै, भावे जिन जगदीश ॥११०॥
 वन्दनीक भावे मुनी, बलि भावे जिनराय ।
 ओलख ने जपियां थकां, पातक दूर पुलाय ॥१११॥
 ॥ इति निक्षेपाधिकार ॥

॥ अथ चतुर्थम् अम्बडाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै अम्बड कछुं, अरिहन्त बिन अवलोय ।
 बलि अरिहन्त ना चैत्य बिन, नथी वंदवा मोय ॥ १ ॥
 प्रथम उपाङ्ग विषै इसो, आख्यो श्री जिनराय ।
 ते अरिहन्त ना चैत्य कुण, तसु उत्तर कहिवाय ॥ २ ॥
 अरिहन्त तो धुरपद विषै, प्रतिमा चैत्य कहाय ।
 तो मुनिवर नहीं वन्दवा, अन्य वज्यां तिण न्याय ॥ ३ ॥
 मुनि पद तो है पञ्चमो, ते धुरपद में नहीं आय ।
 तिण कारण अरिहन्त ना, चैत्य मुनि कहिवाय ॥ ४ ॥

जिनप्रतिमा जिन सारसी, तुम्हें कहो तिण न्याय ।
 प्रतिमा- तो धुरपद हुई, मुनि धुरपद नहीं आय ॥ ५ ॥
 अरिहन्त तो ए देव हैं, अरिहन्त चैत्य सु सन्त ।
 तेह गुरु ए देव गुरु, बिना न अन्य बंदन्त ॥ ६ ॥
 ॥ इति अम्यदाधिकार ॥

॥ अथ पंचम् आनन्दाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै आनन्द कछो, अनतीर्थिक संगहीत ।
 अरिहन्त ना जी चैत्य प्रते, बन्दू नहीं प्रतीत ॥ १ ॥
 एह सातमा अइ में, दाख्यो गणधर देव ।
 ते अरिहन्त ना चैत्य कुण, उत्तर तामु कहैव ॥ २ ॥
 आनन्द कछुं अण तीर्थ ने, अणतीर्थिक ना देव ।
 अन्यतीर्थिक परियहीत जी, अरिहन्त चैत्य कहैव ॥ ३ ॥
 ए तीनूं ने बन्दना करवी कल्पै नाहि ।
 नमस्कार करिवूं नहीं, ए तीनूं ने ताहि ॥ ४ ॥
 पहिला बोलाव्यां बिना, बोखूं नहीं इक बार ।
 बार बार बोखूं नहीं, नहीं आपूं तसु आहार ॥ ५ ॥
 चैत्य इहां प्रतिमा हुवै, तो बोलावै कीम ।
 बलि आपै अशपादि किम, न्याय विचारो एम ॥ ६ ॥

कोई कहै तसु देव नै, किम बोलावै ताय ।
 बलि अथनादिक किम दिये, निमल सुशो तसु न्याय ॥७॥
 पुत्र सुजेष्टा नूं कछौ, महादेव तसु देव ।
 नवमें ठायै अर्थ में, ते वीर यकां स्वयमेव ॥ ८ ॥
 चेडा राजा नी सुता, तेह सुजेष्टा जाण ।
 तिण कारण तसु देव ते, विद्यमान पहिछाण ॥ ९ ॥
 तेहने बोलावे नहीं, बलि नहीं आपै आहार ।
 बलि चैत्य मुनि अरिहन्त ना, भ्रष्ट यथा तिणवार ॥ १० ॥
 ते अन्य तीर्थिक में जर्ब मित्या, अन्य तीर्थिक पिण तास ।
 ग्रहण किया निजमत विषे, अन्य तीर्थिक गृहित विमास ॥
 नहीं बोलावूं तेहने, बलि नहीं आपूं आहार ।
 अभिग्रह ए आनन्द लियो, बारूं न्याय विचार ॥ १२ ॥

॥ इति आनन्दाधिकार ॥

अथ षष्ठम् जंघा विद्याचारणाधिकार

॥ दोहा ॥

कोई कहै मुनि लखि धर, जङ्गा विद्याचार ।
 जावै रुचक मन्दीश्वरें, वन्दै चैत्य तिवार ॥ १ ॥
 बीसम शतके भगवती, नवम उद्देश विषेह ।
 प्रभू आख्या ते चैत्य कुण, उत्तर तास कहेह ॥ २ ॥

जङ्गल विद्या-धारणा रुचक नन्दौष्ठर जाय ।
 तिहां वन्दे पाठ है, पिण नमंसई नांइ ॥ ३ ॥
 मानुषोत्तर गिरि विषै, कूट चार आख्यात ।
 नथौ कच्छुं सिद्धायतन, तूर्य ठाण अवदात ॥ ४ ॥
 वृति विषै द्वादश कक्षा, तिहां देवता वास ।
 आख्या पिण सिद्धायतन, कूट कच्छो नहीं तास ॥ ५ ॥
 तिहां चैत्य वन्दे किसान, तिण सूं चैत्य सुज्ञान ।
 करै तास गुणग्राम अति, देखौ ने जे स्थान ॥ ६ ॥
 धन भगवन्त नो ज्ञान ए, धन भगवन्त रो ज्ञान ।
 जेम कच्छुं तिमहिज सह, ब्रह्म करै स्तुति जान ॥ ७ ॥
 नमंसई तिहा पाठ नहो, वन्दई पाठज एक ।
 तेहनूं है स्तुति अर्थ, देखो धर सु विवेक ॥ ८ ॥
 प्रश्न हजारों पूछिया, गीयम पञ्चम अङ्ग ।
 तिहां वन्दई नमंसई, है बिहुं पाठ सुचङ्ग ॥ ९ ॥
 ए तो है अति अजब गति, रुचक द्वीप लग जाय ।
 तिहां नमंसई पाठ नहीं, नमोत्थूणं पिण नांय ॥ १० ॥
 श्रावक तुङ्गिया ना प्रवर, आया स्थिवरां पास ।
 तिहां वन्दई नमंसई, उभय पाठ गुण रांस ॥ ११ ॥
 जो प्रतिमा वन्दन गया, तो करता नमस्कार ।
 नमोत्थूण गुणता बलि, देखो हृदय विचार ॥ १२ ॥

तथा चैत्य ते जिन बहू, तेह तणा गुण गाय ।
 धन्य प्रभू इम कहै तसु, सत्य वचन मुखदाय ॥१३॥
 कोई कहै प्रभूजौ भणी, चैत्य किहां आख्यात ।
 उत्तर तेहने आखिए, सुणज्यो सुगणः सुजात ॥१४॥
 सूर्याभे मन चिन्तव्युं, कल्याणकारौ स्वाम ।
 दूरितोपशमकारौ यकौ, मंगलौक अभिराम ॥१५॥
 तीन लोकना अधिपति, तिणसू देवत नाथ ।
 हेतु सुप्रसन्न मन तणा, तिण सुं चैत्य आख्यात ॥१६॥
 राय प्रशेणी वृत्तिमें, चैत्य अर्थ जिन ख्यात ।
 ते माटे इहां संभवे, बहु जिन गुण अवदात ॥१७॥
 बहु जिनेद्र वा जिन कहै, रुचक नन्दीश्वर मांय ।
 भाव कझा तिमहिज सह, देखि हिये हुलसाय ॥१८॥
 धन्य जिनेद्र धन्य कीवली, गिरि कूंटादिक जेह ।
 जेम कझा तिमहिज ए, इम तसु स्तुति करेह ॥१९॥
 ते माटे इहां चैत्य ते, बहु जिन कहिए सोय ।
 वन्दे तसु स्तुति करै, एह अर्थ पिण होय ॥२०॥
 बिन आलोयां ते मुनि, काल करै जो कोय ।
 तास विराधक प्रभु कझो, पाठ विषै अवलोय ॥२१॥
 जब को तर्क करै इसी, दिसां गौचरी जाय ।
 पाछा आवी पडिक्कमै, ईर्यावही मुनिराय ॥२२॥

तिम ए पिण भावी करी, ईर्यावही गुण्ये ।
 तामु उत्तर कहीजिये, सांभलज्यो चित्त देय ॥२३॥
 दिसां गौचरी मुनि जई, भावतां कियो काल ।
 तेह विराधक नहीं हुवै, जीवो नयण निहाल ॥२४॥
 जंघा विद्याचारणा, काल कियां अन्तराल ।
 तास विराधक प्रभु कछ्छा, नथी आराधक न्हाल ॥२५॥
 तिणसुं ईर्यावही तणूं, नथी मिले ए न्याय ।
 लब्धि फोड़वौ तेहनो, दंड कछ्छो जिनराय ॥२६॥

॥ वार्त्तिका ॥

कोई कहै जंघाविद्याचारण लब्धि फोड़ी ने नन्दीश्वर द्वीपे जाय ते आलोयां बिना मरे तो विराधक कह्यो ते आलोयणा ईर्यावही नी कही छै दिसां गौचरी जावै तेहनी पिण ईर्यावही गुणो तिम ए पिण लब्धि फोड़ने नन्दीश्वर द्वीप गया तेहनी पिण ईर्यावही जाणवी इम कहै तेहने कहिणो इम ईर्यावही गुण्यां बिना विराधक हुवै तो गौचरी पिण जाणो नहीं कदा ठिकाणे आर्यां बिना पढिळीं मरि जाय तो विराधक हुवै, बलि नाम बाहिर दिसां जाणो नहीं । बिहार करणो नहीं । पडिलेहणा करणो नहीं । क्षण भंगूर काया है सो ईर्यावही गुणियां बिना पढिळीं हो मर जाय तो विराधक होवणो पड़े ते माटे, साधू गौचरी गयो पाछो आधतां बीच में काल करै ईर्यावही पढिक्रमियां बिना जब तो ओ पिण विराधक हुवै, इम बिहार करतां विचै ईर्यावही पढिक्रम्यां बिना काल करै तो उपारी अद्वारे लेखै ओ पिण विराधक हुवै, इम तो पडिलेहणा कियां पछे अथवा विचै ईर्या

वही पडिक्कमियाँ बिना काल करै तो उणरै अद्दरै लेखै ओ पिण विराधक हुवै, धर्म कारणे जाता धर्म कारणे आवताँ ईर्यावही पडिक्कमियाँ बिना काल करै तो उणरै लेखै ओ पिण विराधक हुवै, जद तो तीर्थकर ने वाँदवा जाताँ आवताँ ईर्यावही पडिक्कमियाँ बिना काल करै तो उणरै लेखै ओ पिण विराधक, अरिहन्त गणधर आचार्य्य उपाध्याय महा मोटा पुरुषाँ ने बलि साधू साध्वियाँ ने वाँदण जाताँ ने आवताँ ईर्यावही पडिक्कमियाँ बिना काल करै तो उणरै लेखै ओ पिण विराधक, इम इत्यादिक अनेक कार्य्य कियाँ ईर्यावही पडिक्कमयी छै, जद ते पिण कार्य्य करताँ ईर्यावही पडिक्कमियाँ बिना काल करै तो उणरै लेखै ओ पिण विराधक, इम ईर्यावही पडिक्कमियाँ बिना विराधक हुवै छै तो साधू ने पहिलाँहीज ईर्यावही पडिक्कमवा वालो कार्य्य करणोहिज नहीं, तथा पडिलेहणा कियाँ पछे अथवा विचै ईर्यावही पडिक्कमियाँ बिना काल करै तो उणरै लेखै ओ पिण विराधक हुवै, इम विहार करताँ विचै ईर्यावही पडिक्कमियाँ बिना मरै तो उणरै लेखै ओ पिण विराधक हुवै, जो इम विराधक हुवै जद तो तीर्थकर ने वन्दवा जाताँ ने आवताँ विचै ईर्यावही पडिक्कमियाँ बिना काल करै तो उणरै लेखै ओ पिण विराधक हुवै, अरिहन्त गणधर आचार्य्य उपाध्याय महा मोटा पुरुषाँ ने बलि साधू साध्वियाँ ने वन्दवा जाताँ ने आवताँ विचै काल करै तो उणरै लेखै ओ पिण विराधक छै, इम ईर्यावही पडिक्कमियाँ बिना विराधक हुवै तो साधुनाँ पहिलाँहिज ईर्यावही पडिक्कमवारो कार्य्य करणोहीज नहीं, इण अद्दरै लेखै तो साधू ने हालवो चालवो इत्यादि क्युँडी कार्य्य करणो नहीं, अरिहन्त ने भगवन्त ने तीर्थकर ने गणधर ने आचार्य्य ने उपाध्याय ने महा मोटा पुरुषाँ ने साधुनाँ ने साध्वियाँ ने किण ही ने वन्दवा जाणो नहीं कदा विचै ही काल करै तो विराधक पणो थाय छै आरुक्का रो भरोखो छै नहीं तिणसू, उणरै अद्दरै लेखै तो धर्म रो कार्य्य करण ने कठे ही जाणो नहीं जाताँ ने आवताँ ईर्यावही पडिक्कमियाँ बिना मरै

तो विराधक पणो थाय छै, इण अरुद्वारै लेखै तो शासन सर्व ऊठ जावै या तो महा विपरीत भद्धा छै, अरिहन्त भगवन्त तो यूं कह्यो छै साधू चारित्रयाने कर्मयोगे अनेक भारी कार्य्य कीधा छै मोटा मोटा दोष सेव्या छै पछै गुरु कने अनेक कौसां लगे आलोषण चाल्यो छै कदा गुरु पासै नहीं पूगो बिचै ही आलोयां बिना काल करै तो तिण ने भगवन्त आराधक कह्यो छै, जंघा चारण ने विद्या चारण नी ईर्यावही पडिक्कम-बारी सरधा नहीं थी काई ? ये विराधक किसे लेखै हुवै तो ऐसा ये काई भोला छा अने बलि यारै ईर्यावही पडिक्कमवा री सरधा न हुवै तो गौचरो दिसां बिहार प्रमुख नी गुरु कने आह्ना मांगै तो आह्ना पिण देणी नहीं बिच में मरि जाय तो विराधक हुवै, बलि नन्दी उतरवा री पिण आह्ना मांगै तो आह्ना देणी नहीं बिचै मरि जाय तो विराधक हुवै ते वारै नीकलियां पहिलां ही ईर्यावही तो न गुणी इम जो विराधक हुवै तो नन्दी उतरतां मोक्ष किम जाय, सागारी संथारो पचखी नावामें बैसे पइहुं आचाराङ्ग अध्येयने तीसरे कह्यो छै, जो ईर्यावही गुणियां बिना विराधक हुवै नावा में सागारी संथारो पचखी किम बैसे, बलि नन्दी उतरवा री सार्थां ने भगवान आह्ना दीधी अने गौचरो प्रमुख नी पिण आह्ना दीधी छै तिण सूं नन्दी नावा उतरतां गौचरो प्रमुख पूर्वे कार्य्य कहा ते कर्ता मरै तो अथवा गौचरो प्रमुख कार्य्य करी ठिकाणै आयौ ईर्यावही गुण्यां पहिलां मरै तो आराधक पिण विराधक नही ।

॥ दोहा ॥

धर्म हेतु हिंसा कियां, तुम्है दोष कहो नांहि ।
 पुष्पादिक चारभ में, धर्म कहो छो ताहि ॥२७॥
 तो यात्रा करवा भणौ, लब्धि फोड़वौ जेह ।
 धर्म हेतु ए कार्य नो, किम प्रभू दण्ड कइह ॥२८॥

२६] * धर्मार्थ हिंसा न गिरौ तेहना उत्तर नुं अधिकार *

यात्रा अर्थे लब्धि जे फोड़वियां दराड पाय ।
तो पुण्यादिक कार्य में, धर्म पुण्य किम थाय ॥२६॥
॥-रति ॥

॥ अथ सातमो धर्मार्थ हिंसा न गिरौ
तेहना उत्तर नुं अधिकार ॥
॥ दोहा ॥

कोई कहै धर्म कारणे, जीव ह्यै जो कोय ।
पाप न लागे तेहने, ह्यै तसु उत्तर जोय ॥ १ ॥
देवल प्रतिमा कारणे, ह्यै जु पृथिवी काय ।
मन्द बुद्धि तेहने कछा, दशमा अङ्ग रै मांय ॥ २ ॥
अर्थ धर्म जे हेतै ह्यै, मन्द बुद्धि कछा तास ।
ए पिण दशमा अङ्ग मे, प्रथम अध्ययन विमास ॥ ३ ॥
जन्म मर्ण मूकायवा, ह्यै जे पृथिवीकाय ।
कछा अहेत अबोध तसु, प्रथम अङ्ग रै मांय ॥ ४ ॥
धर्म हेतु जन्तु ह्यै, दोष इहां नहीं कोय ।
ए अनार्य नू वचन, आचारंगे जोय ॥ ५ ॥
जिनारला सावद्य सह, वचन मात्र पिण सोय ।
मुक्त जे आचरवा नहीं, प्ररूपवा नहीं कोय ॥ ६ ॥
महानिशीथ रै पंच मे, कमल प्रभाः इस स्यात ।
सावद्य पाप सहित में, धर्म पुण्य किम थात ॥ ७ ॥

ग्रन्थ सद्यः पट्टक कियो, जिनबल्लभ सुरेण ।
जिन प्रतिमा यात्रा भयी, किस्थं कच्चो है तेण ॥ ८ ॥
लोहना कांटा ऊपरै, मांस डल्लो प्रति ताहि ।
मूको पकड़े मौन ने, धीवर नर जग मांहि ॥ ९ ॥
तिम जिन विम्भ जिन नाम करि, मुग्ध लोक जे मौन ।
जिन यात्रादि उपाय करि, कुगुरु, ठगत मत हीन ॥ १० ॥

॥ काव्य ॥

अत्र जिन बल्लभ सुरि कृत संघ पट्टानी काव्य ।

भाकृष्टुं मुग्धमीनान् बडिशपिशितवन्दिथमादर्श्य जैनं । तन्नाम्ना
रम्यरूपान् पथर कमठान् स्वेषु सिद्धयै विधाप्य ॥ यात्रा स्नात्रोद्युपायै
नर्मसितक निशा जागराचै श्लक्षैश्च । भद्रालुर्नामजैने श्लक्षित इव शठै
वंच्यतेहाजनोऽयम् ॥२१॥

॥ दोहा ॥

भस्म यह करिकी बलि, दशम् अछेर करेह ।
मिस्थ्या मत कच्चुं संघपट्टे, जिन बल्लभ सुरेह ॥११॥
बुन्दु विम्भ प्रति बाल बिन, ग्रहिवूं कुण बंछेह ।
द्वतीय काव्य भक्तामरे, न्याय विचारी लेह ॥१२॥
तिमहिज जे जिन विम्भ प्रति, जिन जाणीने जेह ।
बाल अजाण बिना कबण, अङ्गीकृत करेह ॥१३॥
द्रव्य पूजा सावद्य है, कै निरवद्य आख्यात ।
उत्तर हिये विचारिये, छोडी ने पखपात ॥१४॥

निरवद्य छै तो मुनि करै, गृही सामायक मांय ।
 तै पिण द्रव्य पूजा करै, तुभ अज्ञा रै न्याय ॥१५॥
 जो सावद्य द्रव्य पूजा हुवै, तिण सूं मुनि न करह ।
 तो सावद्य मांहौ धर्म पुन्य, कीम कहीजे तेह ॥१६॥
 आरंभ जे छःकाय नूं, पचण पचावण जास ।
 निज वा पर अर्थे क्रिया, निन्दूं गरहूं तास ॥१७॥
 इम कछुं बन्देतू विषै, सप्तम गाथा जोय ।
 तो साहस्री वच्छल विषै, धर्म पुण्य किम होय ॥१८॥
 ॥ इति ॥

॥ अत्र बन्देतु नौं गाथा ॥ छकाय समारम्भे, पयण
 पचावण जे दोसा ॥ अत्तटा परट्टा ए, उभयट्टा चैव
 तं निन्दे ॥

॥ इति धर्मार्थे हिन्साधिकार ॥

॥ अथ आठमो सुर्याभाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै सुर्याभसुर, प्रतिमा पूजी ताम ।
 तिहां हित सुखम पाठ है, निसिस्ताए अनुगाम ॥ १ ॥
 तै निसिस्ता नूं अर्थ तो, मोक्ष अमर यद होय ।
 तै माटै शिव हेतु ए, तसु उत्तर हिव जोय ॥ २ ॥

राय प्रश्रीणी मे कङ्कः जे सुर्याभ सु देव ।
 उपजियो तत्र चिन्तव्यं, मन मांहि स्वयमेव ॥ ३ ॥
 स्युं मुक्त ने करिबो हिवै, पहिलां पछै ज काज ।
 स्युं मुक्त पहिलां श्रेय जे, श्रेय फुन पछै समाज ॥ ४ ॥
 स्युं मुक्त पहिलां ने पछै, हित सुखम निस्सेसाहि ।
 अनुगामी केडै हुइं, इम चिन्तव्यो मन मांहि ॥ ५ ॥
 सामानिक परिषद सुरे, जाणी ए अध्वसाय ।
 कर जोड़ी सुर्याभ प्रति, बोल्या एम बधाय ॥ ६ ॥
 जिन प्रतिमा दाढां प्रति, आप भयी अवलौय ।
 अन्य बहु वैमानिक सुरा, सुरी प्रति फुन जोय ॥ ७ ॥
 अरचण जोगज जाव फुन, सेवा जोगज जेह ।
 ते माटे पहिलां पछै, तुम ने करिवुं एह ॥ ८ ॥
 पहिलां पछैज ए श्रेय, पूर्व पच्छा पिण जोय ।
 हित सुखम निस्सेसाए हँ, अनुगामिक अवलौय ॥ ९ ॥
 इम सांभल सुर्याभसुर, हृष्ट तुष्ट सलहौज ।
 यावत विकस्यो हृदय फुन, जठ्यो सिक्त यकीज ॥ १० ॥
 पवर सभा उपपात थी, निकली द्रह विषेह ।
 आवी ने ते द्रह प्रति, तथा प्रदक्षिण देह ॥ ११ ॥
 द्रह मे जतर स्नान करै, जिहां सभा अभिषेक ।
 तिहां आवी सिंघासणे, बैठो पूर्व सम्पेख ॥ १२ ॥

सामानिक परिषध प्रमुख, सुर सुर्याभ प्रतेह ।
 अष्ट सहस्र ने चौसठ फुन जल भरिया कलशेह ॥१३॥
 इन्द्राविषेक करी कहै, सुरगण में जिम इन्द्र ।
 तारागण में चन्द्र जिम, असुर विषै चमरिन्द्र ॥१४॥
 नाग विषै भ्रणिन्द्र जिम भरत चक्रौ मनु मांहि ।
 बहु पत्थीपम लग तुम्हे, बहु सागरोपम ताहि ॥१५॥
 चार सहस्र सामानिका, यावत सोल हजार ।
 आतम रक्षक देवता, तेह तणो अवधार ॥१६॥
 अधिपति फुन स्वामी पणो, करतां थकांज सोय ।
 पालन्ता विचरो तुम्हे, इम कहै सुर अवलोय ॥१७॥
 अलंकार सभा तिहां, आवी करै अलंकार ।
 आवी व्यवसाए सभा, पुस्तक बांच तिवार ॥१८॥
 पकै आय सिद्धायतन, प्रतिमादिक पूजेह ।
 सूत्रे विस्तार छै बहु, इहां कछु संघेहेह ॥१९॥
 इम प्रतिमा दाटां पनग, पूतलियांदिक पेख ।
 बहु बाना पूजा तिणे, स्वर्ग स्थित थी देख ॥२०॥
 जपजियो सुर्याभ तब, चिन्तवियो मन जिय ।
 पूर्व पछे करिवुं किर्युं, मुभू पूर्व पछे स्युं श्रेय ॥२१॥
 जेह कार्य कौधे छते पूर्व पछे स्युं सोय ।
 हित मुख प्रमुख भणौ हुइ, इम चिन्तवियो सोय ॥२२॥

धर्म कार्य तो जाणतो, समदृष्टि थो जेह ।
 तेह तणूं स्युं चिन्तवे, किम तसु अमर वदेह ॥२३॥
 पिण राज बैसतां कृत्य जे करिवूं पूर्वं पछेह ।
 तेह कार्य संसार ना, मंगल हेतु कहैह ॥२४॥
 तेह रीत नवी जाणतो, नवो जपनो एह ।
 तिणस्युं चित्यो मुझ किंस्युं, करिवो पूर्वं पछेह ॥२५॥
 एह भाव सुर्याभि ना, सामानिक सुर धार ।
 बलि परिषधना देवता, जाण लिया तिण वार ॥२६॥
 ए जूना था ते भणी, राज बैसतां ताथ ।
 कारज करवो तेहनां, जाण हुन्ता अधिकाय ॥२७॥
 ते माटे मुर स्थिति हुन्ती, ते दोधी तिणे बताय ।
 जिन प्रतिमा दाढां भणी, कछो पूजवुं ताथ ॥२८॥
 स्वर्ग रीत जाणो कछुं, सुर सुर्याभि प्रतेह ।
 पूजाहित सुख प्रमुख पिण, प्रभु न कछा वच एह ॥२९॥
 पुठ्वी पच्छा पाठ त्यां, पहिलां पछै सुजोय ।
 हित सुख आदि कछो मुरे, पिण पेक्षा पाठ न कोय ॥३०॥
 पूर्वं पच्छा ते ब्रह्म भवे, द्रव्य मंगल कहिवाय ।
 विष्णोपशम अर्थे किया, राज बैसतां ताथ ॥३१॥
 श्रावक तुगिंया ना स्थविर, वन्दन जातां क्रीध ।
 सरिभाव द्रोवाक्षत दही, द्रव्य मंगलीक प्रसिद्ध ॥३२॥

उत्तराध्ययन बावीसमें, द्रव्य मंगल संवाद ।
 तोरण जातां नेम कृत, दधि अक्षत द्रोवादि ॥३३॥
 तिमहिज सुर्याभि करौ, संसारिक मंगलौक ।
 पूजा जिन प्रतिमादिनौ, स्वर्ग स्थिति तहतीक ॥३४॥
 प्रभू वन्दन अवसर कछुं, पेक्षा हित सुख आदि ।
 पेक्षा ते पर भव विषै, देखो तज अभमाधि ॥३५॥
 प्रतिमा त्यां पूव्वी पच्छा, फुन वन्दन जिन राय ।
 पेक्षा पाठ कछुं तिहां, राय प्रश्नौ मांय ॥३६॥
 पंचमा अंग दूकै शतक, प्रथम उद्देशक पेख ।
 खन्धक दीक्षा अवसरे, इह विध कछुं विशेष ॥३७॥
 धन काटै ग्रही लाय थौ, पच्छा पूरा ए ताय ।
 बंछित काल थको पछै, फुन पहिनां कहिवाय ॥३८॥
 ते ग्रही जाणै मुक्त हुसै ए धन हित सुख काज ।
 क्षम समरथ निस्सैसाय जे, फुन अनुगामिक साज ॥३९॥
 तिम जरा मरण रौ लाय थौ, स्वात्म काढ्यां ताय ।
 पर लोकी हित सुख भणौ, बलि मुक्त क्षम निस्सैसाय ॥४०॥
 मेघ कछुं धन लाय थौ, काढ्यां पूर्व मश्चात् ।
 हित सुखक्षम निस्सैसाय फुन, पिणपेक्षा पाठ न ख्यात ॥४१॥
 तिम जरा मरण रौ लाय थौ, स्वात्म काढ्यां सोय ।
 हुसै विच्छेद संसार नू, ज्ञाता प्रथम सुजाय ॥४२॥

प्रतिमा नी पूजा तिहां, लाय थकी धन बार ।
 काटे तिहां पच्छा प्रथम, ते इह भव में धार ॥४३॥
 जिन वन्दन पेक्षा कछुं, चारित ग्रह्यां परलीग ।
 ते परभव हित सुख प्रसुख, देखो दे उपयोग ॥४४॥
 कोई कहै प्रतिमा तणी, पूजा छै निरदोष ।
 हितसुख क्षम निस्सीसाए कछुं, निस्सीसाय ते मोख ॥४५॥
 तसु कहिये धन लाय थी, काटे तसु पिण सोय ।
 हित सुख क्षम निस्सीसाए कछुं, इहां मोक्ष स्थूं होय ।४६॥
 धन काटे जे लाय थी, इह भव पूर्व पश्चात ।
 दारिद्र थी मूंकायवी, ते मोक्ष दारिद्र नी ख्यात ॥४७॥
 तिम पूजा मंगलिक अरथ, इह भव पूर्व पश्चात ।
 विघ्न थकी मूंकायवी, ते मोक्ष विघ्न नी ख्यात ॥४८॥
 शतक पनरमें भगवती, आणंद थिवर प्रतेह ।
 गौशाली जे वषिक नूं, आख्युं दृष्टान्त देह ॥४९॥
 चौथो वल्लू फोडतां, इह पुरुष तिहवार ।
 फोडक हाला पुरुष नूं, हित सुख वंछणहार ॥५०॥
 पथ आनन्द कारण तणूं, वंछणहारो तेह ।
 अनुकम्पा कारक तिको, निश्चय यश वंछेह ॥५१॥
 निस्सीसाए नूं अर्थ जे, आख्यो वृत्ति बिषेह ।
 वंछे मोक्षज विपतनी, विपत मूंकायवूं जेह ॥५२॥

तिम प्रतिमा पूजे तिहां निस्सीसाय आख्यात ।
 विघ्न तणी ए मोक्ष है, विघ्न मूंकायवूं ख्यात ॥५३॥
 ए द्रव्य मंगल राज बैसतां, जे जग मांहि गिणेह ।
 विघ्न पड़े नहौं राजमें, दधौ अक्षत जिमि जेह ॥५४॥
 कोई कहै प्रतिमा तणी, पूजा थी कहिवाय ।
 अनुगामियाए कछुं, फल तसु कीड़े आय ॥५५॥
 तसु कहिये धन लाय थी, काठै तसु पिब सोय ।
 अणुगामियाए इसो, पाठ सरौसो जीय ॥५६॥
 जे धन काठे लाय थी, इह भव पूर्व पश्चात ।
 तसु फल धन काठण तणूं, जिहां जाय तिहां आत ॥५७॥
 विमान अधिपति अभव्य था, स्वर्ग तणी स्थिति मंत ।
 सह सुर्याभ तणी परै, प्रतिमांदिक पूजन्त ॥५८॥
 तिम पूजा प्रतिमा तणी, ए भव पूर्व पश्चात ।
 तसु फल द्रव्य मंगल तणूं, जिहां जाय तिहां आत ॥५९॥
 शुभ सूचक संसार में, दधौ अक्षत द्रोवादि ।
 तिम पिण ए सुरलोक में, शुभ सूचक संवाद ॥६०॥
 भाषा श्री जिनरायनी, गावे विवाह विषेह ।
 तिम पूजा प्रतिमा तणी, बलि शमोत्थूषं गुणेह ॥६१॥
 राज बैसतां कार्य्य जे, सह ससारिक हैत ।
 स्वर्ग स्थिति माटे किया, धर्म पुण्य नहौं तेथ ॥६२॥

कोई कहै पूजा कियां, ए भव विघ्न मिटेह ।
 पुण्य बंध किम नवि कहो, हिव तसु उत्तर लेह ॥६३॥
 चढ्यो सूर संगाम मे, कर बहु जन संहार ।
 आव्युं जीत फते करी, सुयश करै नर नार ॥६४॥
 सावद्य युद्ध तिणे करी, अशुभ कर्म बंधाय ।
 ते अशुभ कर्म करी, सुयश हुवे किम ताय ॥६५॥
 नाम कर्म नी प्रकृति, यशो कीर्ति पुन्य जेह ।
 ते तो पाळल भव बंधी, वर शुभ योग करेह ॥६६॥
 ते यशो कीर्ति पुण्य प्रकृति, युद्ध समय सुविचार ।
 उदय आवी तिण कारणे, सुयश करै नर नार ॥६७॥
 जन बहु जाणै युद्ध थी, सुजश यथा जग मांहि ।
 पण नहीं जाणै पूर्व बन्ध, पुण्य थकी जश पाय ॥६८॥
 तुङ्गिया ना श्रावक किया, विघ्न हरण रै काज ।
 दधी अचत द्रोवादि जे, इमहिज नेम समाज ॥६९॥
 दधी अचत द्रोवादि करी, अशुभ कर्म बंधाय ।
 विघ्न मिटे किम तेहथी, किम सुख सम्पति पाय ॥७०॥
 विघ्न मिटे अरि जन हटे, सुख सम्पति पामेह ।
 ते पुण्य प्रकृति पूर्व भवे, बंधी शुभ जोगेह ॥७१॥
 ते पुण्य प्रकृति कदा, मङ्गल कियां पळेह ।
 उदय आयां सुख सम्पजै, बलि बहु विघ्न मिटेह ॥७२॥

जन जाणै मङ्गल थकी, हित मुख प्रमुख जे पाय ।
 पण नहीं जाणै पूर्व बंध, पुण्य थकी ए थाय ॥७३॥
 पुत्रादिक परणायवे, आरा मोसर आदि ।
 सुयश हुवै ते पूर्व बन्ध, पुण्ये करौ सम्बाद ॥७४॥
 ब्रह्मा विष्णु महेश फुन, देवी पूजा आदि ।
 कौधां मुख सम्पति मिलै, ते पूर्व पुण्य प्रसाद ॥७५॥
 महा आरम्भ महा परिग्रही, करै पचेन्द्री घात ।
 मास भक्षण ए चिहुं थकी, नरकायु बन्धात ॥७६॥
 नरकी पंचेन्द्रिय पयो, पुण्य प्रकृति छै जेह ।
 ते तो छै पूर्व बन्धो, वर शुभ जोग करेह ॥७७॥
 पण महा आरम्भ आदि जे, चिहुं कारण करि जोय ।
 पंचेन्द्री प्रणू नहीं बंधै, न्याय हिये अबलोय ॥७८॥
 तिम प्रतिमा पूज्यां छतां, हित मुख प्रमुख न थाय ।
 पूर्व बंधे पुण्ये हुवै, हित मुख क्षम निस्सेसाय ॥७९॥
 वर सुर्याभ विमान नो, अधिपति देव किंवार ।
 मिथ्यादृष्टि पिण हुवै, भव्याभव्य विचार ॥८०॥
 जे सुर्याभि सांचवी, तेहिज रीत तिंवार ।
 राज बैसतां सांचवै, विमान अधिपति धार ॥८१॥
 प्रतिमादिक पूजे तिकौ, बलि नमोत्थूणं गुणेह ।
 तिण सूं ए स्थिति स्वर्ग नो, मंगलीक हेतेह ॥८२॥

बहु सागर सुर सुरौ तणूं, अधिपति पयो करेह ।
 ए पिण बच है देव नूं, देखी पाठ विषेहं ॥८३॥
 आयू जे सुर्याभ नूं, चार पल्योपम ख्यात ।
 बहु सागर लग किम रहै, पेखो तज पखपात ॥८४॥

॥ गीतक छन्द ॥

प्रतिमा तणौ पूजा तिहां सुर्याभ ने सुर आखियो ।
 पुव्वी अने पच्छा हियाए आदि पाठ सुभाखियो ॥ पुव्वी
 पच्छा ते ब्रह्म भवे संसार ना मंगलोक ही । तुहियादि
 ना जिम विघ्न हरवा । द्रोव सरसव तिम वही ॥ १ ॥
 सुर्याभ जिन वन्दन तणौ मन मांहि धारौ है तिहां ।
 पेच्चा हियाए पाठ आदज प्रगट अन्तर ए जिहां । पेच्चा
 तिको परभव विषे हित सुख प्रमुख पहिछाणवूं । पच्छा
 अने पेच्चा उभय नुं अर्थ दिख में आणिवूं ॥ २ ॥ खंधक
 कच्चो धन लाय थौ काटे तिको चिन्ते सही । पच्छा
 पूराए हिया सुहाए आदि पाठ सु प्रगट ही । तिम
 जरा मरणज लाय थौ निज आत्म प्रति काढ्यां थकै ।
 मुझ हुसे परलोके हियाए । प्रमुख पाठ कच्चा तिकै
 ॥३॥ प्रतिमा तणौ पूजा अने धन लाय थौ काटे वही ।
 पच्छा हियाए पाठ है पिण पेच्चा वा परभव नहीं ।
 सुर्याभ जिन वन्दन अने जे खन्वकी दीक्षा ग्रही । पेच्चा

तथा परभवे एहवुं पाठ पिण पच्छा नहीं ॥ ४ ॥ चम्पा
 तणा जन वृन्द जिन वन्दन सनय ए विध कहौ । प्रभु
 वन्दतां फल पेक्षा भव वा इह भव हित मुख प्रमुख
 ही । फुन तुङ्गिया ना श्रावकी पिण स्थविर वन्दन समय
 ही । फल वन्दना नूं इह भवे वा परभवे होसे सहौ ॥५॥
 शिवराज ऋषि फुन ऋषभ दत्ते कछूं प्रभू वन्दन तणूं ।
 फल इह भवे वा पर भवे हित सुख प्रमुख हुसे घणूं ।
 इम जिन मुनि प्रति वन्दवे फल पेक्षा वा परभव वही ।
 पिण पाठ पच्छा शब्द किहां ही सुत्र मे दाख्यो नहौ ॥
 ६ ॥

॥ इति सुर्यामाधिकार ॥

॥ अथ नवमूं चैइटी निज्फराटी शब्दार्थ अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै प्रतिमा तषी, व्यावच करवी सार ।

आखी दशमा अङ्ग में, तीजे संवर द्वार ॥ १ ॥

उत्तर तसु निसुणो हिवै, तिण ठायै इमबोय ।

आराधै ए तृतीय व्रत, ते क्रेहवुं मुनिराय ॥ २ ॥

उपधि भात पाणौ जिक्को, प्रतीत घर थौ आण ।
सग्रह करिवूं कुशल बलि, कुशल दान में जाण ॥ ३ ॥
ते कहने आपै तिक्को, अत्यन्त गाढोबाल ।
दुरबल ते बल रहित जे, बलि ग्लान मुनि न्हाल ॥ ४ ॥
वृद्ध तिक्को कहिये स्थिविर, खमग मास खमणादि ।
प्रवर्त्तावै जे योग्य तिम, प्रवर्त्तक ते सम्बाद ॥ ५ ॥
आचारज उवभाय फुन, नव शिष्य साधमीक ।
तपसौ कुल गण संघ ए, तसु व्यावच तहतौक ॥ ६ ॥
कुलते गच्छ समुदाय छै, चन्द्रादिक कहिवाय ।
गण ते कुल समुदाय छै, संघते गण समुदाय ॥ ७ ॥
इतलानौ व्यावच करै, चैत्य ज्ञान अर्थेह ।
निरजरानूं भरथौ छतो, कमे क्षयां थौ तेह ॥ ८ ॥
पूजा श्लाघा रहित चित्त, दश विध बहु विध जेह ।
करै व्यावच तृतीय बरत, आराधे मुनि तेह ॥ ९ ॥
अप्रतीतकारौ घर विषे, प्रवेश न करै जान ।
अप्रतीतकारौ घर तणूं, नही लिवै अन्न पाण ॥ १० ॥
इहां कछुं जे उपधि करि, बलि भक्त पाण करेह ।
अत्यन्त बाल प्रमुख तणौ, करै व्यावच तेह ॥ ११ ॥
कोई कहै प्रतिमा तणौ, व्यावच करवी ख्यात ।
तो प्रतिमा रे ये लिहूं, बस्तु काम न आत ॥ १२ ॥

प्रतिमा अन्न खाती नथी, पीती नथी ज पाण ।
 वस्त्र ओढती पिण नथी, नथी पहरती जाण ॥१३॥
 ते माटै इम सम्भवै, चैत्य ज्ञान अर्थेह ।
 निरजरा नूं अर्थी छतो, करै वियावच जेह ॥१४॥
 चैत्य ज्ञान अर्थे करै, एक अर्थ ए होय ।
 द्वितीय अर्थ कहिए हिवै, सांभलजो अवलोय ॥१५॥
 आराधे ए तृतीय व्रत, ते केहवुं मुनिराय ।
 इम शिष्य प्रश्न किये छतें, हिव गुरु भाषे वाय ॥१६॥
 उपधि भात पाणी जिको, प्रतीत घर धौ आण ।
 संग्रह करिवा में कुशल, कुशल दान में जाण ॥१७॥
 ते केहने आपै तिको, अत्यन्त गाढो बाल ।
 दुर्बल रोगी वृद्ध फुन, खमग प्रवर्त्तक न्हाल ॥१८॥
 आचारज उवडभाय शिष्य, साधमीक पिछाण ।
 तपसी कुल गण संघ ए, चैत्य तिको जिन जाण ॥१९॥
 पूर्व कछ्या ते सर्व नूं, अर्थ प्रयोजक जेह ।
 निरजरानूं अर्थीं छतो, करै वियावच तेह ॥२०॥
 पूजा श्लाघा रहित चित, दश विघ आचार्यादि ।
 बहु विघ भक्त पाणादि करि, करै अनेक प्रकार सम्बाद २१
 चित्त अहलादक ते भणौ, चैत्य कीवली जाण ।
 भात पाणी तसु आणि दे; बलि उपधादिक दे आण ॥२२॥

सूत्र भगवती में कच्छो सीहो मुनि मुजाण ।
 पाक बीजोग वीर प्रति, बहरी आप्या आण ॥२३॥
 अन्य केवली तेहने, उपधादिक दे आण ।
 आगाधै इम तृतीय ब्रत, महा मुनि गुण खान ॥२४॥
 राय प्रशैणी में कच्छा, वीर तथा चिहुं नाम ।
 कल्याणं मंगल बलि, देवत चैत्य सु ताम ॥२५॥
 मलियागिरि कृत वृत्ति में, अर्थ इसो आख्यात ।
 कल्याणकारी ते भणी कल्याणिक जगनाथ ॥२६॥
 दुरित विघ्नज तेहना, उपशमकारी स्वाम ।
 ते माटे जगनाथ ने, कच्छो मंगलं ताम ॥२७॥
 तीन लोकना अधिपति, तिणसूं देवत ख्यात ।
 हेतुं सुप्रसन्न मन तथा, तिणसूं चैत्य मुजात ॥२८॥
 चैत्य शब्दे नूं अर्थ इम, आख्यो छै तिण स्थान ।
 ते माटे ए चैत्य जिन, तास वैयावच जान ॥२९॥
 मुनि नाए पिण नाम चिहुं, आख्या छै बहु ठाम ।
 कल्याणकारी ते भणी, मुनि कल्याणिक नाम ॥३०॥
 दुरितोपशमकारी पणै, मंगल मुनि कहिवाय ।
 चार मंगल में देखल्यो, तीजो मंगल ताय ॥३१॥
 देवत कहतां देव ए, पञ्च देव मे ताहि ।
 धर्म देव मुनि ने कच्छा, सूत्र भगवती मांहि ॥३२॥

भव द्रव्य देव भवान्तरे, देव हुसि ते ताय ।
 चक्री ते नर देव ह्यै, धर्म देव मुनिराय ॥३३॥
 देवाधि देव तीर्थकरा, तिणसं दैवत वीर ।
 तीन लोक ना अधिपति, युग केवल गुण हीर ॥३४॥
 भाव देव चिहुं जाति ना, भवनपत्यादिक जेह ।
 बारम शतके भगवती, नवम उद्देश विषेह ॥३५॥
 ते माटे ए चैत्य जिन, तास बेयावच ताम ।
 निरजरा नूं अर्थी कृती, करै मुनि गुण घाम ॥३६॥
 कोई कहै ए चैत्य नूं, अर्थ इहां जिन होय ।
 तो केहड़ै ए किम कछुं, तसु उत्तर हिव जोय ॥३७॥
 चैत्य तुम्हे प्रतिमा कहौ, तो केहड़ै किम ख्यात ।
 तुम लेखै तो धुर कहौ, पछै अन्य मुनि आत ॥३८॥
 जिन प्रतिमा जिन सारणी, तुम्हे कहौ को सोय ।
 ते माटे ए आदि में, कहिवुं चैत्य सु जोय ॥३९॥
 इहां बाल अत्यन्त धुर, दुर्बल म्लान पञ्चात ।
 स्थिवर प्रवर्तक धुर कहौ, पछै आचारज ख्यात ॥४०॥
 आचार्य्य पद तो प्रथम, कहिवुं धुर पह्लाद ।
 ठाम ठाम व्यावच विषे, आचारज पद आदि ॥४१॥
 इहां प्रथम बालादि कहौ, पछै आचारज जोय ।
 तेहनूं कारण को नहीं, देखो दिल् अवलोय ॥४२॥

तिमहिज अंते चैत्य जिन, इहां आख्युं छै सोय ।
 तेहनं पिण कारख नहीं, हिये विचारौ जोय ॥४३॥
 मुनि सहचारौ पणा थकी, प्रथम कछ्वा अणगार ।
 पछे चैत्य ते जिन कछ्वा, तसु नहीं दोष लिगार ॥४४॥
 गिणुं अनूपूर्वि तुम्हे, पद तसु दूकशय बीस ।
 पच्छानुपूर्वि विषे, पहला मुनि जगीश ॥४५॥
 उवभाया आचार्य सिद्ध अरिहन्त अन्त कहिह ।
 अनानुपूर्वि विषे, आघा पाछा सेह ॥४६॥
 अनुयोगद्वारे आखियो, पूर्वानुपूर्वि जान ।
 पच्छानुपूर्वी बलि, अनानुपूर्वि आन ॥४७॥
 पूर्वानुपूर्वि तिहां, ऋषभ जाव बर्द्धमान ।
 महावीर यावत् ऋषभ, पच्छानुपूर्वि जान ॥४८॥
 आघा पाछा नाम से, अनानुपूर्वि तेह ।
 ए त्रिहुं अनूपूर्वि कही, देखोजी चित देह ॥४९॥
 सामाचारौ दश विध कही, अनुयोगद्वार विषेह ।
 दूच्छा मिच्छा धुर अखी, पूर्वानुपूर्वि एह ॥५०॥
 उत्तराध्ययन छब्बीसमें, आवस्सिया धुर जोय ।
 अनानुपूर्वि एह छै, तसु दोषण नहीं कोय ॥५१॥
 ज्ञान दर्शन चारिख तप, शिव भग ए चिहुं सार ।
 उत्तराध्ययन अट्टबीसमें, प्रथम ज्ञान सुविचार ॥५२॥

तिणहिज अध्ययन किया, रुचि दर्शन ज्ञान चरित्त ।
 इहां दर्शन धुर आखियो, तसु कारण न कथित ॥५३॥
 अभिणि बोधिक धुर कही, पछै कछो श्रुत ज्ञान ।
 भगवतो आदि विषै प्रभू, प्रगट पाठ पहिचान ॥५४॥
 उत्तराध्ययन अट्टवीसमें, कछो प्रथम श्रुत ज्ञान ।
 अभिणि बोध कछो पछै, तसु दोषण नहीं जान ॥५५॥
 पूर्वानुपूर्वि किहां, किहां द्वितीया अवलोय ।
 अनानुपूर्वि कही किहां, तसु दोषण नहिं कोय ॥५६॥
 पञ्च ज्ञान में देखलो, छेहड़ै केवल ज्ञान ।
 छेहड़ै दर्शन चार में, केवल दर्शन जान ॥५७॥
 चार ध्यान मांहि बलि, छेहड़ै शुक्त ध्यान ।
 छेहड़ै गुणठाणा मभौ, अजोगी गुणस्थान ॥५८॥
 छेहड़ै चिहुं विध देव में, वैमानिक सुर-ख्यात ।
 चारित्र में छेहड़ै कछुं, यथाक्षात जगनाथ ॥५९॥
 बलि षट नियंट्टा ने विषै, छेहड़ै स्नातक जान ।
 इत्यादिक बहु सूत्र में, भाष्या श्री भगवान ॥६०॥
 अनानुपूर्वि करी, इहां चैत्य जिन अन्त ।
 उपधि भात पाणौ करी, तसु व्यावच मुनि करन्त ॥६१॥
 आराधै इम तृतीय ब्रत, महा मोटा मुनिराय ।
 द्वितीय अर्थ ए आखियो, निमल विचारो न्याय ॥६२॥

चैत्य ज्ञान धर अर्थ कछुं, द्वितीय अर्थ जिन जोय ।
बलि केवल ज्ञानो वदे, तेहिज सत्य सुहोय ॥६३॥
॥ इति वैदही निष्कराही शब्दार्थ नूं अर्थ ॥

॥ अर्थ दशमूं चमर सुधर्मागत

अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै असुरेन्द्र जे, स्वर्ग सुधर्मे जाय ।
त्यां प्रतिमा नूं शरण कछुं, तसु उत्तर कहिवाय ॥ १ ॥
सूत्र भगवतौ तृतीय शत, द्वितीय उद्देशा मांय ।
चमर वीर नूं शरण ले, स्वर्ग सुधर्मे जाय ॥ २ ॥
जई सुधर्मे शक्त प्रति, बोल्यो विरुई बान ।
शक्त कोम कर मूंकियो, वज्र सु जाज्वलमान ॥ ३ ॥
पछे इन्द्र विचारियो, बिन नेश्राय सुयोय ।
आवै चमर सुधर्म ए, इसी शक्ति नहिं होय ॥ ४ ॥
परिहन्त परिहन्त चैत्य फुन, भावितात्म चणगार ।
आवै ए तिहुं शरण ले, चमर सुधर्मे धार ॥ ५ ॥
ते माटै महा दुःख ए, परिहन्त नौ अवलोय ।
भगवन्त ने चणगार नी, अति आशातन होय ॥ ६ ॥

इम चिन्तव अवधे करी, प्रभु कहै मुझ प्रति देख ।
 शीघ्र गमन कर संगहो बजू प्रते सुविशेष ॥ ७ ॥
 इहां तिहुं शरणा में प्रथम, अरिहन्त केवल धार ।
 अरिहन्त चैत्य छद्मस्थ जिन, चिहुं ज्ञानी सुविचार ॥ ८ ॥
 भावितात्म अणगार फुन, यह तिहुं शरणे मन्त ।
 इहां चैत्य ते ज्ञानवन्त, चिहुं ज्ञानी भगवन्त ॥ ९ ॥
 बलि मन शक्र विचारियो, अरिहन्त नी अवलोक्य ।
 भगवन्त ने अणगार नी, अति आशातन होय ॥ १० ॥
 चैत्य स्थान भग शब्द कह्यो, भग नुं अर्थ सुंज्ञान ।
 चिहुं ज्ञानी अरिहन्त ए, पिण प्रतिमा नहिं जान ॥ ११ ॥
 कोई शरण तो वण कहै, आशातन कहै दोय ।
 अरिहन्त ने प्रतिमा तणो, एक कहै छै सोय ॥ १२ ॥
 शरण विषै तो पाठ वण, आशातन में जोय ।
 दोय पाठ दाख्या हुंता, तो आशातन बे होय ॥ १३ ॥
 शरण विषै तो पाठ वण, आशातन में जोय ।
 तीन पाठ छै ते भषी, आशातना वण होय ॥ १४ ॥
 प्रत्यक्ष सूत्रे शरणा तिहुं, कही आशातना तीन ।
 अरिहन्त ने भगवन्त नी, बलि मुनि तणो कथीन ॥ १५ ॥
 तीन आशातन ने विषै, चैत्य शब्द नहीं ख्यात ।
 चैत्य ठिकाणो भग कहुं, देखो तज पखपात ॥ १६ ॥

अरिहन्त ने प्रतिमा तणो, मुनिनो शरण जु घाय ।
 तो छद्म जिन नुं शरण यच्चुं, ते किण शरणा मांय ॥१७॥
 अरिहन्त तो केवल धरा, तेह विषे सुविचार ।
 जिन छद्मस्थ तणो शरण, आवै किण विध सार ॥१८॥
 जिन प्रतिमा नुं शरण कहै, तिण में पिण नहौं आय ।
 तृतीय शरण जिन बिन मुनि, किम तिण विषे कहाय ॥१९॥
 तिण सुं छद्म जिन तणुं, द्वितीय शरण ए होय ।
 जो प्रतिमा नुं शरण हुवै, तो किम आवै मनु खोय ॥२०॥
 सभा सुधर्मी थौ निकट, सिद्ध आयतन जाय ।
 जिन प्रतिमा नुं शरण तो, ग्रहण करन्तो ताय ॥२१॥
 ते माटे इहां चैत्य नुं, अर्थ ज्ञान अवलोय ।
 अन्ध ठाम पिण चैत्य नुं, अर्थ ज्ञान कछुं सोय ॥२२॥
 चौबीस तीर्थंकर तणा, चैत्य रूख चौबीस ।
 समवायइ विषे कछा, ए ज्ञान रूख सु अगीस ॥२३॥
 चैत्य ज्ञान केवल लछुं, जिण तरु तल जिनराय ।
 चैत्य वृक्ष ए जाणवा, ए ज्ञान वृक्ष कहिवाय ॥२४॥
 तिमहिज अरिहन्त चैत्य प्रति, चिहुं ज्ञानौ अरिहन्त ।
 द्वितीय शरण ए जाणवो, देखोजी मतिवन्त ॥२५॥
 द्वितीय आशातन ने विषे, चैत्य स्थान भगवन्त ।
 इहां अर्थजे भग तणो, कहिए ज्ञान सुतन्त ॥२६॥

ते माटे अरिहन्त नी, प्रतिमा नी अवल्लोय ।
 शरण कहै छै ते इहां, नथी संभवै सोय ॥२७॥
 ॥ इति चमर सुधर्मागत अधिकार ॥

॥ अथ इज्ञारमूं वली कम्मा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै बलिकम्म शब्द, सूत्र विषै बहु स्थान ।
 तेह तर्णुं स्युं अर्थ है, हिव तसु उत्तर जान ॥ १ ॥
 पञ्चमुद्देशि द्वितीय शत, तुङ्गिया तथा विचार ।
 श्रावक स्थिविर सुवांद्वा, तयार थया तिहवार ॥ २ ॥
 स्नाम करी वली कर्म कृत, तास अर्थ वृत्तिकार ।
 कौधो छै गृहदेवता, देखो हिये विचार ॥ ३ ॥
 इमही उववाइ में कछो, प्रवृत्ति वादुक कौध ।
 वलि कर्म स्व गृहदेवता, वृत्ति विषै सु प्रसिद्ध ॥ ४ ॥
 केइक इहां गृहदेवता, जिन प्रतिमा कहै हिव ।
 पिण्ण इतलो जाणै नही ए किण्ण घरना देव ॥ ५ ॥
 तीर्थंकर तो छै सहो, तीन लोक ना देव ।
 ते किम जिन प्रतिमा भणी, घरना देव कहैव ॥ ६ ॥
 जिन प्रतिमा जिन सारणी, इम पिण्ण कहता जाय ।
 बलिं स्थापै घर देवता, ए किण्ण विध मिलसे न्याय ॥ ७ ॥

कदापि कुल देवी प्रते, कहिये घर ना देव ।
 लोकीक हिते पूजता, श्रावक पिण स्वमेव ॥ ८ ॥
 जेह देवता शब्द नित, स्त्री लिङ्ग वाचीं होय ।
 कच्चुं अमर मे ते भणौ, न्याय हिये अवलोक्य ॥ ९ ॥
 नवम उद्देशे सप्तशत, बर्ण कौध बली कर्म ।
 अर्थ देवता नुं कियो, वृत्ति विषै ए मर्म ॥ १० ॥
 बली कर्म नुं अर्थ धर्मसी, ज्ञान तणो ज विशेष ।
 कौधो बलि कर्म शब्द करी, आया कारण शेष ॥ ११ ॥
 ज्ञाताध्ययने दूसरै, सुत बंछा ने हित ।
 नाग भूत यच्च पूजवा, गर्ई सुभद्रा तेथ ॥ १२ ॥
 पुष्करणी में स्नान कर, कौधा बली कर्म जोय ।
 ए वाव मधे किण देवनी, प्रतिमा पूजी सोय ॥ १३ ॥
 भीनो साङ्गी ओडणो, एहवी छतीज तेह ।
 कमल बहु ग्रही नौकली, पुष्करणी थी जेह ॥ १४ ॥
 बहु पुष्य गन्ध धूपणो, माल्य प्रमुख अवलोक्य ।
 कांठे जे सूक्या प्रथम, तेह ग्रही ने सोय ॥ १५ ॥
 पछै नाग घर आय ने, प्रतिमा पूजी आम ।
 जाव वैश्रमण नी बलि, पूजी आखी ताम ॥ १६ ॥
 बली कर्म पुष्करणी विषै, कौधो धुर आख्यात ।
 ते पुष्करणी ने विषै, कित्ता देवनी जात ॥ १७ ॥

॥ सोरठा ॥

मल्ली पिता ने पास रे, आवन्ता न्हाया कच्चा ।
 जाव शब्द में तास रे, बली कर्मा ए पाठ छै ॥१८॥
 बलि मल्ली घट राजान रे, समभावा आवी तदा ।
 जाव शब्द में जान रे, बली कर्मा ए पाठ छै ॥१९॥
 देखो मली भगवान रे, प्रतिमा पूजी केहनौ ।
 अध्ययन अष्टम् जान रे, आख्यो ज्ञाता ने विषै ॥२०॥
 बलीकर्मा नू जाण रे, अर्थ कहै पूजा तणो ।
 ए जिन प्रतिमा नी माण रे, के पूजा कुल देव नी ॥२१॥
 जो स्थापै जिन विम्ब रे, तो मल्ली तीर्थकर कतां ।
 पूजे तेह अक्षर रे, बली प्रतिमा किण जिन तथी ॥२२॥
 जिन प्रतिमा नी ताथ रे, मल्ली नाथ पूजा करी ।
 तो भावे मुनि पाय रे, देखी प्रणमै के नहीं ॥२३॥
 बलि अटीदीप रे ग्हांय रे, भावे जिन उत्कृष्ट थी ।
 इक सौ सित्तर थाय रे, जघन्य बीस थी नवि घटे ॥२४॥
 त्यां द्रव्ये जिन घर मांथ रे, भावे जिन वंदे के नहीं ।
 बलि तसु वाण सुहाय रे, तसु लेखै किम नहिंसुणै ॥२५॥
 मलिनाथ घर मांहि रे, जिन प्रतिमा पूजी कहै ।
 तो द्रव्ये जिन पिण ताहि रे, भावे जिन वन्दै न किम ॥२६॥

जो स्थापै कुल देव रे, मल्लिनाथ पूजा करौ ।
 सुर सहाय स्वयमेव रे, किम न करै श्रावक समकितौ ॥२७॥
 स्नान तर्णुं ज विशेष रे, अर्थ कहै बली कर्म नूं ।
 तो टलियो लेश अशेषरे, सहु ठाम विशेष स्नान नूं ॥२८॥

॥ दोहा ॥

भगवती नवमां शतक में, तेतीस में उद्देश ।
 जमालौ मंजन घरे, स्नान वली कर्म शेष ॥२९॥
 अलंकार कर नौकल्यो, मंजन घर थौ हिव ।
 दूण न्हावा ना घर विषै, किहवो पूज्यो देव ॥३०॥
 देवा नन्दा ब्राह्मणौ, बलि कर्म मंजन गेह ।
 तिण न्हावा ने घर किसो, पूज्यो देव कहेव ॥३१॥
 द्वितीय उपाङ्ग प्रदेशौ नृप, देव पूजवा जाय ।
 पहिलां न्हावा घर विषै, बलि कर्म कौधो ताय ॥३२॥
 दूण न्हावा ना घर विषै, किसो पूजियो देव ।
 देव पूजवा तो हिवै, जावै छै स्वयमेव ॥३३॥
 ज्ञाताध्ययने सोल में, द्रौपदी मंजन गेह ।
 स्नान बली कर्म कौतुकः, पवर वस्त्र पहरेह ॥३४॥
 मंजन घर सुं नौकलो, आवौ जिन घर मांय ।
 इतरा सूधी पाठ छै, देख विचारो न्याय ॥३५॥

पहलां ती न्हावो कच्चो, पछै कच्चुं बलि कर्म ।
 पछै वस्त्र पहस्या कच्चा, हिव जोवो ए मर्म ॥३६॥
 स्त्री जाति सुभाव नमन, थई न्हावा बैठी जेह ।
 त्यां न्हावा ना घर विषै, केहवो पूज्यो देव ॥३७॥
 बलि कर्म कर जिन घर विषै, प्रतिमा पूजी आय ।
 तो बलि कर्म मंजन घरे, ते केहनौ प्रतिमा थाय ॥३८॥

॥ सोरठा ॥

अपात चित्ताती न्हाय रे, कथ बलि कर्मा पाठ त्यां ।
 जम्बूद्वीप पन्नती मांय रे, किसो देव त्यां पूजियो ॥३९॥

॥ दोहा ॥

कोणिक जिन वन्दन गयो, कच्चो स्नान विस्तार ।
 बलि कर्म शब्द ज मूलगो, नथौ तिहां अवधार ॥४०॥
 ॥ अथ कोणिक जिन वंदवा गयो त्यां न्हावा
 नूं पाठ उववाई सूत्र में कह्यो ते लिखिये छै ॥

जेणेव मरुभ्रम घरे तेणेव उवागच्छइ गच्छइत्ता मरुभ्रम घरं अणुप्य-
 विसइत्ता समुत्ताजाला उलाभिरामे विचित्त मणिरथण कुट्टिमत्तले रम-
 णिज्जे पहाण मंडवं सि णाणामणिरथण भत्ति चित्तं सि पहाण पीढंसि
 सुहणिसणे सुद्धोदगेहिं गंधोदगेहिं पुष्कोदगेहिं सुभोदगेहिं पुणोदकल्ला-
 णग पवरमरुभ्रम विहिप मरुभ्रपतत्थ कोडयसपहि धहुविहेहिं कल्लाणग-
 पवर मरुभ्रणावसाणे पम्हल सुकुमालगंध कासाइय ल्हियंगे सरस सुरहि

गोसीस बंदणोणु लित्तगत्ते अहय सु महग्घ दूमरयण सु संवप सुइ
माला घण्णग विलेवण आविद्ध मणि सुवणे कप्पिय हारद्धहार तिसरय
पालंब पलंबमाणे कडिसुत्त सुकय सोहे पिणद्धगे विउझे अङ्गुलिज्जे कल
लियंगयं ललियं कया भरणे वरकडंग तुडिय थंभियमूय अहिय
रूवसस्सिरीया मुट्टिया पिगलंगुलिय कुंडल उज्जोवियाणणे मउड
दित्त सरप हारोत्थय सूकयर इयव वत्थे पालंब पलंबमाण पडसुकय
उत्तरिज्जे णाणामणि कणगरयण चिमलमहरि हणिउणा वियमि सम-
संति विरइय सु तिलिडु विलिडु लडु आविद्ध वीर वल्लये किं बहुणा
कप्परुत्थय चैव अलंकिय विभूसिए णरवई सकोरंट मल्लदामेणं छत्तेणं
धरिउक्क माणेणं खउ चामर वालवीजयंगे मंगल जय सइ कयालोप
मऊण घराउ पडिणिष्क महमऊ २ ता ॥ इति ॥

॥ सोरठा ॥

बल्लौ कर्म शब्दे जेह रे, पूजा जिन प्रतिमा तणी ।
तो कौणिक अधिकारेह रे, जिन वंदन समय ए न किम । ४१
जम्बूद्वीप पन्नती एम रे, भर्तेश्वर ना स्नान नूं ।
विस्तार कौणिक जेम रे, त्यां वली कम्मा पाठ नहिं । ४२।
स्नान तणी जिन स्थान रे, विस्तार णणे नवि वरणव्यू ।
त्यां वली कम्मा जान रे, पाठ देख निरणय करो । ४३।
जलाञ्जलि प्रमुख रे, स्नान करंतो जे करै ।
कुरखादिक प्रत्यक्ष रे, स्नान विशेषण एह छै ॥ ४४ ॥
ते माटे अवलोय रे, वली कम्मा जी पाठ नूं ।
स्नान विशेषण सोय रे, अर्थ धर्मसी इम कियो ॥ ४५ ॥

वृत्तिकार कच्छुं सोय रे, बलौ कर्म ते गृह देवता ।
 तसु पूजा अवलौय रे, इहां कुल देवौ सम्भवे ॥४६॥
 स्नान विशेषन होय रे, वा पूजौ ग्रह देवता ।
 उभय अर्थ अवलौय रे, सत्य सर्वज्ञ वदै तिको ॥४७॥

॥ अथ असहेजाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

बलि कहै आवक समकितौ, चार जाति ना देव ।
 तास साभ बंछै नहीं, सूत्र विषै ए भेव ॥४८॥
 ते माटे बलौ कर्म ते, जिन प्रतिमा पूजन्त ।
 पिण कुल देवौ अर्थ नहिं हिव तसु उत्तर मन्त ॥४९॥

॥ सोरठा ॥

असहेज्झा पाठ नूं जाण रे, अर्थ दोय है वृत्ति में ।
 आपद् पड्यो सुजाण रे, साभ न बंछै देव नूं ॥५०॥
 पोते कौधा पाप रे, ते पोतैहिज भोगवै ।
 अदीन मनोवृत्ति स्थाप रे, एक अर्थ तो इम कियो ॥५१॥
 बलि पाखंडौ आय रे, चलावै समकित आदि थी ।
 तो नहीं बंछै सहाय रे, समर्थ स्वयमेव हटायवा ॥५२॥
 बलि जिन शासन मांय रे, अत्यन्त भावित आसता ।
 ते माटे असाय रे, अर्थ दूजो इम वृत्ति में ॥५३॥

तुङ्गिया ने अधिकार, रे उभय अर्थ ये आखियो ।
 तास न्याय सुविचार रे, चित्त लगाई सांभलो ॥५४॥
 दूजो अर्थ पहिचाण रे, समकित व्रत सैठा पणो ।
 प्रबल मूल गुण जाण रे, एह अवश्य गुण चाहिजे ॥५५॥
 ए गुण खण्डित धाररे, तो हुवै विराधक पाति में ।
 शुद्ध हुवां सुं ताय रे, आराधक पद आखियो ॥५६॥
 जो पाखण्डो नेजेह रे, जाव देवा समरथ नहीं ।
 पर सहाय बिन तेह रे, तामु चलायो नवि चले ॥५७॥
 तो पिण मूल गुण तास रे, तेहनुं न गयुं सर्वथा ।
 समकित व्रत नी राथ रे, अखण्ड पणै राखी तिणे ॥५८॥
 आपद पडियां आय रे, सुर सहाय बछै नहीं ।
 ए धुर अर्थ कहाय रे, उत्तर गुण ते जाणवूं ॥५९॥
 मुनि धुर पहिर सभाय रे, द्वितीय पहिर मे ध्यानवर ।
 तृतीय गोचरी जाय रे, चौथे पहिर सभाय फुन ॥६०॥
 उत्तर गुण ए च्यार रे, कछा विचक्षण मुनि तणै ।
 ज्यो न करै अणगाररे, तो संयम में भङ्ग नहीं ॥६१॥
 तिम आवक रे एह रे, उत्तर गुण असहायता ।
 सुर सहाय बंछेह रे, तो समकित में भङ्ग नहीं ॥६२॥
 सूत्र उववाई माहि रे, अम्बड ने अधिकार पिण ।
 जाव शब्द में ताहि रे, असहेजभा ए पाठ है ॥६३॥

तास अर्थ वृत्ति मांय रे, एक ईज कीधो अहै ।
 आपद सुर असहाय रे, एह अर्थ कीधो नथी ॥६४॥
 कुतूथिंक प्रेरित रे, समकित से अविचल पणो ।
 पर सहाय नवि चित्त रे, उववाई वृत्ति में कछो ॥६५॥
 राय प्रशेणी वृत्ति रे, असहेजभा नूं अर्थ जे ।
 कीधो अधिक पवित्त रे, चित्त लगाई मांभलो ॥६६॥
 कुतूथिंक प्रेरित रे, समकित से अविचल पणो ।
 पर सहाय नवि चित्त रे, यह अर्थ इक हिन तिहां ॥६७॥
 आपद सुर असहाय रे, यह अर्थ कीधो नथी ।
 कुतूथिंक थौ ताहि रे, न चलै एहिज अर्थ त्यां ॥६८॥
 आनन्दादिक सार रे, असहेजभा पाठ कछो तिहां ।
 छः छण्डी आगार रे, देवाभिउगे पाठ मे ॥६९॥
 अन्य तीर्थी ने धार रे, तथा देव जे तेहना ।
 अज्ञा अष्ट अणगार रे, अन्य तीर्थी ग्रंथो तेहने ॥७०॥
 न करूं वन्दना ताहि रे, नमस्कार पिण नहिं करूं ।
 पहलां बोलूं नाहि रे, अशणादिक देवूं नहीं ॥७१॥
 अभिग्रह एह विशेष रे, छः छण्डी आगार त्यां ।
 राजा ने आदेश रे, तथा कुटम्ब आदेश थौ ॥७२॥
 बलवन्त तणै प्रयोग रे, देव तणै परवश पणै ।
 कुटम्ब बडा ने योग रे, अठवौ विषेज कारणै ॥७३॥

ए घट तथै प्रकार रे, अन्य तीर्थादिक तिहुं भणौ ।
 वन्दै करि नमस्कार रे, अशंकादिक दे तेहने ॥७४॥
 आपद् उपजे आय रे, अथवा तेहना भय यकौ ।
 बाँहै देव सहाय रे, जाणै सावद्य तेहने ॥७५॥
 तसु समकित किम जाय रे, समकित तो अह्ना अहै ।
 हिये विचारी न्याय रे, अह्ना कार्य्य जुवा जुवा ॥७६॥
 छः छण्डौ बिन त्याग रे, ए पिण गुण अधिकाय छै ।
 अधिकैरो बैराग रे, ब्रत सांक्रडा जेहना ॥७७॥
 इक वस ना पचखाण रे, कौघां से श्रावक हुवै ।
 गतक सतरमें जाण रे, द्वितीय उद्देशै भगवती ॥७८॥
 अर्थ दण्ड परिहार रे, ए आठमूं ब्रत है ।
 अर्थ तयो आगार रे, न्याय हिवै तेहनूं सुणौ ॥७९॥
 अर्थ दण्ड में एह रे, आठ आगारज आखिया ।
 द्वितीय सुयगडांगेह रे, द्वितीय उद्देशै देखल्यो ॥८०॥
 आत्म ज्ञात घर तैथ रे, परिवार ने मित्र कारणै ।
 नाग भूत यच्च हेत रे, हिन्सादिक आरम्भ करै ॥८१॥
 अर्थ दण्ड रे माँहरे, ए आठूं ही आखिया ।
 नाग भूत यच्च ताय रे, श्रावक रे आगार है ॥८२॥
 धारणौ नो तिहवार रे, अज्ञालि घन डोहला अर्थ ।
 देखो अभयकुमार रे, ज्ञाता सुर आराधियो ॥८३॥

कृष्णः पिब सुविशेषः रे, लघु बंधवः रे कारणे ।
 दिवः चारुंध्रो देख रे, अन्तर्गड माहीं कक्षी ॥८४॥
 चक्रो भरत सु सोय रे, देवो देव भयो तिथे ।
 जम्बूद्वीप पन्नती जोय रे, अट्टम करि आराधियो ॥८५॥
 बलि मूक्या छः बाण रे, नमस्कार सुर ने लिख्यो ।
 ए प्रत्यक्ष हो पहिछाय रे, बन्धो सहाय देवर्न ॥८६॥
 बलि चक्रो भोतेश रे, चक्र तशी पूजा करी ।
 इमहिज सुर सभेख रे, पूजे स्वार्थ कारणे ॥८७॥
 शान्ति कुंथु अर जाण रे, चक्र रतन पूज्यो के नां ।
 अट्ट खण्ड साधत पाण रे, अट्टम तेरा कियो के नां ॥८८॥
 लवण सुट्टियो देव रे, कृष्ण पिब आराधियो ।
 अज्ञा सोलमं मेव रे, सुर सहाय बन्धो तिथे ॥८९॥
 पूर्वोक्त पहिछाय रे, देव सहायज बन्धवे ।
 सम्यक् दृष्टि जाण रे सावद्य लोकिक कृत करे ॥९०॥
 समकित तामन जाय रे, नहीं जाय आवक पणो ।
 जो सुर पूजे नाहि रे, तो गुण अधिकरो अछे ॥९१॥
 नारदा किरा पाय रे, द्रुपद सुता प्रथम्या नथी ।
 ए गुण छे अधिकाय रे, पिब पांडू प्रथमत करी ॥९२॥
 जाव शब्द रे माहि रे, कृष्णे पिब नारद भयो ।
 प्रथमत कौधो ताहि रे, पिब तसु समकित नवि गर्ड ॥९३॥

प्रत्यक्ष ही पहिचाण रे, समदृष्टि श्रावक तिकी ।
 शीश नमावै जाण रे, स्लीह ना राजा प्रते ॥६४॥
 तिमहिज डरता ताण रे, अथवा स्वार्थ कारणै ।
 प्रथमै सुर नो पाय रे, ते मार्ग लोकीक छै ॥६५॥
 ते मांटे पहिचाण रे पाखण्डी थी नवि चले ।
 दृढ़ भासता जाण रे, मूल अर्थ असहज्ज नूं ॥६६॥
 बलि जेकहै इम बाणि रे, सुर सहाय नहीं बञ्छणो ।
 तो चौबीस जिनना जाण रे, चौबीस यक्ष यक्षणो कहै ॥
 शासक देव सहाय रे, तसु थुई पडिक्कमणै पढ़ै ।
 बलि शेटुंजे ताण रे, पूजै किम चक्केश्वरी ॥६७॥
 तथा यती यकां प्रत्यक्ष रे काला गौरा भैरवै ।
 माणभद्र दिक् यक्ष रे, आराधै रक्षा भणो ॥६८॥
 ए लेखै तो जोय रे सहाय दिवनो बञ्छवै ।
 निज श्रद्धा भवलोय रे, तुम गुरु पिण नहीं समंकिती ॥
 पूजै भैरव आदि रे, श्रावक परणीजे तदा ।
 शीतलादिक अहंलाद रे, तुम लेखै नहीं श्रावक पणो ॥
 तिथिसूं देव सहाय रे लौकिक खाते बञ्छतां ।
 सम्यक्त तास न जाय रे, नहीं जावै श्रावक पणो । १०२।

॥ अथ १२ मूं यात्रा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

यात्रा श्रेतुंजादि नौं, करवी-कीडक ख्यात ।
 पिण ए यात्रा सूत्र में, कहौ नथौ जगनाथ ॥ १ ॥
 शतक अठारमें भगवती, दशमें उद्देसै सार ।
 सोमल पूछ्य वीर प्रते, प्रश्न यात्रादि प्रकार ॥ २ ॥
 हे भगवन्त ! स्यूं थांहिरै, यात्रा अधिक उदार ।
 इम सोमल पूछ्यां थकै, उत्तर दे जगतार ॥ ३ ॥
 जिन भाषै सुण सोमिला, छै मांहरै सुखकार ।
 तप अणशणादिक नियम, ते अभिग्रह सार ॥ ४ ॥
 संयम बलि सज्भाय ते, धर्म कथादिक जाण ।
 ध्यान आवश्यक आदिवर, जोग विमल पहिचाण ॥ ५ ॥
 ए पूर्व कछ्या तेहने विषै, जयणा प्रते राखै जेह ।
 ते मांहरै यात्रा अछै, कछ्या पवर वच एह ॥ ६ ॥
 पिण शत्रुंझयादिक तणी, जिन यात्रा कहौ नांहि ।
 देखोजी देखो तुम्हे, देखो हिवडा मांहि ॥ ७ ॥

॥ सोरठा ॥

वृत्ति विषै इम वाय रे, यद्यपि प्रभू केवल पणै ।
 आवश्यकादि ताय रे, बोलकेइक नही छै तसु ॥ ८ ॥

तथापि तप नियमादि रे, तसु फल ना सदभाव थौ ।
तप नियमादि संवादि रे, कष्टिये फल ते आसरौ । ६।

॥ दोहा ॥

द्रुमहिज पुष्पिया उपाङ्ग में, तृतीय अध्ययन मभार ।
पाश्र्वनाथ भगवन्त प्रते, सोमल विप्र जिंवार ॥१०॥
प्रश्न यात्रादिक पूछिया, तप नियमादि प्रवृत्ति ।
पाश्र्व प्रभू यात्रा कही, पिण गिरि नौ न कथित । ११॥
ज्ञाताध्ययने पंचमें, मुनि स्थावरचा पूत ।
तेह प्रते शुक् पूछिया, प्रश्न यात्रादि प्रभूत ॥१२॥
हे भदन्त ! यात्रा किसी, शुक् पूछे ए सार ।
कच्छुं थावरचा पुत्र द्रुम, जी मुक्त ज्ञान उदार ॥१३॥
दर्शन चारित्र तप बलि, संयम आदि विचार ।
योगे यत्नी जीवनी, ए मुक्त यात्रा धार ॥१४॥
इहां पिण यात्रा एह ही, ज्ञानादिक नौ जोय ।
पिण शत्रुज्ञा आदि नौ, यात्रा न कही कोय ॥१५॥
उत्तराध्ययन सु बारमें, हरिकेशी प्रति सार ।
विप्र पूछियो थाहिरे, कुण द्रुह तीर्थ उदार ॥१६॥
धर्म रूप मुनि द्रुह कछो, ब्रह्मचर्य अवलोय ।
तीर्थ शान्तिकारी कछो, पिण गिरने न कछो कोय । १७॥

शेतुंजम पञ्चए-सिद्धे, सूत्रमें इम गिरि-ख्यात ।
 पिण शेतुञ्जे तीर्थ-सिध, इम न कञ्चो गणि नाथ ॥१८॥
 जागां अलाहदी जाणि ने, कौधा तिहां संथार ।
 वन्दनीक तो गुण अकै, जीवो हिये विचार ॥१९॥
 जीव रंहित-तनु तेहनुं-ते पिण न्हि वन्दनीक ।
 तो जागां वन्दनीक किम, न्याय विचारो ठीक ॥२०॥
 नाज खला घी ले करी, घाल्यो जे कोठार ।
 सूना खला लारै रञ्जा, चंटे तेह गिमार ॥२१॥
 हुण्डी जे खालां तनी, सिंकारता जे स्थान ।
 कोलि कीतलै श्रेठजी, छोड़ी तेह दुकान ॥२२॥
 हिव हुण्डी सिंकरै नहीं, तेह दुकाने जोय ।
 किम श्रेष्ठुञ्जादिक विषै, जिंन मुनि सिद्धां सोय ॥२३॥
 हिव ते पर्वत जे विषै, हुण्डी तणूं ज सोय ।
 सिंकारण वालो न्हि रञ्जी, वन्दनीक किम होय ॥२४॥
 वन्दनीक जो गिर हुवे, तो तिण ऊपर तांय ।
 पंग दीघां आशांतना, हुवे तुम श्रद्धा न्याय ॥२५॥
 द्वीप चंटाई जे विषै, दोय समुद्र विषेह ।
 सहु ठामे सिद्धा मुनी, पन्नवणा सोलम-एह ॥२६॥
 जिहां एक सिद्धा तिहां, सिद्धा मुनि अनन्त ।
 सूत्र उववाई जे विषै, भाख्यो श्री भगवन्त ॥२७॥

दूध खेले तुम्ह वन्दवा, अट्टीद्वीप अवधार ।
 फुन वी-दधि-प्रति-वन्दव, त्यां-सिद्धा-अधरार-॥१८॥
 ते-भाटे-वन्दनीक-कै, जिन मुनि-सहा गुणधार ।
 पिया-स्थानक-वन्दनीक-नही, वारुं-न्याय-विचार-॥२६॥

॥ इति यात्रा अधिकार ॥

॥ अथ १३ मूं इक्कीस हजार वर्ष
 तीर्थ रहसी ले अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

सूत्र-भगवती में कह्यो, बीसम् शतक विषेह ।
 अष्टमुद्देशक वीर प्रति, गोयम प्रश्न करेह ॥ १ ॥
 जम्बूद्वीप ना भरत में, ए अवशर्पिणी मांहि ।
 काल-केतलुं आपरो, तीर्थ रहिये ताहि ॥ २ ॥
 जिन-कहै-जम्बू-भरत में, एह अवशर्पिणी-मन्त ।
 वर्ष सहस्र इक-बीस मुझ, तीर्थ-रहिये तन्त ॥ ३ ॥
 तीर्थ कहिये कहने, इम को प्रश्न करेह ।
 तसु उत्तर तीर्थ तीको, अगम सूत्र कहेह ॥ ४ ॥
 वर्ष सहस्र इक-बीस लग, रहिये-सूत्र-उदार ।
 बहू ठामे जे तीर्थ नुं, सूत्र अर्थ सुविचार ॥ ५ ॥

॥ सोरठा ॥

तीर्थ आगम धार रे, अमर कोष में आखियो ।
 तीजा काण्ड मभार रे, थांतत वर्गे जाणवो ॥ ६ ॥
 निपान आगम जेह रे, ऋषिसेव्यो जल गुरु विषै ।
 ए चिहुं अर्थ विषेह रे, तीर्थ शब्द कच्चो तिहां ॥ ७ ॥

॥ श्लोक ॥

निपानाऽगमयो तीर्थ ऋषि जुष्ट जले गुरौ ॥
 इत्यमर तृतीय काण्डे थांतत वर्गे ॥

॥ सोरठा ॥

तीर्थ शास्त्र अवधार रे, हेम अनेकार्ये अख्युं ।
 द्वादश नाम मभार रे, प्रथम नाम ए आखियो ॥ ८ ॥

॥ श्लोक ॥

तीर्थे शास्त्रे १ गुरौ २ यज्ञे ३ पुण्य क्षेत्रा ४ वतार
 यो ५ ऋषि जुष्टे ६ जले मंत्रिण्युं ७ पाथे ८ स्त्री
 रजस्थपि ९ योनौ १० पात्रे ११ दर्शनेषु १२ ॥

॥ इति हेम अनेकार्ये ॥

॥ सोरठा ॥

विश्व कोष रे मांदि रे, तीर्थ नाम कच्चुं शास्त्र नूं ।
 नव नामा में ताहि रे, प्रथम नाम ए पेखियो ॥ ९ ॥

॥ श्लोक ॥

तीर्थ शास्त्रा १ ध्वर २ चेतो ३ पायो ४ पाध्याय ५
मन्त्रिषु ६ भवता ऋषि ७ जुष्टांभः ८ स्त्री रजः ९ सु
च वि श्रुतं ।

॥ इति विश्वे थांतत वर्गे ॥

॥ सोरठा ॥

तीर्थ शास्त्र इम लेख रे, कच्चो मेदनी कोष में ।
दश नामा मे देख रे, प्रथम नाम ए परवरो ॥१०॥

॥ श्लोक ॥

तीर्थ शास्त्र १ ध्वर २ चेतो ३ पाय ४ नारीरजः ५
सु च । भवता ऋषि ६ जुष्टांबू ७ पात्री ८ पाध्याय ९
मन्त्रिषु १० ।

॥ इति मेदनी थांतत वर्गे ॥

॥ सोरठा ॥

गुणतीसम उत्तराध्ययन रे, बोल गुनीमम वृत्ति में ।
तीर्थ शब्दे वयण रे, गणधर वा प्रवचन श्रुतः ॥११॥
भगवद् वृत्ति मभार रे, तित्थ गराणं नो अर्थ ।
तीर्थ प्रवचन सार रे, इमहिज समवायङ्ग वृत्ती ॥१२॥

तीर्थ प्रवचन सार रे, तेहना अव्यतिरेक थी ।
संघ तीर्थ सुविचार रे, तसु कर्ता तीर्थ द्वारा ॥१३॥

॥ अत्र टीका ॥

तरंति तेन संसार सागरमिति तीर्थ प्रवचनं तद्व्यतिरेकाख्ये
संघ तीर्थं तत करण शीलत्वा तीर्थंकरः ।

॥ एहनुं अर्थ वार्तिका करिइं कहै लै ॥

तिरै तिणकरी संसार सागर इति तीर्थ ते तीर्थ ने करिवा नो शील
पणा थकी तीर्थंकर कहिये, इम भगवती नी वृत्ति में नमोत्थूण में
तित्थगरा नो अर्थ कियो, इमहिज समवायंग नी वृत्ति ने विषे जाणवो
इहां तीर्थ नाम प्रवचन सूत्र नुं कहुं, ते पाठ अर्थ रूप सूत्र साधू साध्वी
आधार रखा छै अने अर्थ रूप सूत्र श्रावक श्राविका ने आधारे रह्यो छै, ते
सूत्र तीर्थ तो आधेय छै अने चतुर्विध संघ आधार छै ते अधेय ने आधार
ना किण ही प्रकारे करी अमेदोपचार थकी संघ ने तीर्थ कहुं तेहने
करिवा नूं शील ते माटे तीर्थंकर कहिये ।

इहां मुल अर्थ प्रवचन ने तीर्थ कहुं ते प्रवचन रूप तीर्थ बहुत पणे
संघ ने विषे रखा छै तिण सू संघ ने तीर्थ कहुं ते प्रवचन रुपी तीर्थ
थी संघ जुदो नथी ते माटे ।

॥ सोरठा ॥

तीर्थ प्रवचन सार रे, तत् कारण शील तर्थ द्वारा ।
नमोत्थूणं में धार रे, गय प्रश्नोणी वृत्ति मे ॥१३॥

॥ अत्र टीका ॥

तीर्थ ते संसार समुद्रोऽनेनेति तीर्थं प्रवचनं तत् करण शील्लास्तीर्थं
कराः तेभ्यः ॥ इति ॥

॥ एहनुं अर्थ वार्तिका करिइं कहै छै ॥

तीरीयै संसार समुद्र इणे कटी इति तीर्थ प्रवचन सूत्र ते तीर्थ करिवा ना शील थकी तीर्थकर कहिये, इहां राय प्रशोणी नी वृत्ति में प्रवचन ते आगम ने तीर्थ कहां ते आगम रूपी तीर्थ ना कर्ता तीर्थकर छै ते माटे तीर्थयरे जो अर्थ तीर्थकर कियो ।

॥ सोरठा ॥

पन्नवणा वृत्ति मभार रे, पनर भेद में तित्य सिद्धा ।
 प्रथम पदे अवधार रे, दाख्यो, छै ते सांभलो ॥१५॥
 सत्य प्ररूपक सोय रे, परम गुरू छै तेहना ।
 बचन विमल अवलोय रे, तीर्थ कहिये तेहने ॥१६॥
 ते निराधार नहिं होय रे, तसु आधारज संघ प्रति ।
 तीर्थ कहिये जोय रे, वा धुर गणधर तिहां कछुं ॥१७॥

॥ अत्र टीका ॥

तीर्थ ते संसार सागरो अनेनेति तीर्थ यथा अवस्थित सकल जीवा-
 जीवादि पदार्थ पररूपक परमगुरु प्रणीत बचनं तथ निराधार न भवति
 इति तदा धारं संघ. प्रथम गणधरो वा तस्मिन् उत्पन्नाये सिद्धाहस्ते
 तीर्थ सिद्धा ।

॥ एहनुं अर्थ वार्तिका करिइं कहै छै ॥

तीरीयै संसार सागर इणे कटी इति तीर्थ यथावस्थित सकल जीव
 अजीवादि पदार्थ ना पररूपक परमगुरू ना कहा बचन तेहने तीर्थ
 कहिये अने ते परम गुरू ना बचन रूप तीर्थ ते आधार विना न हुवै इम
 ते संघ ने आधार छै ते भणी संघ ने तीर्थ कहीजै, अथवा प्रथम गणधर
 ने तीर्थ कहिये ते संघरूप तीर्थ ने त्रिये ऊपना जे सिद्ध यथा ते तीर्थ

६८] * इकोस हजार वष तीर्थ रहसी ते अधिकार *

सिद्धः इहां पिण परम गुरु ते तीर्थ कर तेहना वचन ते आगम तेहने तीर्थ
कह्यो, ते आगम आधार धिना न हुवै ते आधार माटे संघ ने तथा
प्रथम गणधर ने तीर्थ कह्यो ।

॥ सोरठा ॥

आवश्यक निर्युक्ति रे, तास अर्थ में भाष थी ।
तीर्थ प्रवचन उक्त रे, समर्थ क्रोधादि जौपवा ॥१८॥

॥ अत्र टोका ॥

इह भाव तीर्थ क्रोधादि निग्रह समर्थ प्रवचन मेव गृहते ।

॥ एहनुं अर्थ ॥

इहां भाव तीर्थ क्रोधादि निग्रह समर्थ प्रवचन सूत्र हीज ग्रहण
करिये, इहां पिण प्रवचन सूत्र ने तीर्थ कह्यो ।

॥ सोरठा ॥

द्वत्यादिक बहु ठाम रे, तीर्थ सूत्र भषी कछुं ।
ते तीर्थ प्रवचन ताम रे, रहिस्ये द्वाकबीस सहस्र वर्ष ॥१९॥
प्रवचन तीर्थ सोय रे, संघ आधारि हुवै कदा ।
किणहिक बेलां जोय रे, द्रव्य लिङ्गी आधार हुवै ॥२०॥
जद को प्रश्न करन्त रे, मुनिना गुण बिन जेहनुं ।
भयलू सूत्र किम हुन्त रे, तसु उत्तर हिव सांभलो ॥२१॥
धुर उद्देश ववहार रे, बहुश्रुत बहु आगम भययुं ।
द्रव्य लिङ्गी जे धार रे, मुनि प्रायश्चित ले तिण कने ॥२२॥

इहां द्रव्य लिङ्गो आधार रे, सूत्रागम श्री जिन कछ्छी ।

तसु श्रद्धा आचार रे, विरुद्ध हुवै ते तो जुदो ॥२३॥

॥ वार्तिका ॥

ववहार उद्देशे पहले कछो साधू ना रूप सहित भेपधारी बहुश्रुत बहु आगम नूं जाण ते कने साधू आलोचना करे पहवुं कछुं प भेपधारीने आधार बहु श्रुत बहु आगम कछो छै ते माटे तेहनूं जेतलूं जेतलूं शास्त्र ना अर्थ नूं शुद्ध जाणपणी ते श्रुत आगम रूप तोर्थ नूं अश संभवै ते माटे किणहिक काले चतुर्विध संघ न हुवै तो स्थिलाचारी ने आधार प्रवचन रूप तीर्थ नो अश हुवै पहवुं संभाविये छै ।

॥ सोरठा ॥

बलि ववहार कथित रे, बहु श्रुत आगम भण्यूं ।

श्रावक पञ्चात्कृत्य रे, मुनि आलोचै तिण कने ॥२४॥

इहां ग्रहस्थ आधार रे, बहुश्रुत आगम जिन कछ्छी ।

तसु सावद्य व्यापार रे, ए तो एह थी छै जुदो ॥२५॥

अर्थ रूप अवलोक्य रे, जाण पणं छै जेह नूं ।

ते निर्वद्य छै सोय रे, सूत्र तीर्थ छै जे भणी ॥२६॥

मित्थ्यादृष्टि देख रे, देश जण दश पूर्व धर ।

उत्कृष्ट सम्पेख रे, नन्दी मांछि निहालज्यो ॥२७॥

मित्थ्याती आधार रे, इहां प्रभु पूर्व आखिया ।

श्रद्धा तास असार रे, ते तो धुर आसव अछै ॥२८॥

इमहिज पञ्चम् आर रे, किण बेल्यां मुनि नहिं थया ।

द्रव्य लिङ्ग्याद्या धार रे, सूत्र रूप तीर्थ हुइं ॥२९॥

सध आधारे जेह रे सूत्र रूप जे तीर्थ ते ।
 निरन्तर नहौं दौसिह रे, वर्ष महस्र इकबोस लग ॥२०॥
 कदही संघ आधार रे, कदही अन्य आधार हुवै ।
 सूत्र तीर्थ सुखकार रे, वर्ष इकबोस हजार लग ॥२१॥
 कोई कहै चिहुं विध सङ्ग रे, तेह भणौ तीर्थ कहुं ।
 तसु आधार सु चङ्ग रे, प्रवचन तीर्थ ते भणौ । ३२॥
 पिण प्रवचन सु प्रशंस रे, द्रव्य लिङ्गौ आधार तसु ।
 तीर्थ तणोज अंश रे, किम कहिये ? उत्तर तमू ॥३३॥
 पण्डित मर्ण विख्यात रे, शत दूजै उद्देश धुर ।
 पाउवगमन मुजात रे भक्त पञ्चखाण ज दूसरो ॥३४॥
 मुख बचने करि न्हाल रे, मरण पण्डित बे आखिया ।
 मुनि अणशण बिन काल रे, करै तिको पण्डित मृत्यु ३५
 बाल मर्ण फुन बार रे, मुख्य बचन करि ने कछा ।
 बार मरण विण धार रे, असंयतौ नो बाल मृतक ॥३६॥
 पूरण तापश ताहि रे, बलि जमालौ तामलौ ।
 बार मरण में नाहिं रे पिण बाल मरणते जाणवो । ३७।
 मुख बचन करि बार रे, बाख मरण आख्या प्रभू ।
 तिम तीर्थ संघ चार रे, मुख बचन करि जाणवा । ३८
 पण्डित मरण पिण द्यौय रे मुख बचने करिने कछा ।
 तिम चिहुं तीर्थ जोय रे, मुख्य बचन करि जाणवा । ३९।

॥ एहिज अर्थ वार्तिका करिइ कहै छै ॥

जिम भगवती शतक दूसरे उद्देशे पहलै मुख्य बचने करी बाल मरण बारा प्रकार नो कह्यो अने असंयती अविरती बारा प्रकार बिना बालतो ही मर जाय ते पिण बाल मरण हिज छै, तथा तामली जमाली प्रमुख नो बाल मरण हीज छै पिण ते बारामें नथी कह्यो ते माटै ये बार प्रकार बाल मरण मुख्य बचने करी जाणयो, वा बले पण्डित मरण ये प्रकार कह्या एक तो प दोपगमन दूजो भक्तपञ्चखाण ए पिण मुख बचने करी कह्या, जे साधू संथारा बिना आराधक पद पायो तेह पिण पण्डित मरण हिज छै जिम श्रवानुभूति तथा सुनक्षत्र मुनि नो संथारो बाल्यो नथी ते भणी भक्त प्रत्याख्यान पादोपगमन तो नथी पिण पण्डित मरण हिज छै अने पादोपगमन भक्तपञ्चखाण ए वे भेदे पण्डित मरण कह्या ते मुख्य बचने करी ज्ञानवा, तथा आराधना ज्ञान दर्शन चारित्र ए तीन प्रकार नी भगवती शतक आठमें उद्देशे ब्रह्ममें कही ते पिण मुख बचने करी जाणथी, अने बलि तिणहिज उद्देशे श्रुत ते समकित रहित अने शील क्रिया सहित ने देश आराधक कह्यो तिहां बृत्तिकार कह्यो ए बाल तपस्वी थोडो अंश मुक्ति मार्ग नो आराधै एहयो अर्थ कियो छै जिम ज्ञान रहित शील सहित बाल तपस्वी मोक्ष मार्ग नो अंश आराधे ते देश आराधक छै पिण तीन आराधना में नथी तिम द्रव्य लिङ्गी ने आधार प्रबचन सूत्र ते तीर्थ नो अंश संभवै पिण ते च्यार तीर्थ में नथी ।

॥ सोरठा ॥

वर्ष इक्कीस हजार रे, तीर्थ रहिस्यै न्याय तसु ।

एम संभवै सार रे, फुन बहुश्रुत कहै तेह सत्य ॥४०॥

वषे इक्कीस हजार रे, तीर्थ रहिस्यै इम कह्यो ।

पिण चिहुं तीर्थ सार रे, रहिस्यै इम चाख्यो नथी ॥४१॥

ते माटै अवधार रे, तीर्थ प्रवचन सूत्र है ।

कदहि संघ आधार रे द्रव्य लिङ्गी आधार कदि । ४२।

॥ दोहा ॥

सूत्र भगवती नी पवर मम कृत जोड विषेह ।

बलि कर्म तीर्थ न्याय कछुं, ते इहां ग्रहण करेह । ४३।

॥ इति इक्कीस हजार वर्ष तीर्थ रहसी ते अधिकार ॥

॥ अथ चौदसूं आगम अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

पंच अने चालीस में, जे चिहूं शरण विचार १ ।

नाम भक्त परिज्ञा २ बलि, फुन पर्देन्नो सन्यार ३ ॥ १ ॥

जीत कल्प ४ पिंड नियुक्ति ५ पञ्चखाण कल्प अवलोय ।

ए षट नी नन्दी विषे, साख नहीं है कोय ॥ २ ॥

महा निशीथ विषे कछुं, द्वितीय अध्ययन मभार ।

कु लिखत दोष देवो नहीं, तसु कारण अवधार ॥ ३ ॥

एहिज महा निशीथ में, किहांएक अर्द्ध शीलोग ।

किहां श्लोक किहां अक्षर नौ, पंक्ति शोली प्रयोग ॥ ४ ॥

किहांएक पानो अर्द्ध ही, किहां पत्र बे तीन ।

गल्यो ग्रन्थ इम आदि बहु, इह विध कछुं सुचीन । ५ ।

बलि कछुं तृतीय अध्ययन में, ए पुस्तक रे मांहि ।

चेंटो इक पाना थकी, बीजो पानो ताहि ॥ ६ ॥

ते माटे ए सूत्र नूः आलावा न प्रामेह ।
 तिहां भगणहार सूत्रां तणा, त्यां अशुद्ध लिख्युं हुवै जेह ॥
 दोष न देवा तेहनो, खंड खंड थई एह ।
 पत्र मद्या खाधा बलि, जीव उदेहि जेह ॥ ८ ॥
 हरिभद्र निज मति करी सांधी लिख्युं ज ताम ।
 इम कक्षं महानिशीथ मे वलि अन्य आचार्य नाम ॥ ९ ॥
 तिण मूं महानिशीथ पिण, डोहलाणो छै एह ।
 सर्वं मूलगो नहिं रच्छो, निपुण विचारो छेह ॥ १० ॥
 शेष रच्छा पट तेह में, काडक काडक बाय ।
 अहं सूं न मिले तेह वच, किम मानीजे ताय ॥ ११ ॥
 टीका चूरणि दौपिका, भाष्य नियुक्ति जाण ।
 किणहो करी दोसे नथी, तिण मूं एह अप्रमाण ॥ १२ ॥
 एकादश जे अहं थो, मिलता वचन सुजाण ।
 सर्व मानवा योग्य मुक्त. पडना प्रमुख पिच्छाण ॥ १३ ॥
 धुर वे अहं नौ वृत्ति जे शीलाचार्ये किह ।
 अभयदेव सुरे करी, नव अहं वृत्ति प्रसिद्ध ॥ १४ ॥
 फुन अभय देव सुरे रचो. प्रथम उपांग प्रबन्ध ।
 चन्द्र रूरि विरचित वृत्ति, निरावलिथा श्रुतस्कन्ध ॥ १५ ॥
 शेष उपांग अरु छेदनी, मलयगिरि कृत जोय ।
 हेमाचार्ये वृत्ति करी, अनुयोग द्वार नौ सोय ॥ १६ ॥

हरिभद्र सूरि करौ, दशवेकालिक वृत्ति ।
 भाष्य चने वलि चूर्णि पिण्ड, पूर्वाचार्य कृत ॥१७॥
 तिम ए षट नी नवि करौ, पूर्वाचार्ये जोय ।
 तिण सुं तिणे न मानिया, एह्वं दीसे सोय ॥१८॥
 शेष रक्षा बत्तीस जे, मानण योग आरोम्ब ।
 एह थो मिलता अन्य पिण्ड, हे मुक्त मानण योग ॥१९॥

॥ इति भागम अधिकार ॥

॥ अथ पनरम मुख वस्त्रिका अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

इन्द्रभूति ने आखियो, मृगा राणी ताहि ।
 मुंहपोत्तिया इ करौ, मुख बांधो मुनिराय ॥ १ ॥
 ते मुख कहिये कहने, उत्तर तसु अवलोक्य ।
 नाक तणो ए नाम मुख, न्याय विचारी जोय ॥ २ ॥
 दुर्गम्ब आवै नाक ने, ते माटै सुविचार ।
 नाक बांधवा नी कही, राणी मृगा जिवार ॥ ३ ॥
 ज्ञाता अध्ययन पाठमें, दुर्गम्ब व्याघ्यां ताय ।
 षट राजा मुख ठांकिया, ते दुर्गम्ब नाकि आय ॥ ४ ॥
 ज्ञाता नधमे अध्ययन में, दुर्गम्ब व्याघ्यां न्हाल ।
 मुख ठांकिया आख्या तिहा, जिन ऋषि ने जिन पाल ॥ ५ ॥

ज्ञाता अध्ययन वाग्मे, जे जितथनु राय ।
 मुख ठांके इम आखिया, दुर्गन्ध व्यापि ताय ॥ ६ ॥
 मुखनो अवयव नाक है, ते नाक भणी मुख ख्यात ।
 वारु न्याय विचार ने, समभो सुगुण सुजात ॥ ७ ॥
 होट हडवटी नाक फुन, चक्षू गाल निलार ।
 मुख ना अवयव ते भणी, मुख कहिये सुविचार ॥ ८ ॥
 धुर अङ्ग प्रथम अध्ययन में, द्वितीय उद्देश उर्हत ।
 पृथिवी बेदन जपरै, अन्ध पुरुष दृष्टन्त ॥ ९ ॥
 पग सूं लिई शिर लगे, तनु हातिं शत स्थान ।
 भाला सूं भेदै बलि, खडगे छेदै जान ॥ १० ॥
 तिहां होट हडवटी नाक फुन, आंख जोभ ने दन्त ।
 गाल निलार अरु कर्ण फुन, जू जुआ नाम कथन्त ॥ ११ ॥
 ए मुखना अवयव कच्चा, पिण मुख नो न कच्चे नाम ।
 ते माटै ए सह भणी, मुख कहिये है ताम ॥ १२ ॥
 द्वादश आंगुल मुख कच्चे, नव मुख नो सह देह ।
 अनुयोग हारे आखियो, देखो पाठ विषेह ॥ १३ ॥
 ललाट थीं लिई करी, द्वादश आंगुल जाण ।
 नाक होट ने हडवटी, ए मुख तणुं प्रमाण ॥ १४ ॥
 गर्गाचार्य ना कुशिष्य, मुख ने विषै विकार ।
 भृकुटी करै कच्चा प्रभू, उत्तराध्ययन मभार ॥ १५ ॥

मुख नो दृग् निलाड छे, ते निलाड न मुख ख्यात ।
 भृकुटी ललाट न विषे, प्रत्यक्ष ही देखात ॥१६॥
 ठाम ठाम सूत्रे कक्षुं, त्रिबलि भृकुटी ललाट ।
 निरावलियादिक न विषे, प्रभुजी आख्या पाठ ॥१७॥
 तिमज मृगा राषा तंदा, नाक भणी मुख ख्यात ।
 ते दुर्गन्ध प्रति टालवा, पेखो तज पखपात ॥१८॥
 कर राखे मुख वस्त्रिका, जसु तीखो उपयोग ।
 तो पिण नहिं अटकाव तसु, नहिं मुझ खंच प्रयोग ॥१९॥
 तीखो नहिं उपयोग तसु, जतना काज मुजोय ।
 मुख बांधे मुख वस्त्रिका, तो पिण दोष न होय ॥२०॥
 मुख बांधे डोरै करी, कोई कहै किहां ख्यात ।
 सांचूं जो सांचूं कक्षुं सांचूं प्रभु सुजात ॥२१॥
 नहिं तीखो उपयोग तसु, मुख बांधे सुविचार ।
 वायु नो जतना भणौ, पिण नहिं छे शृङ्गार ॥२२॥
 सूंठ तणो जे गांठियो, गणी देवाहिं सवाद ।
 भोलावणो भूलौ गया, सन्ध्या आयो याद ॥२३॥
 जाण्यो बुद्धि हीणो पडो, लिख्या सत्र मुख रास ।
 वीर निर्वाण गयां पछै, नवसय अस्सी वास ॥२४॥
 तिम तीखो उपयोग अति, रहतो जाणै नाहि ।
 डोरा सं मुख वस्त्रिका बांधे छे मुनिराय ॥२५॥

अश्रणादिक प्रति बहिरतां, पांतीं करतां सोय ।
 अन्य साधु प्रति धामतां, चरचा करतां जाय ॥२६॥
 मुनि ने कार्यं भलावतां, इत्यादिक सु प्रयोग ।
 मुख बांध्यां बिन किम रहै, अति तौखो उपयोग ॥ २७॥
 तिण सूं यतना कारणै, डोगे घालौ साय ।
 मुख बांधे मुख वस्त्रिका, और कारण नहिं कोय ॥२८॥
 यदि कहै डोगे किहां कछो ? तसु कहिये द्रुम वाय ।
 कान विषे घालै तिका, किसा सूत्र रे मांहि ? ॥२९॥
 मुख बांधे डोरै करौ, तसु करै निन्दा तात ।
 कान बधावै प्रगट एं, आ किसा सूत्र नौ बात ॥३०॥
 तर्क करै डोगा तणौ, कहै किण सूत्रे ख्यात ।
 कान बधावे तेहनो, क्यं नहिं पूछै बात ॥३१॥
 मोर पृच्छना देश प्रति घाली कर्ण मभार ।
 उदक थकी छांट्यां थकां फूले तेह तिं वार ॥३२॥
 द्रुम नित प्रति बहु खपकरी; कर्ण वधाय विशेष ।
 द्रुम घालै मुख वस्त्रिका, किसा सूत्र मे लेख ? ॥३३॥
 कहै बचन शुद्ध यतना अर्थ, घालां कर्ण मभार ।
 तो डोरौ पिण यतना अर्थ, न्याय सरौषो धार ॥३४॥
 उदक तणा घट ने विषै, डोरौ बांधै तेह ।
 किसा सूत्र मे ते कछु; देखोजी चित्त देह ॥३५॥

तथा तर्पणो प्रमुख जे, डोरी बांधै तास ।
 ते किण सूत्रे बाखियो ? जोबो हिये विमास ॥३६॥
 कम्बर विहाणा नी करै, तसु डोरी बांधेय ।
 ते पिण किण सूत्रे कछु ? न्याय विचारी लेह ॥३७॥
 बलि सिराणा बांधता, डोरी यकीज जोय ।
 ते पिण किण सूत्रे कछु, उत्तर आपो मोय ॥३८॥
 बलि चिरमली सूत्र में, बाखी श्री भगवान ।
 तसु डोरी बांधै तिका, किसा सूत्र में जान ? ॥३९॥
 पुस्तक नै पूठा तणै, पडला रै पहिचाण ।
 डोरी बांधै छै तिका, किसा सूत्र में बाण ? ॥४०॥
 बलि लिखणा राखवा, कलमदान कहिवाय ।
 डोरी बांधै तेह नै, किसा सूत्र रे मांय ? ॥४१॥
 लिखवारी पाटौ तणै, डोरी प्रति बांधेह ।
 किसा सूत्र में ते कछु, देखो तसु लेखिह ॥४२॥
 तथा लीक पाना तणै, डोरी थौ पाडेह ।
 फांन्धा नी पाटौ करै, किसा सूत्र में तेह ? ॥४३॥
 कारण में पग प्रमुख रै, पाटौ बांधै देख ।
 डोरी बांधै तेह नै, किसा सूत्र में लेख ? ॥४४॥
 गोछारै डोखां यकी, पाबा बांधै तेह ।
 किसा सूत्र मांही कछो ? उत्तर आपो एह ॥४५॥

डीरा सूं मुंह पीतिया, बांधे जयणा काज ।
 तर्क करे तसु पूछिये, इतला बोल समाज ॥४६॥
 कहै अष्ट पहर बांध्यां रहै, ते क्लिणसूत्रे ख्यात ?
 तो एक पहर बांधे तिका, क्लिण सूत्रे अवदात ॥४७॥
 वखाण मे इक पहर लग. कर्ण घाल बांधन्त ।
 ते पिण क्लिणो सिद्धान्त मे, भाष्यो नहिं भगवन्त । ४८।
 अष्ट पहर बांध्यां यकां, दोष घनो जो होय ।
 तो एक पहर बांध्यां यकां, टूषण थोडो जोय ॥४९॥
 जो एक पहर बांध्यां यकां, दोष नहिं छै कोय ।
 तो आठ पहर बांधे तसु, दोषण क्लिण विध होय । ५०।
 डोरो घालै कर्ण में, तेहनो दोषण होय ।
 तो कर्ण विधै मुख वस्त्रिका, घाल्यां दोषण जोय । ५१।
 जो कर्ण विधै मुख वस्त्रिका, घाल्यां दोष न कोय ।
 तो डोरो घालै कर्ण मे, तो पिण दोष न होय ॥५२॥
 कोई कहै मुख वस्त्रिका, अष्ट पहर लग एह ।
 बांध्यां कफ में जपजै, जीव अमङ्कित जेह ॥५३॥
 तो मुनि अज्जा तनु विधै, थयो गुम्बडो कोय ।
 राधि रुधिर रै जपरै, पाटो बांधे मोय ॥५४॥
 जीव समुष्मिंम ते विधै, उपजै तिस रै लेख ।
 पाटा रै लागे रहै, रुधिर. राधि सम्पेख ॥५५॥

जब कहै तनु नो गर्म थौ, जीव न उपजै आय ।
 तो कफ मे किम उपजै, एक सरीषो न्याय ॥५६॥
 पाटे जीव न उपजै, तो कफनी क्युं ताण ।
 समभो जो समभो तुम्हे, समभो चतुर सुजाण ॥५७॥
 तनु असजभाई मुनि तणै, दूक विध ब्रण सम्बेद ।
 रजुप्रवना ने ब्रण फुन, अजभा ने बे भेद ॥५८॥
 ए तनु असजभाई विषे, मुनि अजभा ने ताण ।
 निज निज स्थानक ने विषे, करवी नहिं सजभाय ॥५९॥
 ए तनु असजभाई विषे, मुनि अजभा ने ताहि ।
 देवो खैवो बांचणी, कल्पै मांहे मांहे ॥६०॥
 व्यवहार उद्देशे सातमें, द्रम भाषो, प्रभु बाण ।
 राखो जिन बच आस्था, चमको मतो सुजाण ॥६१॥
 तनु सलमन वस्त्र ने विषे, जो जन्तु उपजैह ।
 तो मांहीं मांहीं बांचणी, तसु आज्ञा किम देह । ॥६२॥
 जो उघाड़े मुख बोलियां, न मरे वायु काय ।
 तो बखाण में मुंह वस्त्रिका, ते बांधे किणन्याय ॥६३॥
 फूंक देणी वरजी प्रभू, वायु ने अधिकार ।
 दशवेकालिक देखलो, तूर्य अध्ययन मभार ॥६४॥
 मुख ने वायु करि, मरे, वायु जीव विचार ।
 दश में अंगे देखलो, पहिले आसव द्वार ॥६५॥

सूत्र भगवतो ने विषे. सोलम शतक मभार ।
द्वितीय उद्देशे भाखियो, कहिये ते अधिकार ॥६६॥
शक्र उघाड़े मुख लवै, भाषा सावद्य सोय ।
हस्त बस्त्र मुख दे वदै, निरवद्य भाषा होय ॥६७॥
वृत्तिकार इम भाखियो, जीव संरक्षण सोय ।
निरवद्य भाषा जाणवौ. अन्या सावद्य होय ॥६७॥
विक्रन्द्री ना पञ्चतगा, तेइना स्थानक जेह ।
ते सुरलोक विषे नथो, पन्नवणा द्वितीय पदेह ॥६८॥
धर्म सम्बन्धी वार्ता. करै शक्र जेहवार ।
बोलै मुख ठांकी तदा, ते निरवद्य बच सार ॥७०॥
संसारिक जे वार्ता करै, शक्र जेहवार ।
वदै उवाड़े मुख तदा, ते सावद्य बच धार ॥७१॥
तिण कारण वायु तणो, दया अर्थ मुनिराज ।
मुख बांधै मुंहपोत्तिया, पिण अवर नहिं छै काज ॥७२॥

॥ अथ सोलहमं स्याद्वाद अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै भगवन्त नो, स्याद्वाद मत जोय ।

एकान्तिक कहिवूं नहों तसु उत्तर अवलोक्य ॥ १ ॥

स्यादः कथंचित जाणवूं, किण ही प्रकार करेह ।

वदवूं, कहिवूं, वादते, स्याद्वाद छै एह ॥ २ ॥

कहिये किषी प्रकार करी, ते स्याद्वाद कहिवाय ।
 न्याय कहूँ छूँ तेहनी, सांभलजो चितल्याय ॥ ३ ॥
 सूत्र भगवती ने विषै, शतक सातमें सीय ।
 द्वितीय उद्देशै भाखियो, जीव प्रश्न अवलोक्य ॥ ४ ॥
 किषी प्रकार करि प्रभू, जीव साश्रवता ख्यात ।
 किण ही प्रकार असाश्रवता, आख्या श्री जगनाथ ॥ ५ ॥
 द्रव्य थकी तो साश्रवता, भाव थकी सुविचार ।
 असाश्रवता प्रभूजो कछा, ए स्याद्वाद मत सार ॥ ६ ॥
 सूत्र भगवती ने विषै, शतक चौदमें सार ।
 तूर्य उद्देशै भाखियो, परमाणु अधिकार ॥ ७ ॥
 कछो परमाणु साश्रवतो, किषी प्रकार करेह ।
 किषी प्रकार असाश्रवतो, हिव तसु न्याय कहिह ॥ ८ ॥
 द्रव्य थकी तो साश्रवतो, परिमाणु प्रति ख्यात ।
 न मिटे परम अणु पणो, किण ही काल विख्यात ॥ ९ ॥
 वर्णादिक ने पञ्भव करि, असाश्रवता अवलोक्य ।
 स्याद्वाद बच एह छै, न्याय दृष्टि करि जोय ॥ १० ॥
 ब्रह्मकल्प मांहि कह्युं, पञ्चमुद्देश मभार ।
 प्रथम मोहर अशणादि प्रति, बहिरौ ने अणगार ॥ ११ ॥
 तूर्य पहर राखी करौ, ते अशणादि प्रतेह ।
 भोगवणो कल्पै नहीं, सुखे समाधि एह ॥ १२ ॥

गाढा गाढ आतङ्क करि, तूर्यं पहर में तेह ।
 भोगवणो कल्पे तसु, स्याद्वाद वच एह ॥१३॥
 प्रथम पहर बहिनै करी, कारण पडियां ताहि ।
 रात्रि विषै जे भोगवे, ए स्याद्वाद वच नांहि ॥१४॥
 तूर्यं पहर आत्ता कहो, निश नौ आत्ता नांहि ।
 तिष सुं निश नहिं भोगवे, कारण पडियां ताहि ॥१५॥
 द्वितीय उद्देशे जे विषै, बृहत्कल्प रै मांहि ।
 जल वा मद ना घट तिहां, रहिवं कल्पे नांहि ॥१६॥
 अन्य स्थान न मिलै कदा, तो इक वै निशि जाण ।
 रहिवं कल्पे प्रभू कछो, ए स्याद्वाद पहिचाण ॥१७॥
 तिषहिज उद्देशे आखियो, जे आखौ निशि मांहि ।
 दौपक वा अग्नि बलै, तिहां नहिं रहिवं ताहि ॥१८॥
 जो अन्य जागां नहिं मिलै, तो इक वै निशि तिष स्थान
 रहिवं कल्पे प्रभू कछो, ए स्याद्वाद वच जान ॥१९॥
 मुनि जे सङ्घट्टो स्त्री तणो, करिवो बरज्युं स्वाम ।
 सोलमां उत्तराध्ययन में, बलि बहु सुत्रे ताम ॥२०॥
 बृहत्कल्प छट्टै कछुं, नदी प्रमुख थी वार ।
 अवभा प्रति काठे मुनौ, ए स्याद्वाद मत सार ॥२१॥
 गृहस्थ पुरुष वा स्त्री भणौ, नदी प्रमुख थी जोय ।
 काठे मुनि वच एह्वं, स्याद्वाद नहिं कोय ॥२२॥

दशवैकालिक देखल्या, तूर्य अध्ययन मभार ।
 सचित उदक नहिं सङ्घटे, ए जिन आज्ञा सार ॥२३॥
 ब्रह्मत्करुप तीजे कच्छं, विहार कारण थो जोय ।
 नदी उतरणी प्रभू कहौ, ए स्याद्वाद बच होय ॥२४॥
 मरणान्त कष्टे मुनि भणौ, मचितोदक अवलोय ।
 भोगवणूं प्रभू एहवूं, स्याद्वाद नहिं होय ॥२५॥
 उत्तराध्ययन कथा विषै, पगौषह द्वितीय प्रसिद्ध ।
 मर्णान्त कष्टे क्षुलक शिष्य, सचितोदक नहिं पिद्ध ॥२६॥
 शत अष्टादश भगवती, दशम उदेशै देख ।
 पूछी सोमिल प्रभू प्रति, जे स्यु छो तुम्ह एक ॥२७॥
 तथा तुम्हे स्यूं दोय छो, वा अक्षय तुम्ह होय ।
 फुन स्यु अव्यय छो तुम्हें, अवस्थित तुम्ह जोय ॥२८॥
 कै तुम्ह अनेक भूत फुन, भाव भविक अवधार ।
 वीर भणी षट प्रश्न ए, सोमिल पूछ्या सार ॥२९॥
 वृत्तिकार कच्छी तब प्रभू स्याद्वाद प्रति तरय ।
 सर्व दोष गोचर रहित, अविलम्बी कहौ बाय ॥३०॥
 इक पिण हूं कूं सोमिला, यावत बली अनेक ।
 भूत भाव भावी अपि, हूं कूं इम कच्छुं पेख ॥३१॥
 किण अर्थे प्रभु इम कच्छुं, जाव भविक हूं सोय ।
 प्रभू कहै द्रव्यार्थ करौ, इक पिण कूं अवलोय ॥३२॥

ज्ञान दर्शन करि दीय हूँ, प्रदेशार्थ करि ताय ।
 अक्षय हूँ अव्यय अपि, अवस्थित पिण धाय ॥३३॥
 अनेक भूत भावी अपि, हूँ उपयोग करेह ।
 न्याय सहित उत्तर हूँ, स्याद्वाद बच एह ॥३४॥
 इमज थावरचा सुक प्रति, ज्ञाता पञ्चम् लेह ।
 इमज पाण्डुं सोमिल प्रति, पुष्पिका विषै कहेह ॥३५॥
 सहु दोषण करि रहित छै, स्याद्वाद बच एह ।
 पिण दोषण कर सहित बच, स्याद्वाद न कहेह ॥३६॥
 पूर्वापर अविरोध बच, स्याद्वाद मति मांहि ।
 पिण पूर्वापर विरोध बच, स्याद्वाद बच नाहिं ॥३७॥
 इत्यादिक प्रभू आखिया, किण ही प्रकार करेह ।
 नित्य अनित्यादिक जिषै, स्याद्वाद बच तेह ॥३८॥
 पिण ज्यो किण ही प्रकार करि, कुशील में नहिं धर्म ।
 बलि नहिं किण ही प्रकार करि, शील विषै अघ कर्म ॥३९॥
 अज हिन्सादिक में नहीं, किण ही प्रकारे धर्म ।
 किण ही प्रकार बंधे नहीं, सम्बर थी अघ कर्म ॥४०॥
 किण ही प्रकार हुवे नहीं, सावद्य मांहीं धर्म ।
 किण ही प्रकार बंधे नहीं, निरवद्य थी अघ कर्म ॥४१॥
 किण ही प्रकार हुवे नहीं, जिन आज्ञा बिन धर्म ।
 किण ही प्रकार नहीं बंधे, आज्ञा थी अघ कर्म ॥४२॥

॥ इति स्याद्वाद अधिकार ॥

॥ अथ १७ मूं विषंवाद अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै विषंवाद मत, प्रभू नो समय विषेह ।
 किष सूत्रे वच जे कछुं, किहां अन्यथा तेह ॥ १ ॥
 किष सूत्रे वच जे कछुं, ते वच अन्य सूत्रेह ।
 विकटै ते विषंवाद कहै, उत्तर तास सुणेह ॥ २ ॥
 सखर सप्त भद्रौ कही, जिन वाणी मुखदाय ।
 सप्त नये करि सत्य वच, तसु विषंवाद न कहाय ॥ ३ ॥
 किष ही सूत्र विषे प्रभू, आख्या वयष विख्यात ।
 विगटै जे अन्य सूत्र थौ, ते विषंवाद वच यात ॥ ४ ॥
 विषंवाद वच एह तो, प्रभू नो नहिं छै कोय ।
 वच केवल ज्ञानी तणो, व्यभचारिक नहीं कोय ॥ ५ ॥
 विषंवाद जोगे करी, अशुभ नाम कर्म बंध ।
 अष्टम शतके भगवती, नवमें उद्देशे सन्ध ॥ ६ ॥
 विषंवाद ए अशुभ छै, तिण थौ अशुभज बंध ।
 तो किम हुवै प्रभूजी तणो, विषंवाद वच मन्द ॥ ७ ॥
 अविषंवाद योगे करी, नाम कर्म शुभ बंध ।
 अष्टम शतके भगवती, नवम उद्देशे संध ॥ ८ ॥
 दशमा अङ्ग में देखलो, सप्तमध्यमे मांहि ।
 सत्यवादी छै तेह नुं, विषंवाद वच नांहि ॥ ९ ॥

सत्यवादी ससार का, तसु विषंवाद वच नांहि ।
 तो प्रभुजी ना वयष ते, विषंवाद किम थाय ॥१०॥
 पूर्वापर अविरोह वच, प्रभु ना समवायङ्ग ।
 वच अतिशय पैतौस में, अतिशय नत्रम सुचङ्ग ॥११॥
 उत्सर्ग में आज्ञा किहां, किहां आज्ञा अपवाद ।
 इकासू इक विगटे न ते, पिण नहिं छे विषंवाद ॥१२॥
 उत्सर्गे आज्ञा नथी, ते कार्य्य नी जान ।
 अपवादे आज्ञा कही, ते विषंवाद मत मान ॥१३॥
 विषंवाद रे ऊपरै, कहिये हेतु मार ।
 निपुण न्याय वच सांभली, द्वेष हिये मत धार ॥१४॥
 वार मास है वर्ष ना, तेह विषे सुविधान ।
 अधिक धर्म करिवा तर्ण, मास भाद्रवो जान ॥१५॥
 ते विषे पष प्रगठ है, अधिक धर्म ना दीह ।
 पर्व पर्युषण प्रसिद्ध ही, पोसह प्रमुख सुलौह ॥१६॥
 ते पर्युषण ने विषे, कल्प सूत्र व्याख्यान ।
 तेह विषे वतका कही, सुणज्यो सुगुण सुजान ॥१७॥
 प्रभु दशमासुर लोक थी, भव स्थित भोगव तेह ।
 अविद्यां पहलां ने पछे, जाणयुं अवधि करेह ॥१८॥
 अवन समय नवि जाणिये, सूक्ष्म काल विशेष ।
 इमहिज पनरमध्यम में, द्वितीय आचारङ्ग लेख ॥१९॥

कल्प अने धुर अङ्ग में, चवन काल बिहु' धार ।
 एक सरीषा आखिया, हिव साहरण विचार ॥२०॥
 गर्भ साहरण कियो तिहां, कल्प सूत्र में ख्यात ।
 संहरियां पहिलां पछे, जाण्युं श्री जगनाथ ॥२१॥
 संहरता वेलां प्रभू, वर्तमान कालिह ।
 जाण्युं नहिं एहवुं कछुं, कल्प सूत्र वच एह ॥२२॥
 आचारङ्ग पन्नरमें कछो, साहरण प्रथम पश्चात ।
 बलि साहरतां बार पिण, जाण्युं श्री जगनाथ ॥२३॥
 चवन काल तो समय दूक, कृद्मस्थ नो उपयोग ।
 असंख्य समय नू ते भयो, चवन न जाण्युं जोग ॥२४॥
 सुर कार्य साहरण ते, समय असंख्य मुजाण ।
 तिण सं साहरतां प्रभू, जाण्युं अवधि प्रमाण ॥२५॥
 साहरतां जाण्युं नही, कल्प सूत्र में ख्यात ।
 साहरतां जाण्युं कछुं, धुर अङ्गे जगनाथ ॥२६॥
 कल्प सूत्र धुर अंग में, ए बिहु' वच आख्यात ।
 वच सांचो भूठो किसो, देखो तज पखपात ॥२७॥
 वीर प्रभू तो एक छे, जाण्युं धुर अंग ख्यात ।
 नवि जाण्युं कल्पे कछुं, बिहु' साचां किम-थात ॥२८॥
 उभय सांहिलो एक तो, मित्थ्या वचन विशेष ।
 देखोजी देखो तुम्हे, देखो तज मत-टेक ॥२९॥

जाण्यां धुर अङ्गे कच्छा, तेह सत्य वच जाण ।
 नत्रि जाण्युं कल्पे कच्छुं, ते वयण अप्रमाण ॥३०॥
 वृहत्कल्प रे पञ्चमे, तनु-कारण थौ ताय ।
 सूर्यं जगो जाणि ने, आहार लियो मुनिराय ॥३१॥
 भोगवतां शङ्का पडी, रवि जगो के नाहिं ।
 अथवा सूर्य आंधम्यो, तथा आंधम्यो नाहिं ॥३२॥
 शङ्क सहित इम भोगव्यां, रात्रि भोजन पिण्ड ।
 भोगवतो पामै तिको, गुरु चौमासी दण्ड ॥३३॥
 इमहिज कारण बिन रवि, जगो जाणौ ताय ।
 आहार यच्चो पिण शङ्क सहित, भोगवियां दण्ड आय ३४
 दशम उद्देश निशीथ में, रात्रि भोजन ताय । --
 कारण सं पिण भोगव्यां, दण्ड चौमासो आय ॥३५॥
 निशीथ उद्देशे बारमे, चूर्णं विषे अवलोय ।
 निशि भोजन कारण थकौ, भोगवणो कच्छो सोय ॥३६॥
 इमहिज वृहत्कल्प तणी, चूर्णं वृत्ति विषेह ।
 रोगादिक कारण मुनी, निशि भोजन जैमेह ॥३७॥
 सूत्रे निशि भोजन प्रति, वर्ज्यो ते तो शुद्ध ।
 चूर्णं विषे ए स्थापियो, तेह प्रत्यक्ष विरुद्ध ॥३८॥
 निशीथ उद्देशे पद्मरमे, आखी श्री जिन वाण ।
 सचित अभव चूसै मुनि, दण्ड चौमासो जाण ॥३९॥

आख्यो चूर्णि में तिहां, शिष्य अपगिडत सोय ।
 रोग मिटावा निमित्तें, वैद्य कथन थी जोय ॥४०॥
 अथवा मारग चालतां, उखोदरी छै तेह ।
 पणसरतै जे भोगवै, विरुद्ध कहिजे जेह ॥४१॥
 सूत्रे वरज्यो सचित अम्ब, चूर्णिकार फुन तेह ।
 कारण पडियां चूंसवूं, कछुं विरुद्ध वच एह ॥४२॥
 सचित रुख मुनि जो चटे, तो चौमासिक दखड ।
 निशीथ उहेशे बारमें, श्री जिन वयन सुमखड ॥४३॥
 सूत्र निशीथ तणी जिका, चूर्णि विषे द्रम वाय ।
 खान प्रमुख ना भय हरन, दखड ग्रहै मुनिराय ॥४४॥
 प्रथम अचित दांडो ग्रहै, पछे मिश्र परितेन ।
 प्रथम परित यावत पछे, अनन्त काय नुं जेण ॥४५॥
 रुख ऊपर मुनि नवि चटे, ए जिन आज्ञा शुद्ध ।
 चूर्णिकार कछुं सचित दखड, ग्रहै ते वयन विरुद्ध ॥४६॥
 ऋषभ भरथ फुन बाहुबलि, ब्राह्मी सुन्दरी बेह ।
 लख चौरासी पूर्व नूं, आयु तूर्य अङ्गेह ॥४७॥
 ऋष मखडल मांहीं कछुं, ऋषभ देव भगवान ।
 भरत बिना बलि ऋषमं ना, पूत्र निन्नाणुं जान ॥४८॥
 भरत तणा बलि अष्ट सुत, अष्टोतर सौ एह ।
 एक समय सीमा तिक्को, विरुद्ध वचन छै जेह ॥४९॥

ऋषभ बाहुबलि आउषो, पूर्व चौगसी लक्ष ।
 किम तसु शिव गति इक समय, पेखो तज मतपक्ष ॥५०॥
 शत चौदसमे भगवती, मङ्गम उद्देश विषेह ।
 वृत्ति विषै आख्यो तिको, सांभल जो चित देह ॥५१॥
 पन्दरसौ प्रतिबोधिया, तापस गौतम खाम ।
 प्रभू पै आवत प्रामिया, केवल युग अभिराम ॥५२॥
 भौ साधो! वन्दो तुम्हे, श्री जिन प्रति शिरनाम ।
 इम गौतम आखे छतै, जिन भाषै गुण धाम ॥५३॥
 ए केवल ज्ञानी तथी, हे गौतम ! मुनिराय ।
 लागे तुम्ह आशातना, वृत्ति विषे ए वाय ॥५४॥
 दशवैकालिक सूत्र मे, नवसें ध्यान विषेह ।
 प्रथम उद्देशै ज्ञारमी, गाथा में इम लेह ॥५५॥
 विप्र अग्निहोत्री तिको, अग्नि प्रते शिरनाम ।
 आहुती पढ़ मन्त्र पढ़, घृतादि सीचै ताम ॥५६॥
 आचार्य प्रते इह विधे, वारुं शिष्य विनीत ।
 वर अनन्त ज्ञानी छतो, आराधै इह रौत ॥५७॥
 हरौमद्र सूर करी, वृत्ति विषै इम उक्ति ।
 शिष्य केवल ज्ञानी छतो, करै गुरुनी भक्ति ॥५८॥
 कछु वृत्ति में जिन प्रते, वन्दो गौतम ख्यात ।
 तसु प्रभू कही आशातना, केम मिलै ए बात ॥५९॥

गुरु वन्दे शिष्य कीवली, सूत्र बिधैः इम ख्यातं ।
 तो प्रभू वन्दो इम कक्षां, आशातन किम थांत ॥६०॥
 सचित आहार मुनि ने अभक्त, पञ्चम अङ्ग प्रबन्ध ।
 ज्ञाता अध्ययने पञ्च मे, निरावणिया श्रुतस्कन्ध ॥६१॥
 द्वितीय आचारङ्ग लागतां, आधाकरमौ आहार ।
 अप्राशुक पिण वृत्ति मे, भोगवणुं कक्षुं धार ॥६२॥
 कक्षी अफामु अभख जिन, वृत्ति विषे फुन तेह ।
 कक्षु भोगवणो कारणै, विरुद्ध बचन के एह ॥६३॥
 शत पणवैसम भगवती, कट्टा उद्देशा मांहि ।
 बकुश उत्तर गुण तणो, पडिसेवी कक्षुं ताहि ॥६४॥
 तिणज उद्देशे वृत्ति में, बकुश प्रति इम ख्यातं ।
 मूल उत्तर पडिसेविये, तेह विरुद्ध सञ्जात ॥६५॥
 ठाणा अङ्ग ठाणै चतुर्थ, प्रथम उद्देशे पेख ।
 सनत कुमार तणो कहौ, अन्त क्रिया सुविशेष ॥६६॥
 आवश्यक नियुक्ति में, उत्तराध्ययन वृत्ति मांहि ।
 तीजै स्वर्ग गयुं कक्षी, मिलै नहिं ए वाय ॥६७॥
 अष्टम शतकी भगवति, द्वितिय उद्देशा मांहि ।
 एकीन्द्री निश्चय करी, कक्षा अज्ञानी ताहि ॥६८॥
 कर्मग्रन्थ में देखल्यो, एकीन्द्रौ रै मांहि ।
 वे गुणठांणा आखिया, तेह विरुद्ध कहाहि ॥६९॥

शतक सात में भगवतौ, कट्टे उद्देश सम्बेद ।
 कट्टे आर वेताब्द बिन, सहु गिर हुस्ये विवेद ॥७०॥
 प्रकरण में शत्रुघ्न गिरि, सप्त हस्त परिमाण ।
 रहिस्ये आख्यो तेह वच, प्रत्यक्ष विरुद्ध पिच्छाण ॥७१॥
 अष्टमः शतके भगवतौ, नवम उद्देश विषेह ।
 मायां गूढ माया करै, वचन अलोक वदेह ॥७२॥
 कूड़ा तोला ने बलि, कूड़ा माप करेह ।
 ए च्याहूँ प्रकार करि, तीरि आयु बन्वेह ॥७३॥
 ए चिहुँ कारण अशुभ थी, तीर्यच आयु बन्व ।
 तिण कारण तिर्यच्च नूँ, आयु पाप कथिन्व ॥७४॥
 कर्ममग्न्य मांही कछो, तिर्यच्च आयु पुन्य ।
 ते माटे ए सूत्र थी, वचन विरुद्ध जबुन्य ॥७५॥
 पञ्च स्थावर विक्लेन्द्रिया, ए पिण तिर्यच्च जाण ।
 तास आउषो पुन्य कहै, प्रत्यक्ष विरुद्ध पिच्छाण ॥७६॥
 जघन्य आउषा नुं धणो, तिर्यच्च मरि ने तेह ।
 जो तिर्यच्च में ऊपजै, कोडि पूर्व स्थित कीह ॥७७॥
 जघन्य आयु पञ्च तिरि तणा, माठा अध्यवसाय ।
 कछा भगवतौ ने विषै, शतक चौबीसमा मांही ॥७८॥
 अपसत्थ अध्यवसाय सूँ, कोडि पूर्व तिरि होय ।
 तिण सूँ ए तिरौ आउषो, पाप क्लंत अवलोय ॥७९॥

कुल चाण्डाली ऊपनो, हरकेशी मुनिराय ।
 उत्तराध्ययन विषै कच्छुं, बारमा अध्ययने मांय ॥८०॥
 कर्मग्रन्थ मांहौ कच्छो, छट्टे गुणठाणैह ।
 नीच गीत नो उदय नहीं, न्याय मिलै किम तेह ॥८१॥
 अष्टम शतके भगवती, दशम उद्देशै इष्ट ।
 जघन्य ज्ञान आराधना, सत अठ भव उत्कृष्ट ॥८२॥
 वृत्तिकार कच्छुं एह विध, चरित सहित जे ज्ञान ।
 तेहनौ जघन्य आराधना, तसु भव ए पहिचान ॥८३॥
 बीजा समदृष्टि तणा, देश ब्रती ना जेह ।
 भव उत्कृष्ट असंख्य है, न्याय बचन है एह ॥८४॥
 चन्दा विजय ग्रन्थ में, आराधक ना सीय ।
 आख्या भव उत्कृष्ट वण, एह मिलै नहिं कोय ॥८५॥
 अष्टम अङ्गे नेम प्रभू, कृष्ण भणौ आख्यात ।
 तूं तीजौ पृथिवी विषै, जास्ये स्थित दधि सात ॥८६॥
 तीजौ थौ अन्तर रहित, निकली सय बारैह ।
 असम नाम द्वादशम् जिन, यास्ये महा गुण तेह ॥८७॥
 दूहां आख्यो अन्तर रहित, तृतीय नरक थौ ताहि ।
 निकली तीर्थङ्कर हुस्ये, तिण सुं बिच भव नांहि ॥८८॥
 प्रकर्ण रत्न संचय विषै, आख्यो कृष्ण मुरार ।
 बालू प्रभा थौ नीकली, नर भव लही उदार ॥८९॥

ब्रह्म कल्प मे सुर यद्, इत्ये तौर्यङ्कर देव ।
 इम आख्या तसु पञ्च भव, कीम मिले ए भेव ॥६०॥
 इत्यादिक जे सूत्र थौ, वृत्ति प्रमुख रै मांहि ।
 विरुद्ध बचन छै ते प्रते, किम मानिजे ताहि । ६१॥
 द्वितीय आचाराङ्ग ने विषै, दशम उद्देशे मांय ।
 मंस मच्छ कञ्चो पाठ में, तास अर्थ कहिवाय ॥६२॥
 टबो पाश्र्व चन्द्र सूरि कृत, तेह विषै इम ख्यात ।
 वृत्तिकार ए मांस मच्छ, लोक प्रसिद्ध आख्यात ॥६३॥
 विरुद्ध सूत्र सुं ते भणौ, न संभाविये ए अर्थ ।
 बलि गीतार्थ जे वदै, प्रमाण छै ज तदर्थ ॥६४॥
 अस्थी शब्दै सूत्र में, कुलिया छै बहु स्थान ।
 एगट्टिया हरडे कहुं, सूत्र पन्नवणा जान ॥६५॥
 कञ्चा दाडिम प्रते बहुट्टिया, एहवा शब्द प्रभृत ।
 अस्थि शब्द कुलिया कञ्चा, तोमंस शब्द गिर हुन्त ॥६६॥
 एहवो संभाविये अछि, ते माटे अवलोक्य ।
 बनस्पतिज विशेष छै, मंस मच्छ ए जीय ॥६७॥
 भाव उवाड़े मंस मच्छ, चारित्रया ने जेह ।
 कारण थौ पिण आहारवो, योग्य नथी दीसिह ॥६८॥
 बलौ सूत्र में साधु ने, उत्सर्ग भाव आख्यात ।
 वृत्ति विषै अपवाद ए, भाव तणो अवदात ॥६९॥

तिण जे विशेष सूत्र नो, अथे उत्सर्ग पणेह ।
 जेम अछे तिम हिज मिलै. इम कछु टबा विषेह ॥१००॥
 टबाकार पिण इम कछु, सूत्र थकी विगटेह ।
 अथे प्रमाण तिको नहीं, तो मुझ दूषन किम देह ॥१०१॥
 ॥ इति विषवाद् अधिकार ॥

॥ अथ अठारमूं भगवती में निर्युक्ति
 कही तथा पन्नवणा सामाचार्य कृत
 कहै तसुत्तर अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै निर्युक्ति कही, शत पणबीसमा माहिं ।
 तृतीय उदेशे भगवती, तुम्हे न मानूं काहिं ॥१॥
 तसु पूछीजे निर्युक्ति, केहनौ क्रीधी जेह ।
 भद्रबाहु कृता तब कहै, चौद पूर्वधर तेह ॥ २ ॥
 तसु कहिये जे तुम्ह कही, भद्रबाहु कृत एह ।
 तो भगवती सूत्र विषै तिका, केम कही है तेह ॥ ३ ॥
 वीर छातां ए भगवती, तेह विषै अवधार ।
 किम कहि भद्रबाहु कृता, देखी न्याय विचार ॥ ४ ॥
 भद्रबाहु मोड़ा हुआ, पञ्चम अर्क मुजात ।
 चौथ अरके भगवती, तेह विषै किम थात ॥ ५ ॥

ग्रामो नास्ति सीम कुतः, भद्रवाहु अणगार ।
 नथो हुन्ता तो तसु कृता, किम निर्युक्ति तिंवार ॥६॥,
 सूत्र भगवतो ते विषै, कश्चो निर्युक्ति जेह ।
 तेह मानवा योग अम्है, पिण हिवडां नहिं तेह ॥ ७ ॥
 तव कहे पट तेबीस में, सामाचार्य्य ताहि ।
 सूत्र पन्नवणा तिण कख्यं, कच्चो पीठका मांहि ॥ ८ ॥
 गणधर कृत ते भगवतो, तेह विषै सुविचार ।
 नाम पन्नवणा नो कच्चो, ते किण विध अवधार ॥ ९ ॥
 तसु कहिये ते पन्नवणा, सामाचार्य्य जोय ।
 मोटा नी छोटी करी, एहवुं दीसै सोय ॥१०॥
 पिण मूल थकी कौधो नवी इसो सम्भवे नाहिं ।
 दश पूर्वधर ते नहीं, तसु कीध्री किम थाय ॥ ११ ॥
 सम्पूर्ण दश पूर्व धर, चौदश पूर्व धार ।
 तास रचित आगम हुवै, वारुं न्याय विचार ॥१२॥
 हेमि नाम माला विषै, धुर काण्डे अवदात ।
 सुहस्ताद्या वज्रान्ता, दश पूर्व धर आख्यात ॥१३॥
 सुहस्त से लेई करी, वज्र स्वामी लग जोय ।
 दश पूर्व धर दाखिया, अधिक पूर्व नहिं होय ॥१४॥
 स्वामी वज्र थयां पछै, बहु वर्षे सुविमास ।
 सामाचार्य्य तो थया, दश पूर्व नहिं जास ॥१५॥

तसु कृत आगम किम हुवै, न्याय नेत्र करि जोय ।
 सूत्र बृहत् नो लघु करै, तसु कारण नहिं कोय ॥१६॥
 इमहिज सूत्र निशोथ प्रति, गणी विसाह विचार ।
 मोटा नूं छोटा कखुं, एहवुं दीसै सार ॥१७॥
 वलि कहै दशवैकालिक पिण, कखुं सौजम्भव एह ।
 तास नाम नन्दी विषै, किम आख्यो गुण गेह ॥१८॥
 गणधर कृत जे भगवतौ, तास विषै सुविचार ।
 नाम नन्दी नूं पिण कछो, हिव तसु उत्तर सार ॥१९॥
 जेम पन्नवणा तिमज ए, बृहत् थकौ लघु कौध ।
 पिण मूल थकौ कौधो नवी, नथी सम्भवै सौध ॥२०॥
 चौदश पूर्व मांहि थी, अर्थ अनोपम सार ।
 दशवैकालिक बृहत् पिण, पूर्बे रचित उदार ॥२१॥
 ते मोटा नूं ए लघु मनक पुत्र अर्थेह ।
 सूत्र सौजम्भव पिण कखुं, न्याय सम्भवै एह ॥२२॥

॥ इति निर्युक्ति अधिकार ॥

॥ अथ १६ मूं नन्दी थिरावली अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै नन्दी तणी, थिरावली छे तेह ।
 गणधर कृत के अन्य कृत, हिव तसु उत्तर देह ॥ १ ॥

नन्दी पौठका ने बिपै, सुधर्म जरबू खाम ।
 प्रभव सौजभव आदि त्यां, पाठ वन्दे बहु ठाम ॥ २ ॥
 अनागत जिन तूर्य अङ्ग, वन्दे पाठ न ख्यात ।
 तेह अनागत मुनि भणौ, किम वंदे गणीनाथ ॥ ३ ॥
 तिण सूं एह थिरावली, देव वाचक कहिवायं ।
 पिण गणधर कृत ए नहीं, निर्मल विचारो न्याय ॥ ४ ॥
 थिरावली ने अन्त कछुं, अन्य पिण सहु भगवन्त ।
 प्रणमी ज्ञान प्ररुपणा, कहस्युं तास उदन्त ॥ ५ ॥
 नन्दी सूत्र नी वृत्ति में, आख्यो इम अवदात ।
 दुष्य गणौ नो शिष्य जे, देव वाचक इम खात ॥ ६ ॥
 इण लेखे नन्दी सूत्र, दुष्य गणौ शिष्य देव ।
 मोटा नूं छोटी कखुं, ते जाणै जिन भेव ॥ ७ ॥
 कथा तणौ गाथा जिषी, नन्दी सूत्र रे माहि ।
 देव वाचक कीधी हुवै, एहवुं दीसै न्याय ॥ ८ ॥
 दश चौदश पूर्व धरा, आगम रचै उदार ।
 ते पिण जिननौ साख धौ, विमल न्याय सुविचार ॥ ९ ॥
 पिण जिननौ के साख विन, आगम सूत्र अमोल ।
 छद्मस्य कृत किण विध हुवै, ताजु न्याय सूं तोल ॥ १० ॥
 चौनाणौ गोयम गणौ, चौदश पूर्व धार ।
 ते पिण वचन खलाविया, सप्तम अङ्ग मभार ॥ ११ ॥

दृष्टिवाद तणो धणो, बचन खलायां ताहि ।
 अन्य मुनी ने हंसवो नहीं, दशवैकालिक मांहि ॥१२॥
 पञ्चम अङ्ग तृतीय शत, प्रथम उद्देशे ताय ।
 वैक्रिय शक्ति सुर तणो, अग्नि भूति कहिवाय ॥१३॥
 वाय भूति अङ्गी नहीं, प्रतीत नाणो तेह
 प्रभू ने पूछ खमाविया, द्वादशाङ्ग धर एह ॥१॥
 ठाणा अङ्ग ठाणै सातमें, हिन्सा भूठ अदत ।
 शब्द रूप गन्ध फर्श रस, आखादौ हुवै रक्त ॥१५॥
 बलि पूजा सत्कार प्रति, पामो ने इर्षाय ।
 सावद्य दे इह विध कही तास सेववुं थाय ॥१६॥
 जेम प्ररूपै ती विषै, नथो पानवुं होय ।
 सप्त प्रकारे जाणवुं छद्मस्थ प्रति अवलौय ॥१७॥
 चौद पूर्व धर पिण करै, पडिक्कमणो विहुं काल ।
 खलता खामी नुं तिको, देखो न्याय निहाल ॥१८॥
 तिण मुं चौदश पूर्व धर, बलि दश पूरव धार ।
 जिन साखे आगम रचे, इसी सम्भवै सार ॥१९॥
 इमहिज प्रत्येक बुद्धि पिण, जिन साखै सुविचार ।
 आगम रचवुं सम्भवै, असल न्याय अवधार ॥२०॥
 इम मुक्क भ्यासै तिम कच्चुं अर्थ अनूप उदार ।
 फुन केवलजानी कहै, तेहिज छै तन्त सार ॥२१॥

जद कहै चौदश पूर्व धर, भद्रबाहु गुन गेह ।
 नियुक्ति तेहनी करी, किम मानं नवि तेह ॥२३॥
 हिव तेहनी उत्तर सुनो, तेह नियुक्ति मांहि ।
 ह्वं वादुं वज्र स्वामी प्रते, एम कछुं है ताहि ॥२३॥
 जो भद्रबाहु कृत ए हुवै, तो वज्र स्वामी प्रति जेह ।
 नमस्कार किय विध करै, देखोजी चित देह ॥२४॥
 बलि नियुक्ति मे कछो, बाल्य अबस्था मांहि ।
 मेह वर्षतां देवता, आहार निमन्त्रो ताहि ॥२५॥
 पिण ते आहार बञ्छो नहीं, सीख्यो विनय आचार ।
 एहवा वज्र स्वामी प्रते, नमस्कार करुं सार ॥२६॥
 नगर उज्जैणी ने विषै, जम्बक नामे देव ।
 करी परीक्षा ने पछै, स्तव्यो तास स्वयमेव ॥२७॥
 लब्धि अक्षीण माह्यसौ, तेह तणो धरणहार ।
 सौह गिरी प्रशंसियो, वन्दू ते अणगार ॥२८॥
 पदासारणौ लब्धि जसु, दश पुर नगर मभार ।
 महिमा कीधौ देवता, करुं तासु नमस्कार ॥२९॥
 जेह कुसुमपुर ने विषै, धनो शेठ जिंवार ।
 धन फुन कन्याह्वं करी, निमिन्त्रियो धर प्यार ॥३०॥
 नव जीवन वय ने विषै, वज्र ऋषि गणधार ।
 नमस्कार तेहने करुं, इम कछो नियुक्ति मभार ॥३१॥

भद्रबाहु स्वामी पकै, बहु वर्षे अवधार ।
 वच स्वामी मोड़ा हुआ, देखो न्याय विचार ॥३२॥
 निर्मित्रियो कन्या धने, एम इहां आख्यात ।
 पिण निमन्त्रसी इम नथी कछो, देखो मुगण मुजात ॥३३॥
 महिमा कीधी देवता, इम इहां आख्यो सोय ।
 सुर करस्ये महिमा इसो, वचन कछो नहौ कोय ॥३४॥
 तिण कारण ए निर्युक्ति, भद्रबाहु कृत नाहि ।
 बलि ए निर्युक्ति विषे, वचन बंहु विरुद्ध दिखाहि ॥३५॥
 उववाई में आखियो, उत्कृष्टी अवगाह ।
 धनुष पंचसय नौ तिक्को, सोभै ए जिन वाय ॥३६॥
 आवश्यक निर्युक्ति में, मोरादेवी माय ।
 सवा पांचसौ धनुष तनु, ए वच केम मिलाय ॥३७॥
 ठाणाङ्ग तूर्ये ठाणा विषे प्रथम उदेशा मांहि ।
 सनत् कुमार चक्रौ तणौ, अन्त क्रिया कहौ ताहि ॥३८॥
 आवश्यक निर्युक्ति में, चक्रौ सनत् कुमार ।
 तीजै सुरलोके गयो, ए वच विरुद्ध विचार ॥३९॥
 ऋषभ बाहुबल आउषो, पूर्व चौरासी लक्ष ।
 समवायङ्ग मे आखियो, पाठ मांहि प्रत्यक्ष ॥४०॥
 आवश्यक निर्युक्ति में, ऋषभ बाहुबल राय ।
 एक समय शिवगत लहौ, केम मिलै ए वाय ॥४१॥

ज्ञाताध्यने आठमे मल्लीनाथ जिनराय ॥
 पोह सुद इगारस दिने, चारित्र केवल पाय ॥४२॥
 आवश्यक निर्युक्ति मे, चारित्र केवल नाण ।
 मृगशिर सुद एकादशौ, विरुद्ध बचन ए जान ॥४३॥
 नेऊ गणधर अजित ना, समवायङ्ग विषेह ।
 आवश्यक नियुक्ति में, कच्चा प्रचाणूं जेह ।
 तूर्य अङ्ग जिन सुविध ना, असौ अरु षट गणधार ।
 आवश्यक निर्युक्ति में अठ्यासौ अधिकार ॥४५॥
 तूर्य अङ्ग शीतल तणा, तीन असौ सुविचार ।
 आवश्यक निर्युक्ति मे, एक असौ गणधार ॥४६॥
 तूर्य अङ्ग बासट कच्चा, बास पूज्य गणधार ।
 आवश्यक निर्युक्ति मे, छ्वासट्ट कच्चा तिंवार ॥४७॥
 गणधर अनन्त प्रभू तणा, सूत्रे चौपन जास ।
 आवश्यक निर्युक्ति में, आख्या छै पच्चास ॥४८॥
 गणधर धर्म प्रभू तणा, सूत्रे अड़तालीस ।
 आवश्यक नियुक्ति मे तयांलीस फुन दीस ॥४९॥
 नेऊ गणधर शान्ति ना, तूर्य अङ्ग मुजगीस ।
 आवश्यक निर्युक्ति में, आख्या छै षट तीस ॥५०॥
 पार्श्व प्रभू ना तूर्य अंग, गणधर अष्ट उदार ।
 आवश्यक निर्युक्ति में, आख्या दश गणधार ॥५१॥

आवश्यक निर्युक्ति मुनि, कृत पञ्चक में काल ।
 पञ्च डाम ना पूतला, करवा कच्चा जुन्हाल ॥५२॥
 आवश्यक निर्युक्ति में, वतिका विरुद्ध अनिक ।
 चतुर हुवै ते ओलखी, कांडे मत री टेक ॥५३॥
 तिण सुं चौदश पूर्व धर, भद्रवाहु अणगार ।
 तेहनी कीधी किम हुवै, ए निर्युक्ति विचार ॥५४॥
 आवश्यक निर्युक्ति में, कारण थी अणगार ।
 ग्रहण करै षट काय ने, कहिये ते अधिकार ॥५५॥
 शर्पादिक डसियां कृतां, पृथ्वीकाय प्रतिह ।
 प्रथम अचित मांगी लिये, ग्रहस्थ समीपै जेह ॥५६॥
 जो मांगी लाधे नहीं, तो पोते आणेह ।
 कदा अचित लाधे नहीं, तो मिश्र पृथ्वी मांगेह ॥५७॥
 मिश्र पृथ्वी लाधे नहीं, तो पोतैहिज जाय ।
 अष्टव्यादिक थी मिश्र प्रति, ले आवै सुनिराय ॥५८॥
 मिश्र कदा लाधे नहीं, मांगे जई ग्रहस्थी पास ।
 सचित पृथ्वीकाय प्रति, मांगी ल्यावे तास ॥५९॥
 जो मांगी सचित मिलै नहीं, तो पोतैहिज जाय ।
 खान प्रमुख आगर यकी, ले आवै सुनिराय ॥६०॥
 जेह काम आणी तिको, कार्य्य करी ने ताय ।
 पृथ्वीकाय जे ऊवरै, ते परिट्टवै जाय ॥६१॥

इम कारण थी धुर अचित, मिश्र सचित अपकाय ।
 मुनि दातार कने जई, मांगी ल्यावै ताय ॥६२॥
 जो मांग्यो जल ना मिलै, तो पोतैहिज जाय ।
 नदी तलावादिक थकी, आप आथै मुनिराय ॥६३॥
 शूलादिक कारण पद्यां, इमहिज तेजकाय ।
 अचित मिश्र फुन सचित प्रति, मांगै ग्रही पै जाय ॥६४॥
 जो मांगी अग्नि मिलै नहीं, तो पोतैहिज जाय ।
 कुम्भकारादिक स्थान थी, लेइ आवै मुनिराय ॥६५॥
 शूलादिक कारण पद्यां, इमहिज बाजकाय ।
 अचित मिश्र फुन सचित प्रति, ग्रहण करै ऋषि ताय ॥६६॥
 इमहिज वनस्पति अचित, मिश्र फुन सचित मुनिराय
 गाढा गाढ कारण-पद्यां, ग्रहै मूलादिक ताय ॥६७॥
 वस बेन्द्रियादिक प्रति, तनु फोडादिक होय ।
 ताम मिटावै मुनि ग्रहै, जलोक्त आदि मुजोय ॥६८॥
 आवश्यक निर्युक्ति में, परिट्टावणिया समितैह ।
 आखी छै ए वारता, किम मानौजे एह ॥६९॥

॥ इति थिरावली अधिकार ॥

॥ अथ बीसमूं नदी अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै नदी उतरै, मुनि ईर्ष्या समितेह ।
 तिहां जिन आज्ञा ते भणौ, हिंसक तसु न कहैह ॥ १ ॥
 तिम रहे पिण प्रतिमा भणौ, पुष्य चढ़ावां तेह ।
 म्हनि पिण जिन आज्ञा छै, हिंसा तसु न कहैह ॥ २ ॥
 तसु कहिये साधू नदी, उतरै तिहां जिन आज्ञा ।
 जो पूजा में जिन आज्ञा छै, तो मुनि किम न करै जाण ॥ ३ ॥
 वन्दना नौ पूछ्यां यक्षां, मुनि आज्ञा दे तेह ।
 पुष्य चढ़ावूं इम कछ्यां, मुनि, आज्ञा नहिं देह ॥ ४ ॥
 नदी उतरै जे मुनि, द्रव्य पूजा कहै तेम ।
 हेतु तिण जपर कह्यं, चतुर सुणो धर पेम ॥ ५ ॥
 विहार विषे जल सहित इक, नदी देख मुनिराय ।
 ते टालण रै कारणै, अंवलार्डे पिण खाय ॥ ६ ॥
 इक कोशादिक अन्तरै, सूकी नदी निहाल ।
 तेह प्रते मुनि उतरै, उदक सहित दे टाल ॥ ७ ॥
 तिम दश दिननां पुष्य जे, सूका ते अवलीय ।
 एकण आडी पुष्य फुन, तत्क्षण चूटां होय ॥ ८ ॥
 किसा चढावो पुष्य तुम, तुम लेखै इम न्हाल ।
 सूका फूल चढावणा, हरिया देखा टाल ॥ ९ ॥

जो चाढो तत्काल ना, शुष्क पुष्प न चढाय ।
 जद तो पुष्प नदी तणी, मिल्यो न सरिषो न्याय ॥१०॥
 उदक सहित टालै नदी, मुनि अंवल्लई खाय ।
 तिण कारण हणवा तणु, ते कामी नहिं ताय ॥११॥
 हरित पुष्प चाढो तुम्हे, शुष्क पुष्प न चढाय ।
 इत्थ कारण हणवा तणा, तुम्हे कामी इत्थ न्याय ॥१२॥
 तिण सुं पुष्प नदी तणी, नथी सरिषो न्याय ।
 द्रव्य पूजा नी आण नहीं, नदी जिन आज्ञा मांय ॥१३॥
 जिन आज्ञा देवै जिको, निर्वद्य कारज जान ।
 जिन आज्ञा देवै नहीं, ते सावद्य कार्य मान ॥१४॥
 सुर सुर्याभ भषी प्रमु, वन्दन आज्ञा ख्यात ।
 नाटक नी पूछ्यां थकां, आण न दीधी नाथ ॥१५॥
 मन में भलो न जाणियो, मौन रच्चा अवलोय ।
 तिण सुं ए नाटक कियो, ते सावद्य कार्य होय ॥१६॥
 प्रभूजो जे नाटक तणी, आज्ञा दीधी नांय ।
 तो किम द्रव्य पूजा तणी, आज्ञा दे जिनराय ॥१७॥
 मुनि दीक्षा लेतां किया, सावद्यरा पचखान ।
 न करै द्रव्य पूजा तिको, सावद्य कार्य मान ॥१८॥
 सावद्य कार्य प्रति मुनि, करै करगवै नांय ।
 अनुमोदे पिण नहिं तिको, निमल विचारो न्याय ॥१९॥

जेह कार्ये अनुमोदियां, मुनि ने लागी पाप ।
 तो करणवालो तो धुर करण, तिणमें धर्म न थाप ॥२०॥
 सावद्य कार्य सर्व ही, मुनि त्यागै विष जाण ।
 आज्ञा तेहनो किम दियै, वारू' करो विनाण ॥२१॥
 द्रव्य पूजा सावद्य कै के निर्वद्य कहिवाय ।
 सावद्य कै तो तेह में, धर्म पुण्य किम थाय ॥२२॥
 जो पूजा निर्वद्य कै, तो मुनि न करै कांय ।
 बलि सामायिक पोषा मझै, तुम्हे करो क्युं नांय ।२३।
 सामायिक पोषा मझै, पचव्या सावद्य जोग ।
 निर्वद्य तो त्याग्या नहीँ, देखो दे उपयोग ॥२४॥
 द्रव्य पूजा आज्ञा मझै, के जिन आज्ञा बार ।
 जो आज्ञा बारै कहो, तो धर्म पुण्य मत धार ॥२५॥
 जो ए कै आज्ञा मझै, तो मुनि न करै कांहि ।
 सामायिक पोषा मझै, तुम्हे करो क्युं नांहि ॥२६॥
 द्रव्य पूजा कै विरत मे, के अविरत रै मांय ।
 जो अविरत मांहीँ कहो, तो धर्म पुण्य किम थाय ।२७।
 द्रव्य पूजा कै विरत में, तो मुनि क्युं न करेह ।
 सामायिक पोषा मझै, क्यों न करो तुम्हे तेह ॥२८॥
 जो पूरी समझ पडै नहीँ तो राखो प्रभू प्रतीत् ।
 जिन आज्ञा बाहर धर्म कहो, न करणी एह अनौत् ॥२९॥

॥ अथ इक्कीसमूं दानाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

असंयती ने जाण ने, वा आवक ने कोय ।
 दान दियां स्युं फल हुवै, तसु उत्तर अवलोय ॥ १ ॥
 अष्टम शतकी भगवती, कट्टे उद्देशे जोय ।
 गौतम पृच्छी वीर प्रति, हे प्रभू ! आवक कोय ॥ २ ॥
 तथा रूप जे असंजति, तसु सचित्त अचित्त अशणादि ।
 अणेषणो फुन एषणोक्क, प्रति लाभ्ये स्युं सम्वाद ॥ ३ ॥
 तेहने स्युं फल सम्पजे, तब भाषे जिनराय ।
 एकान्त पाप हुवै तसु, निरजरा किञ्चित नांय ॥ ४ ॥
 एकान्त पाप कच्चो प्रभू. प्रकट पाठ मे जोय ।
 तो ते दान दियां कृतां, धर्म पुण्य किम होय ॥ ५ ॥
 बलि सातमां अङ्ग मे, प्रथम अध्ययन सभार ।
 वीर भणो आणन्द कच्चो, अन्य तीर्थो प्रति धार ॥ ६ ॥
 अन्य तीर्थिक ना देव प्रति, फुन जिन ना मुनिराय ।
 अन्य तीर्थिक मे जई मिल्या, तिणे संयच्छा ताय ॥ ७ ॥
 ए त्रिहुं प्रति वन्दूं नहीं, बलि न करूं नमस्कार ।
 पहली बोलाऊं नहीं, एक बार बहु बार ॥ ८ ॥
 अशणादि नहिं दुं तसु, बलि देवावूं नाहिं ।
 एहवुं अभिग्रह आदखो, देखो आगम मांहिं ॥ ९ ॥

तिम सावद्य दान प्रशंसियां, कर्म तणो बंध घाय ।
 तो दान दिये ते घुर करण, तसु अघ बंध अधिकाय ॥३०॥
 दान निषेद्यां वृत्तिनी, द्वेद करे दूम ख्यात ।
 कच्छो अर्थ में काल ए, वर्त्तमान में घात ॥३१॥
 मिलतो अर्थ ए सूत्र थी, देखो न्याय विचार ।
 ठाम ठाम सूत्रे कच्छो, सावद्य दान असार ॥३२॥
 असंजती ने दान दे, पाप एकन्त आख्यात ।
 सूत्र भगवती ने विषै, देखो तज पखपात ॥३३॥
 ते माटे वर्त्तमान जे, काल विषै जे मून ।
 मून कहै विहुं काल में, अज्ञा तास जवून ॥३४॥
 द्वितीय सूयगडांगि विषै, पञ्चमाध्ययने पेल ।
 देतो लेतो एहवो, वर्त्तमान में देख ॥३५॥
 पुण्य पाप नहिं कहै तिहां, एहवुं बच अवलोय ।
 ते माटे वर्त्तमान हिज, काले मून सुजोय ॥ ३६॥
 कच्छो उपासक अङ्ग में, सुत सकडाल उदार ।
 गौशालक ने आपिया, फलंग सेज्भा संधार ॥३७॥
 कच्छो प्रभू ना गुण कस्या, तिण स्युं आपूं सोय ।
 पिण निश्चय नहिं धर्म तप, दूम कह दौधा जोय ॥३८॥
 दौधां गौशालक भणी, नहीं धर्म तप सद्य ।
 तिमज अनरा ने दियां, प्रेम हुवे पुण्य बन्ध ॥३९॥

जीमावै द्विज सहस्र वै तसु पुण्य खन्ध बंधाय ।
 तेह पुण्य थो सुर हुवै, वेद विषे ए बाय ॥२०॥
 आद्र मुनि कछो सहस्र वै, दीहा जीमावै जेह ।
 तेह नरक में ऊपजे, अति अभिताप विषेह ॥२१॥
 प्रगट पाठ में बात ए, आद्र मुनि बच जोय ।
 तो असंयती रा दान मे, धर्म पुण्य किम होय ॥२२॥
 कीर्दे कहै कृष्णस्थ था, आद्र मुनि तिहवार ।
 कछुं ताण मे तेह बच, किम कहिये तसु सार ॥२३॥
 तसु कहिये आदर मुनि, चरचा करी विशाल ।
 बौद्ध मती गौशाल सूं, साग मती सूं न्हाल ॥२४॥
 एक ङ्गिडया प्रमुख ने, उत्तर दिया विचार ।
 तेह सत्य जाणो तुम्हे, तो ए पिण सत्य उदार ॥२५॥
 जाव अन्य प्रति सत्य कै, ब्राह्मण प्रति अवदात ।
 उत्तर असत्य कहो तुम्हे, आ किसा लेखा री बात ॥२६॥
 सूत्र सूयगडांग ज्ञारमे, दान प्रशंसै सन्त ।
 वध बछै षट काय नो, इम भाष्यो भगवन्त २७॥
 तृतीय कारण प्रशंसियां, हिंसक कहिये ताहि ।
 तो दान देवै ते धुर कारण, ते हिंसक किम नाहिं ॥२८॥
 करै प्रशंसा कुशील री, तामु कर्म बन्ध होय ।
 तो सेवै ते तो धुर कारण, स्युं कहिये तसु सोय ॥२९॥

नित्य हजारों मण तदा, धान रांधता जाण ।
 हुवे हजारों मण तिहां, अग्नि पाणी घमसाण ॥५०॥
 उदक विघ्ने फुंवारादि फुन, बलि वनस्पति जल मांघ ।
 लूण मणां बन्ध लागतो, अनेक मूवा तसकाय ॥५१॥
 वायु जीव विराधना, ते पिण्य तिहां विशेष ।
 मोटो आरम्भ ए सही, दानशाला में देख ॥५२॥
 दिन दिन प्रति षटकाय हण, अनन्त जीवारी घात ।
 न गिणै पाप हिंसा तणो, तसु घट मांहे मित्थ्यात ॥५३॥
 असंयती बहु पोषियां, करै षटकाय बिणाश ।
 धर्म पुण्य किम तेह में, जीवो हिये विमास ॥५४॥
 धर्म हेतु प्रति जीव ने, हणियां दोष न कोय ।
 कच्चुं अनार्यं वचन ए, आचारङ्गे, जीय ॥५५॥
 कच्चो धर्मं रै कारणै, जीव न हणवूं कोय ।
 ए आर्यं नो वचन है, धुर अङ्गे अवलीय ॥५६॥
 तिण्णं सूं प्रदेशी तणी, दानशाला पहिचाण ।
 श्री जिन आज्ञा वार है, समभो चतुर सुजाण ॥५७॥
 ज्ञाता अध्ययने तेरमें, जे नन्दन मणिहार ।
 नन्दा पुष्करणी तणो, आख्यो बहु विस्तार ॥५८॥
 चिहुं दिश च्याहूं वाग फुन, चिहुं वाग चिहुं शाल ।
 पूरव वाग विघ्ने प्रवर, चिचशाला सुविशाल ॥५९॥

दुःख विपाक मांही कच्छो, मृगालोढो देख ।
 गौतम पूछो वीर प्रति, पूर्व भवै इम पेख ॥४०॥
 स्युं दौधो स्युं भोगव्यो, इम पूछो गणिराय ।
 तिण सुं दान कुपात्र ना, फल अति कटुक कहाय ॥४१॥
 प्रदेशी केशी भणी, बोल्ह्यो एहवी वाय ।
 चार भाग ए राज रा, ह्यं करस्युं मुनिराय ॥४२॥
 एक भाग राण्यां निमित्त, टूजो भाग खजान ।
 तीजो ह्य गय अर्थ ही, चौथो देवा दान ॥४३॥
 च्याहूँ सावद्य जाण ने, मौन रच्या मुनिराय ।
 तीन भाग जिम तूर्य पिण, जाणी सावद्य ताय ॥४४॥
 पिण न कच्छो वण भाग तो, हेतु अघ नी राज ।
 तूर्य भाग तो पुण्य बन्ध, इम न कच्छो गुण तास ॥४५॥
 च्याहूँ भाग बोलाय ने, प्रदेशी राजान ।
 निज लफरो मेटो थयो, धर्म करण सावधान ॥४६॥
 तूर्य भाग दान तालके, नित प्रते धान रंधाय ।
 वणी मग रांक जिमायिवै, तिहां जीव हिंसा अधिकाय ४७
 सप्त सहस्र जे ग्राम नां, चार भाग तसु कीध ।
 दान तालके थापियो, चौथो भाग प्रसिद्ध ॥४८॥
 दान तालके ग्राम था, साठ सतरै सौ जेह ।
 तसु हांसल धान रंधाय ने, दानशाला मांडेह ॥४९॥

रुधिरै खरड्यो वस्त्र जे, जलादि करि शुद्ध होय ।
 तिम हिंसादिक अघ तज्यां, जीव निमल ह्वै सोय ॥७०॥
 सचित अचित सहु ने दियां, पुण्य कहै कै जेह ।
 केड़ायत चोखी तथा, न्याय विचारौ लेह ॥७१॥
 दशमें ठाणै देखल्यो, प्रभू कछ्छा दश दान ।
 संक्षेपे कहिये तिके, सुणजो चतुर सुजाण ॥७२॥
 सचित अचित जल अन्न लवण, अग्नि जमीकन्द जान ।
 अनुकम्पा आणौ देवै, ते अनुकम्पा दान ॥७३॥
 द्वितीय दान संग्रह कछ्छो, पोषै बन्दीवान ।
 तथा कुड़ावै दाम दे, चीर प्रमुख ने जाण ॥७४॥
 ग्रह करड़ा जाणी करी, थावरिया ने जान ।
 देवै भय आणौ करी, ते तीजो भय दान ॥७५॥
 खर्च करै मृत केड वा, जीवत बारियो जान ।
 आह्व कृमासौ प्रमुख ते, तूर्य कालूणी दान ॥७६॥
 बहू नी लज्जाइ करी, सचित अचित धन धाम ।
 दियै असंजती ने जिको, पञ्चम् लज्जा दान ॥७७॥
 मुकलावो पैरावणी, जश अहङ्कारे जान ।
 दिये रावलिया प्रमुख ने, कट्टो गारव दान ॥७८॥
 कुशील नो अर्थी जिको, गणिकादिक ने जान ।
 दियै द्रव्य तेहने कछ्छुं, सप्तम अधर्म दान ॥७९॥

विविध रूप चित्रया तिहां, नयना ने सुखदाय ।
 नाटक ना धुङ्कार बहु, जन मन हुलसत थाय ॥६०॥
 दानशाला दक्षिण बने, दिये दान दगचाल ।
 जीमाये बची मग रांक बहु, भोजन विविध रसाल ॥६१॥
 तीगच्छ शाला पश्चिम बने, राख्या बैद्य सुताम ।
 औषध करी रोगी भणी, करै अधिक आराम ॥६२॥
 शुभ अलङ्कार उत्तर बने, नाई प्रमुख बैसाय ।
 रोगी प्रमुख भणी तिहां, खिजमत स्नान कराय ॥६३॥
 इम बहु असंयती भणी, मुख साता उपजाय ।
 उपना छेहड़े सोल गद, नन्दन रै तनु मांय ॥६४॥
 काल करी मौंडक हुबो, निज पुष्करणी मांय ।
 सावद्य कार्य ना कटुक फल, निमल विचारो न्याय ॥६५॥
 ज्ञाताध्ययने आठमें, देखो चतुर सुमर्म ।
 चोखी सन्यासण कछुं, दान धर्म शुचि धर्म ॥६६॥
 दान धर्म शुचि धर्म कर, निरविघ्न स्वर्गे जाय ।
 मल्लि भणी चोखी कहौ, ए निज श्रद्धा ताय ॥६७॥
 तब मल्लि कछो चोखी भणी, रुधरे खरछा जेह ।
 वस्त्र लोही सूं धोवियां, शुद्ध हुवै किम तेह ॥६८॥
 तिम अष्टादश पाप प्रति, सिवै जे कोई जन्त ।
 तेह निमल किण विध हुवै, दीधो एह दृष्टान्त ॥६९॥

वैश्या ने देवै तिकी, प्रत्यक्ष अधर्म पेख ।
 दौसै लोक विषै तसु, अधर्म नाम सम्पेख ॥६०॥
 धर्म दान बिन शेष अठ, ते पिण्य अधर्म जान ।
 गुण निप्पन् ए नाम तसु, भाष्या श्री भगवान ॥६१॥
 श्री जिनवर जे दान री, आज्ञा नहीं दे कीय ।
 धर्म पुण्य नहिं तेह में, हिये विमासी जीय ॥६२॥
 दशमें ठाणै धर्म दश, पाषण्ड धर्म भाष्यात ।
 पिण्य ते नहिं आज्ञा विषै, तिमहिज दान अवदात ॥६३॥
 सूत्र चारित्र के धर्म वै, श्री जिन आज्ञा मांहि ।
 तिमहिज जिन आज्ञा विषै, धर्म दान कहिवाय ॥६४॥
 जिन आज्ञा जे धर्म नी, ते निर्वद्य पहिचाण ।
 आज्ञा नहिं जिण धर्म री, ते तो सावद्य जाण ॥६५॥
 जिन आज्ञा जे दान नी, ते निर्वद्य अवलीय ।
 आज्ञा नहिं जे दानरी, ते सावद्य कै सोय ॥६६॥
 दशमें ठाणै स्थिवर दश, भाष्या श्री भगवान ।
 सावद्य निर्वद्य ओलखी, जिन आज्ञा करि जाण ॥६७॥
 तिमहिज जिन आज्ञा कारी, सावद्य निर्वद्य दान ।
 ओलख ने निर्णय करै, ते कहिये बुद्धिवान ॥६८॥
 नवमें ठाणै पुण्य बन्ध, नव विध समुच्चै ख्यात ।
 अन्नपुराय फुन पाणपुराय, लैणपुराय विख्यात ॥६९॥

धर्म दानवर आठमूं, तीन भेद है तास ।
 सूत्र सुपात्र दान पुन, अभय दान गुण राश ॥८०॥
 आगम अर्थ बताय ने, तसु मित्थ्यात्व मिटाय ।
 शुद्ध समकित पमाविये, सूत्र दान कहिवाय ॥८१॥
 वर महाव्रत धारी मुनि, दिये सूनतो तास ।
 दान सुपात्र तसु कच्चो, द्वितीय भेद सुविमास ॥८२॥
 भय नहिं दे जंतू भणी, हणवारा पच्चखाण ।
 ते अभय ए भेद वण, धर्म दान रा जाण ॥८३॥
 सचितादिक जे द्रव्य बहु, दिये उधारा जेम ।
 ध्यान पाछो लेवा तणो, नवम काएन्तो एम ॥८४॥
 लैणायत ने जिम दिये, हांती नैता देय ।
 दियां पछे पाछो लिये, दशम कएन्तो तेय ॥८५॥
 धुर वोहरा जिम उभय ए, दियां प्रथम दे तेह ।
 ते नवमूं पुन दशम जे, दियां पाछो दे जेह ॥८६॥
 धर्म दान अष्टम तिक्की, श्री जिन आज्ञा मांहि ।
 शेष दान नव छे जिक्का, जिन आज्ञा में नांहि ॥८७॥
 असंजती ने दान दे, तसु कच्चो अघ एकन्त ।
 नवही दान तेहने विषे, देखोनी बुद्धिवन्त ॥८८॥
 ए दश दान कच्चो तिक्की, गुण निप्पन्न तसु नाम ।
 पिण जिन आज्ञा बाहिरो, ते सावद्य अघ धाम ॥८९॥

बलि सूक्तता उदक प्रति, पायां तसु पुण्य होय ।
 अथवा उदक असूक्ततो, पायां पुण्य अवल्लोय ॥११०॥
 पात्रे दीधां पुण्य है, तथा कुपात्र विषेह ।
 मुनि प्रति दीधां पुण्य है, तथा असाधु प्रतेह ॥१११॥
 चोर कसाई ने दियां, बलि गणिका प्रति जोय ।
 तुभ्ब लखै सहू ने दियां, पुण्य बन्ध अवल्लोय ॥११२॥
 लयणपुण्य समुच्चय कच्चो, ते जागां नवी कराय ।
 छक्काय हणी दे तामु पुण्य, कै सीधौ दीधां थाय ॥११३॥
 पात्र ने दीधां पुण्य है, तथा कुपात्र विषेह ।
 मुनि प्रते दीधां पुण्य है, तथा असाधु प्रतेह ॥११४॥
 गणिका चोर कसाई प्रते, दीधां पुण्य बंधाय ।
 समुच्चय लयणपुण्यया कच्चो, उत्तर देवो ताय ॥११५॥
 सयणपुण्य समुच्चय कच्चो, रूख कटाय कटाय ।
 पाट बाजोट कराय ने, दीधां पुण्य बंधाय ॥११६॥
 कै सीवा दीधां पुण्य है, पात्र कुपात्र भणौज ।
 साधु असाधु ने दियां, ते किण में पुण्य कहीज ॥११७॥
 गणिका चोर कसाई प्रते, दीधां पुण्य अवल्लोय ।
 समुच्चय सयणपुण्यये कच्चो, उत्तर देवो सीय ॥११८॥
 वस्त्रपुण्य समुच्चय कच्चो, कपड़ा नवा बनाय ।
 धोवाय दीधां पुण्य है, कै सीधा दीधां ताय ॥११९॥

सयणपुण्य फुन वस्त्रपुण्य, मनपुण्य वचपुण्य काय ।
 नमस्कारपुण्यो नवम, समुच्चै ही कहिवाय ॥१००॥
 कोर्क कहै अन्नपुण्य द्रम, समुच्चय आख्यो स्वाम ।
 ते माटे सह ने दियां, पुण्य बन्ध, छै ताम ॥१०१॥
 द्रम कहै तेहने पूछिये, अन्नपुण्य आख्यो सोय ।
 के कोरो दीघां पुण्य हुवै, के काचो दीघां होय ॥१०२॥
 के अन्नपुण्य रांध्यो दियां, सचित दियां पुण्य थाय ।
 तथा अचित दीघां थकां, पुण्य बन्ध कहिवाय ॥१०३॥
 दियां सूभतो पुण्य है, वा असूभतो दियेह ।
 पात्र प्रति दीघां पुण्य है, तथा कुपात्र विषेह ॥१०४॥
 मुनि प्रति दीघां पुण्य है, तथा असाधू प्रतेह ।
 चोर कसार्क ने दियां, बलि गणिका प्रतेज देह ॥१०५॥
 समुच्चय आख्यो अन्नपुण्य, ते माटे अवलोय ।
 सह ने दीघां पुण्य नो, तुभ लेखै बन्ध होय ॥१०६॥
 द्रम तसकर गणिकादि जे, सह ने दीघां पुण्य ।
 तिणसुं सवला पात्र है, नहिं कुपात्र जबुन्य ॥१०७॥
 पाणपुण्य समुच्चय कछ्यो, ते अचित पायां पुण्य होय ।
 के सचित उदक पायां थकां, पुण्य बंध तसु जोय १०८
 जो सचित पायां थी पुण्य हुवै, तो छाख्यो पावेह ।
 अथवा अछाख्या उदक प्रति, पायां पुण्य कहैह ॥१०९॥

नमस्कार समुच्चय कछो, सिद्ध साधु प्रति ज्योय ।
 नमस्कार कियों पुण्य है, कै अन्य प्रति कीधां होय ॥१३०॥
 कुत्ता भाई राम राम, कागा भाई राम ।
 इम चाण्डाल भणी नम्यां, पुण्य है कै नहिं ताम ॥१३१॥
 विनय करै सघला तयो, विनयवादी अवल्योय ।
 तसु पाषण्डी प्रभू कछो, सूत्रे ए वच ज्योय ॥१३२॥
 जो नमस्कार सहू ने कियों, पुण्य कहै मति मन्द ।
 ते कौड़ायत जाणवा, विनय वादी रा अन्ध ॥१३३॥
 अन्नपुण्य समुच्चय कछो, ते माटे अवल्योय ।
 सहू ने अन्न दीधां थकां, पुण्य कहै जे कोय ॥१३४॥
 तसु लेखै समुच्चय कछा, मनपुण्य तयो बन्ध थाय ।
 ए पिण अशुद्ध तीनों थकी, पुण्य तयो बन्ध थाय ॥१३५॥
 जो सावद्य मन वच काय थी, पुण्य बंध नहिं थाय ।
 अन्न पिण दियां कुपात्र ने, पुण्य बंधे कियान्याय ॥१३६॥
 नमस्कार पुन्ये अपि, समुच्चय कहिये पेख ।
 सहू ने नमण कियों थकां, पुण्य बन्ध तसु लेख ॥१३७॥
 गणिका चोर कसाई प्रति, कर जोड़ी नमस्कार ।
 कीधां पिण पुण्य बन्ध हुवै, जसु लेखै अवधार ॥१३८॥
 सर्व भणी जो अन्न दियां, बलि सहू ने नमस्कार ।
 कीधां पुण्य तो देखली, सप्तम अङ्क संभार ॥१३९॥

पात्रेज दौर्वां पुण्य है, तथा कुपात्र विषेह ।
 साधु असाधु ने दिया, किण में पुण्य कहिह ॥१२०॥
 गणिका चोर कंसाई प्रते; दौर्वां पुण्य वधाय ।
 समुच्चय वत्थपुण्य कच्छो, उत्तर देवो न्याय ॥१२१॥
 मनपुण्ये समुच्चय कच्छो, सावद्य अशुद्ध जवन्य ।
 मन प्रवर्त्तायां पुण्य है, कै निर्वद्य मन थो पुण्य ॥१२२॥
 पञ्च आस्रव सेवण तणा, मन थो पुण्य वधाय ।
 पञ्च आस्रव छोडण तणा, मन थो पुण्य वध थाय ॥१२३॥
 समुच्चय मनपुण्ये कच्छो, सावद्य मन प्रवर्त्ताय ।
 ते थो पुण्य वधै कै नाहिं, उत्तर देवो ताय ॥१२४॥
 बचपुण्ये समुच्चय कच्छो, सावद्य अशुद्ध जवन्य ।
 सच बोल्यांथी पुण्य है, कै निर्वद्य बच थो पुण्य ॥१२५॥
 समुच्चय बचपुण्ये कच्छो, मुख से बोले गाल ।
 एक गणै नवकार शुद्ध, किण थो पुण्य बन्ध न्हाल ॥१२६॥
 काय पुण्य समुच्चय कच्छो, सावद्य तन प्रवर्त्ताय ।
 तेह थकी पुण्य बन्ध हुवे, कै निर्वद्य तनु थो थाय ॥१२७॥
 शौत तप्त तनु थो खमै, ते थो पुण्य वधाय ।
 गेहूँ पीसे छेदै हरी, तेथो पुण्य बन्ध थाय ॥१२८॥
 हिन्सा भूठ अदत्त फुन, चौथो आस्रव ताहि ।
 समुच्चय काय पुण्ये कच्छो, इण थो पुण्य कै नाहिं ॥१२९॥

जागां पाठ वाजोटादि नो, पडे साधु रै काम ।
 कपडो पिण साधू तथै, अवश्य चाहिये तोम ॥१५०॥
 इम कल्पै साधू भणी आख्या तेहिज बोल ।
 देखोजी देखो तुम्हे, आख हीया रौ खोल ॥१५१॥
 साधू बिन जो अन्य प्रति, दीघां पुण्य जों होय ।
 तो गाय पुण्य किम नवि कछो, भैस पुण्य पिण जोय ॥१५२॥
 सुवरण पुण्य रूपो पुण्य, हीरो पुण्य उदार ।
 मोती ने माणिक्य पुण्य, खेती पुण्य विचार ॥१५३॥
 इत्यादिक मुनिवर भणी, नहिं कल्पै ते बोल ।
 सूत्र विषै ते नवि कछो, देखोजी दिल् खोल ॥१५४॥
 मुनि प्रति नहिं कल्पै तिको, एक ही बोल कहन्त ॥
 तो तुम्हे कहता अन्य प्रति, दीघै पिण पुण्य हुन्त ॥१५५॥
 जब को कहै कछो अर्थ में, पात्र अन्न दीघैह ।
 तीर्थहर नामादि जे, पुण्य प्रकृति बंधैह ॥१५६॥
 पात्र थकौ जो अन्य प्रति, दियां अनेरी ताहि ।
 पुण्य प्रकृति बन्धे इसी, कछो अर्थ रै साहिं ॥१५७॥
 तसु कहिजे जे पात्र ने, दीघै इतां जु तेह ।
 तीर्थहर नामादि जे, पुण्य प्रकृति बंधैह ॥१५८॥
 आदि शब्द में तो जिनि, पुण्य प्रकृति सहु आय ।
 इक ही वाक्यो नवि रहि, निमल विचारो न्याय ॥१५९॥

अन्य तीर्थी ने नहिं करुं, वन्दना ने नमस्कार ।
 अशनादिक पिण दुं नहौं, आनन्द कस्युं उदार ॥१४०॥
 मुनि विन अन्य प्रति अन्न दियां, बलि कियां नमस्कार ।
 पुण्य हुवे तो किम लियो, आनन्द अभियह मार ॥१४१॥
 जसु अन्न दीधां पुण्य हुवे, तेह ने पिण शिरनाम ।
 नमस्कार कीधां छतां, पुण्य हुवे छै ताम ॥१४२॥
 ते नव ही निर्वद्य छै, साधू ने नमस्कार ।
 कीधां पुण्य छै तो तसु, अन्न दीधां पुण्य सार ॥१४३॥
 जल पिण निरदोषण तसु, दीधां पुण्य सु देख ।
 जागां पिण तसु सूभती, आप्यां पुण्य सु पेख ॥१४४॥
 सयण पाट प्रमुख तसु, दीधां पुण्य सो जोय ।
 वत्थ पिण निरदोषण तसु, दीधां थी पुण्य होय ॥१४५॥
 मन बच काया पिण बलि, निरवद्य थी पुण्य बन्ध ।
 नमस्कार पद पञ्च प्रति, कीधां पुण्य सु सन्ध ॥१४६॥
 निरवद्य रै लेखै नवूं, बोल मरीषा शुद्ध ।
 नवूं मरीषा नवि कहै, श्रद्धा तास विरुद्ध ॥१४७॥
 साधू ने कल्पै जिज्ञे, तेहिज द्रव्य आख्यात ।
 द्रव्य अनेरा नवि कच्चा, देखो तज पखपात ॥१४८॥
 अन्न साधु रै जोइये, जल पिण मुनि रै ताय ।
 चाहिजे तिण कारणै, पाणपुण्य कहिवाय ॥१४९॥

वृत्ति मानै तसु खेख पिण, पुण्य पात्रेज दियेह ।
 अर्थ न मानै एह तिण, वृत्ति न मानी तेह ॥१७०॥
 सूत्र भगवती सुयगडांग, उत्तराध्ययन उजास ।
 असंजती प्रति दान दे, कछा अशुभ फल तास ॥१७१॥
 इम जाणौ उत्तमा नरां, राखी सूत्र प्रतीत ।
 श्रौजिन आण उथाप ने, मती को करो अनौत ॥१७२॥
 ठाणा अइ ठाणै तूर्य वर, तूर्य उद्देशा मांय ।
 च्यार मेह प्रभू आखिया, सांभलज्यो चित्तल्याय ॥१७३॥
 इक वर्षे जे खेत में, अखेत वर्षे नाहि ।
 अखेत वर्षे एक पिण, खेत न वर्षे ताहि ॥१७४॥
 इक क्षेत्रे पिण वर्षतो, अखेते पिण वर्षाय ।
 इक क्षेत्रे नहिं वर्षतो, अखेत वर्षेह नाहि ॥१७५॥
 इण दृष्टान्ते पुरुष नी, च्यार जाति कहिवाय ।
 देवे पात्र विधे जु इक, दिये कुपात्रे नाहि ॥१७६॥
 इह विध कछा कुपात्र ने, कुचेव सु वर न्याय ।
 बायो जिहां जगै नहीं, ते कुचेव सु वर न्याय ॥१७७॥
 ते माटे जु कुपात्र ने, दीधां शुभ अहुर ।
 जगै नहिं तिण कारणे, कछा कुचेव भूर ॥१७८॥

ऋषभादिक कहिवे इहां, जिन चौबोस सु आय ।
 गौतमादिक गुणवे करी, चउद सहस्र मुनिराय ॥१६०॥
 तिम तीर्थहरनामादि इम, आदि शब्द रे मांहि ।
 पुण्य प्रकृति आवी सह, बाकी रही न कांय ॥१६१॥
 पात्र थकी जो अन्य प्रति, दियां अनरी जाण ।
 पुण्य प्रकृति बंधे तिकी, अर्थ विरुद्ध पहिचाण ॥१६२॥
 आदि शब्द में तो जिसे, पुण्य प्रकृति सह आय ।
 बलि अनरी पुण्य नी, प्रकृति किसी कहिवाय ॥१६३॥
 किणहिक ठाणा अन्न मे, है ए अर्थ जबून्य ।
 सह ठाणा अन्न में नहीं, पाठ बिना अर्थ शून्य ॥१६४॥
 अन्य प्रति दीधां अन्न जे, पुण्य प्रकृति बंधेह ।
 वृत्ती विषे ए नवि कछी, अभयदेव सुरेहे ॥१६५॥
 पात्रे अन्न देवा थकी, जे तीर्थहर नामादि ।
 पुण्य प्रकृति नो बंध ते, अन्नपुण्य संवाद ॥१६६॥
 वृत्ती विषे इतरोज है, पिण अन्य प्रति दीधां सोय ।
 बंधे अनरी पुण्य प्रकृति, एह्वं कछी न कोय ॥१६७॥
 पाठ विषे पिण ए नहीं, वृत्ती विषे पिण नांहि ।
 सूत्र थकी पिण नहिं मिलै, ए विरुद्ध अर्थ इणन्याय ॥१६८॥
 अन्नपुण्य को अर्थ शुद्ध, वृत्ति विषे कछुं सोय ।
 पात्रे दीधां पुण्य कछुं, प्रत्यक्ष ही अवलोक्य ॥१६९॥

ग्रहस्थ ने देवो तज्यो, स्तूं जाणो मुनिराय ।
 ते संसार भ्रमण तणो, हेतु जाणो ताय ॥६॥
 सुयगडांग नवमें कच्चो, गाहा तेवीसम् ताहि ।
 तिण सं श्रावक आवियो, प्रत्यर्च ग्रहस्थ मांहि ॥१०॥
 पनरमोद्देश निशीथ में, मुनि अन्य तीर्थी प्रतेह ।
 अथवा ग्रहस्थ प्रते बली, अशनादिक आपेह ॥११॥
 वस्त्र पात्र पुन कम्बली, रजोहरण सुविचार ।
 ए आठ बोल देवै तसु; दण्ड चौमासी धार ॥१२॥
 देतां प्रति अनुमोदियां, दण्ड चौमासी आय ।
 ते माटे ग्रहस्थ विषे, श्रावक पिण इहां आय ॥१३॥
 तसु मुनि पोतै दे नहीं, बलिं जसु देवै कोय ।
 अनुमोदै नहिं तेहने, ऋषि आचार-सु जोय ॥१४॥
 तृतीय-करण अनुमोदियां, दण्ड चौमासी आय ।
 तो-प्रथम करण देवे तसु, धर्म पुण्य किम थाय ॥१५॥
 पड़िमाधारी पिण इहां, आयो ग्रहस्थ विषेह ।
 तसु अशनादिक नहिं दिये, महा मुनि गुण गेह ॥१६॥
 ते पड़िमाधारी प्रते, ग्रहस्थ दिये को आहार ।
 तो मुनि अनुमोदै नहीं, देखो न्याय विचार ॥१७॥
 देता प्रति अनुमोदियां, मुनिवर ने दण्ड आय ।
 तो देशवांला ने धर्म किम, तसु खाणो अन्नत मांहि ॥१८॥

॥ अथ बावीसमूं श्रावक ने दियां स्युं थाय अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै श्रावक भणी, अशनादिक आपेह ।
 तेहने स्युं फल संपजै, हिव तसु उत्तर लेह ॥ १ ॥
 द्वितीय सुयगडांगे कछो, द्वितीय अध्ययन विषेह ।
 अथवा प्रथम उपाङ्ग में, प्रश्न बीसमें लेह ॥ २ ॥
 खाणी ने फुन पीवणो, श्रावक तणो सु जोय ।
 अन्नत मांहे आखियो, बलि गहणो अवलौय ॥ ३ ॥
 त्याग त्याग सहु व्रत है, राख्यो जे आगार ।
 तेहने अन्नत आखिये, बारूं न्याय विचार ॥ ४ ॥
 दूजो आसव दाखियो, अन्नत ने जिनराय ।
 ठाणांगठाणे पांचमें, बलि समवायाङ्ग मांहे ॥ ५ ॥
 भाव शस्त्र अन्नत भणी, भाष्यी श्री जगभाण ।
 शङ्का हुवै तो देखल्यो, ठाणांग दशमें ठाण ॥ ६ ॥
 तिण सूं हियै विचारियै, श्रावक ने अवलौय ।
 अन्नत सेवायां कृतां, धर्म पुण्य किम होय ॥ ७ ॥
 श्रावक ते विरते करी, देव वैमानिक थाय ।
 कहुं भगवती प्रथम शत, अष्टमोद्देशक मांहे ॥ ८ ॥

व्यावच ग्रहस्थ तणी कही, दशवैकालिक मांहि ।
 अणाचार अट्टवीसमो, तृतीय अध्ययने ताहि ॥२६॥
 गृही व्यावच मुनि नहीं करै, नथी करावै जाण ।
 करतां अनुमोदै नहीं, त्रिविध २ पञ्चखाण ॥३०॥
 ग्रहस्थ प्रति पूछै मुनि, सुख साता है तोय ।
 अणाचार ते सोलमों, दशवैकालिक जोय ॥३१॥
 सुख पूछां बञ्छी तिणे, साता तसु अणाचार ।
 तो गृही ने साता कियां, किम ह्वै धर्म उदार ॥३२॥
 दशाश्रुतस्कंधे चारमो, पडिमा में सम्पेख ।
 पेज्ज वंधण तूटो नहीं, ज्ञात तणो सुविशेष ॥३३॥
 ते माटै कल्पै तसु, ज्ञात तणो जे आहार ।
 इम पेज्ज वंधण खातै कही, भिच्चाचरो तसु धार ॥३४॥
 पेज्ज वन्धण ना अशुभ फल, ते माटै अवलोय ।
 तसु खातै भिच्चाचरी, ते पिण सावद्य जोय ॥३५॥
 भगवतो अष्टम शत विषै, पञ्चमुद्देशक जान ।
 गौतम पूछो गृही करी, सामायिक मुनि स्थान ॥३६॥
 तसु भण्ड तस्कर अपहस्यां, सामायिक चीतार ।
 भण्ड नी करै गवेषणा, श्रावक तेह तिवार ॥३७॥
 हे प्रभु ! ते निज भण्ड तणी, करै गवेषणा सोय ।
 के पर भंड नी ते करै, गवेषणा अवलोय ॥३८॥

गौतम प्रति सथार मे, आनन्द आस्थो एम ।
 हे भदन्त ! इहं गृहस्थं क्लृप्तं गृहि मज्झ वसूं ज तेम ॥१९॥
 ते गृही मज्झ वसता भणी, इतरो अवधि उप्पन्न ।
 पूर्वं दिशि लवणो दधौ, जोयण पच्च सयजन्न ॥२०॥
 देखूं ते हूं खेत प्रति, दक्षिण पश्चिम एम ।
 बलि उत्तर दिशि ने विषै, चूल हेमवन्त तेम ॥२१॥
 ऊंचो सौधर्म कल्प लग, अधो नरक धुर ताम ।
 सहस्र चौरासौ वर्षं स्थिति, लोलुच नरुक्कावास ॥२२॥
 गौतम बोल्या ए वडो, सोटो अवधि उदार ।
 ग्रहस्थ भणी नहों ऊमजै, हे आनन्द विचार ॥२३॥
 ते माटे तूं एहनौ, ले आलोवण सार ।
 जाव प्रायश्चित एहनो, पडिबजिये धर प्यार ॥२४॥
 तव आनन्द पूशो भदन्त, जे वर सत्य वडेह ।
 आवै छै दण्ड तेह ने, ओ जिन वयण विषेह ॥२५॥
 गौतम कहै नहिं दण्ड तसु, बलि आनन्द कहै वाय ।
 सत्य प्रवर वच कहै तसु, प्रायश्चित जो नाय ॥२६॥
 तो तुन्ह हिज आलोवणा, जाव प्रायश्चित लेह ।
 इत्यादिक इधकार छै, देखोजौ चित्त देह ॥२७॥
 इम सप्तम अङ्गे कह्यो, अणशण मे सुविशेष ।
 आनन्द आख्युं ग्रहस्थ इहं, तो पडिमा नो स्युं पेख ॥२८॥

ममत्व तजौ नहौ ते भणौ, धन तेहनो ज कहाय ।
 तिण सुं सामायक मझै, मुनि प्रति द्रव्य बहिराय ॥४६॥
 द्रव्य अनेरा नो हुवै, ते मुनि प्रति जो दिह ।
 तो तेहनो आज्ञा यकौ, बहिरावै गुन गेह ॥५०॥
 पिण ममत्व भाव पचख्यो नहौ, तिण सुं तसु द्रव्य जोय ।
 बहिरायों आज्ञा तणो, कारण नहि छै कोय ॥५१॥
 तिण ज उद्देशे पूछियो, गृही सामायक मांहि ।
 कोरुं पुरुष सेवे तदा, तसु भार्या प्रति आय ॥५२॥
 हे प्रभु ते श्रावक तणौ, भार्या प्रति सेविह ।
 तथा अभायां प्रति तदा, सेवे इम पूछेह ॥५३॥
 जिन कहै ते श्रावक तणौ, भार्या प्रति सेवन्त ।
 अभायां प्रति सेवे नहौं, वलि गौतम पूछन्त ॥५४॥
 हे प्रभु सामायक विषै, भार्या अभायां होय ।
 जिन कहै हन्ता गोयमा, भार्या अभायां जोय ॥५५॥
 किण अर्थे प्रभु इम कह्युं, भार्या प्रति सेवन्त ।
 अभायां प्रति सेवे नहौं, तब भाषै भगवन्त ॥५६॥
 जिन कहै सामायक विषै, इसी भावना भाय ।
 माता नहिं छै मांहरौ, पिता न म्हारो ताहि ॥५७॥
 भ्राता ते म्हारो नहौं, भगिनी मांहरौ नांहि ।
 भार्या मांहरौ को नहौं, सुत म्हारो नहिं ताहि ॥५८॥

प्रभु कहै करे गविषणा, निज भंड तणौज तेह ।
 पिण जे पर ना धन तणौ, गविषणा न करेह ॥३६॥
 बलि गौतम पूइयो प्रभु, सामायिक रै मांहि ।
 ते भंड ने वोसिरावियां, भंड अमंड कहाहि ॥४०॥
 जिन कहै हन्ता गीयमा, भंड अमंड कहाय ।
 बलि गौतम पूइयो प्रभु, तसु भण्ड कहो किणन्याय ॥४१॥
 प्रभु कहै सामायक विषै, ते इसी भावना भाय ।
 हिरण्य नहो ए मांहरो, बलि मुक्त सुवर्ण नाहिं ॥४२॥
 कांसी नहो ए मांहरी, नहो वस्त्र मुक्त एह ।
 नहिं मांहरो विस्तोर्य धन, कनकरत्न मणि जेह ॥४३॥
 मोती ने बलि शंख शिल, प्रवाल मंग कहाय ।
 पद्म रत्न आदिक कृतां, सार द्रव्य मुक्त नांय ॥४४॥
 एहवो चिन्तवना प्रवर, सामायक में जान ।
 पिण ममत्व भाव जे धन थकी, न कियो तिण पच्चखाणा ॥४५॥
 तिण अर्थे इस आखियो, निज भंड तणौज जेह ।
 गविषणा पिण पर तणा, भंड नौ नथो करेह ॥४६॥
 प्रगट पाठ में इस कह्यो, ते माटे अवल्लोय ।
 सामायक में धन थकी, ममत्व भाव तसु जोय ॥४७॥
 ममत्व भाव पच्चख्यो नथो, गृही सामायक मांहि ।
 तो पड़िमा में धन तणौ, ममत्व तजो किम ताहि ॥४८॥

१३४] * धावक ने दियां स्यूं थाय अधिकार *

शस्त्र ज षट्काय नो, अधिकरण कहिवाय ।
तसु तीखो कौधां कृतां, धर्म पुण्य किम थाय ॥६६॥
इमहिज पडिमा ने विषै, श्रावक आतम जाण ।
अधिकरण न्याये करी, वारुं करो विनाण ॥७०॥
सामायक में आत्मा, तसु अधिकरण आख्यात ।
तो जे सामायक बिना, तेह तणी सो वात ॥७१॥
षट् पोसा इक मास में, अष्ट पोहरिया करेह ।
थया बोहित्तर वर्ष में, संवत्सरि इक लेह ॥७२॥
एह तिहोत्तर दिन तणो, व्याज तसु घर आय ।
वलि तोटादि नफा तणो, तेहिज धणो कहाय ॥७३॥
घर पुत्रादिक जन्मियां, हर्ष हियै तसु आय ।
चित्त उदास हुवै मूंचा, पेज्ज बंधन इम थाय ॥७४॥
तोटो सुण विलखो हुवै, नफो सुणी विकसाय ।
सामायक पोषह मरुके, ममत्व भाव इणन्याय ॥७५॥
इमहिज पडिमा रै विषै, हर्ष सोग चित्त आय ।
पेज्ज बंधन आख्यो प्रभु, न्यातीला सूं ताय ॥७६॥
एक लखपती सेठ जसु, मात पिता परिवार ।
स्त्री पुत्रादिक को नहीं, एकलडो अवधार ॥७७॥
लाख रुपइया रोकड़ा, मित्त भणी ज भलाय ।
श्रावक नी पडिमा बहै, एकदश लग ताहि ॥ ७८॥

नहिं है मांहरौ पुत्रिका, सुत नो वह्न विमास ।
 ते पिण मांहरौ को नही, करै इम चिन्तवणा तास ॥५६॥
 प्रेम रूप बन्धन बलि, तसु विच्छिन्न न हुन्त ।
 तिण अर्थे करि तेहनौ, भार्या प्रति सेवन्त ॥६०॥
 इह विध प्रभुजी आखियो, सामायक रै मांहि ।
 प्रेम बन्धन छेद्यो नथौ, मात प्रमुख नूं ताहि ॥६१॥
 इमहिज पडिमा ने विषे, मात प्रमुख नूं सोय ।
 प्रेम बंधन तूटो नथौ, न्याय विचारो जोय ॥६२॥
 इग्यारसी पडिमा भक्षे, न्यातौला नौ धार ।
 प्रेम बंधन हूटो नथौ, तिण सुं ले तसु आहार ॥६३॥
 कछुं दशाश्रुतस्कान्य इम, ते माटे अवल्लोय ।
 पेज्ज बंधन खातै तसु, आहार लेवूं पिण होय ॥६४॥
 पूछ्यां जिन आज्ञा न दे, लेण वाला ने जोय ।
 देण वाला ने पिण नहौ, जिन आज्ञा अवल्लोय ॥६५॥
 जिन आज्ञा वारै नहौ, धर्म पुण्य रो अंश ।
 धर्म कहै आज्ञा बिना, तसु कहिये मति अंश ॥६६॥
 सूत्र भगवतौ ने विषे, सप्तम सतकौ भेव ।
 प्रथम उद्देशा ने विषे, दाख्यो श्री जिनदेव ॥६७॥
 सामायक मांहे कहो, श्रावक नौ संपेख ।
 आत्म ते अधिकरण इम, प्रगट पाठ मे लिख ॥६८॥

पड़िमा में पिण पञ्चसू, देश व्रत गुणठाण ।
 जे जे तसु आगार छै, ते ते अब्रत जाण ॥८८॥
 खाणो पीणो तेहनो, अविरत मांही जोय ।
 तसु अब्रत सेवावियां, धर्म पुण्य किम होय ॥८९॥
 पड़िमाधारी आहार ले, तेहने तो कहै पाप ।
 तो देवै तसु धर्म किम, देखो थिर चित्त थाप ॥९०॥
 जो लेण वाला ने पाप है, पाप लगायो जास ।
 धर्म पुण्य किण विध हुवै, जोवो हिये विमास ॥९१॥
 लेण वाला ने जे हुवै, देण वाला ने तेह ।
 जिन आज्ञा नहिं विहुं भणी, विहुं ने अघ बंधेह ॥९२॥
 जे पड़िमाधारी बिना, अन्य तणो पिण देख ।
 खाणो पीणो पहिरणो, अविरत में सम्पेख ॥९३॥
 ते माटे मुनि दै न तसु, दीघां आवै दण्ड ।
 अनुमोद्यां पिण दण्ड है, सूख निशीथ सुमंड ॥९४॥
 श्रावक जिमावण तणी, जिन आज्ञा दे नांहि ।
 आज्ञा बिन नहि धर्म पुण्य, देखोजौ दित्त मांहि ॥९५॥
 समदृष्टि अघे समी, जिन आज्ञा में धर्म ।
 आज्ञा बारै धर्म नहीं, ए जिन भामन मर्म ॥९६॥
 कहि कहि रे कितरो कइ, धर्म न आज्ञा बार ।
 आज्ञा मांहीं पाप नहीं, अघ्यां सम्यक्त्व सार ॥९७॥

मित्र तणै ब्रत पञ्चमे, निज पोता ना जाण ।
सहस्र दाम उपरन्त सूं, राखण रा पञ्चखाण ॥७६॥
पड़िमाधारी ना जिक्के, लाख दाम राखन्त ।
तेह तणो अब्रत तणो, अघ किण ने लागन्त ॥८०॥
तथा रुपइया लाख जे, किण रा परिग्रह मांहि ।
पोते रखवाली करै, पिण तसु परिग्रह नांहि ॥८१॥
पड़िमाधारी ना प्रगट, परिग्रह मांहि पिछाण ।
अविरत नो लागै तसु, पाप निरन्तर जाण ॥८२॥
समत्व भाव पञ्चल्यो नथी, पड़िमा में इगन्याय ।
सामायक जिम तेहनुं, तनु अधिकरण कहाय ॥८३॥
तथा लाखपती सेठ इक, पुढादिक नहिं कोय ।
गुमास्ता बहू तेहने, विणज करै अवलौय ॥८४॥
दुकान बाणोत्तर भणौ, सेठ भलावो मोय ।
श्रावक नौ पड़िमा बहै, एकादश लग जोय ॥८५॥
व्याज आवै रुपइया तणो, ते किण रा घर मांहि ।
बलि तोटारु नफा तणो, कंवर धणी कहिवाय ॥८६॥
पड़िमाधारी ना प्रगट, घर में आवै व्याज ।
नफा अनै तोटा तणो, एहिज धणी समाज ॥८७॥
लाख तथा बे लाख थया, परिग्रह इख रो हीज ।
सहस्र पचास रझा छतां, तोटो तास कहीज ॥८८॥

सावद्य पाप सहित जे, सावद्य कहिये तास ।
 अन्तर आंख उघाड़ ने, वारूँ न्याय विमास ॥ ८ ॥
 निगूथ उद्देशे बारमें, मुनि अनुकम्पा आण ।
 तृषादिके पाशे करी, जो बांधै तस प्राच ॥ ९ ॥
 अथवा बांधतां प्रते, जो अनुमोदै ताथ ।
 चौमासौ तसु प्रायश्चित, प्रगट पाठ में वाथ ॥ १० ॥
 द्रुमहिज बन्धा जीव ने, छोडै तो दण्ड पाथ ।
 छोडता प्रति जे वली, अनुमोद्यां दण्ड आय ॥ ११ ॥
 ए प्रत्यक्ष पाठ विषे कछो, अनुकम्पा ए जान ।
 सावद्य है तिथ कारथे, दण्ड कछो भगवान ॥ १२ ॥
 छोडै तसु अनुमोदियां, तृतीय करण दंड ख्यात ।
 तो छोडै ते धुर करण, तास धर्म किम थात ॥ १३ ॥
 असंयती रो जीवणो, बछे नहिं मुनिराय ।
 मरणो पिण नहिं बच्छणो, ए राग द्वेष कहिवाय ॥ १४ ॥
 असंयती रो जीवणो, बच्छां धर्म जु होय ।
 तो ए अनुकम्पा तणो, प्रायश्चित किम जोय ॥ १५ ॥
 सावद्य ए अनुकम्प है, तिण सुं दण्ड है तास ।
 निर्वद्य नो दंड हुवै नही, जीवो हिये विमास ॥ १६ ॥
 अनुकम्पा ने अर्थ ही, कृष्णे दूँट उपाड़ ।
 मंकी वृद्ध तथे घरे, अन्तगडे अधिकार ॥ १७ ॥

इस सांभल उत्तम नरां, राखो जिन सु प्रतीत ।
 भाज्ञा वारै धर्म कहौ, करवौ नहीं - अनौत ॥६६॥
 ॥ इति श्रावक ने दियौं स्युं थाय अधिकार ॥ ॥

॥ अथ तेवीसमूं अनुकम्पा अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै असंजती भगी, जेह बचावै जाण ।
 स्युं फल तास समुपजै, तसु उत्तर पहिछाण ॥ १ ॥
 जीव छोडावै दाम दे, जिन मुनि नहिं दे आण ।
 अनुमौदै पिण नहिं तिकै, सावद्य रा पञ्चखाण ॥ २ ॥
 मुनि दीक्षा लीधी तदा, सर्व सावद्य पञ्चखेय ।
 जीव छोडावै नहिं तिकै, निज वस्त्रादिक देय ॥ ३ ॥
 ग्रहस्थ छोडावै दाम दे, जो मुनि अनुमोदेह ।
 तृतीय कारण भागै तसु, पाप कर्म बंधेह ॥ ४ ॥
 तृतीय कारण अनुमोदवै, लागै पाप जवून ।
 तो दाम दिये ते धुर कारण, कीम हुवै तसु पुण्य ॥ ५ ॥
 सामायक पोषह विषै, सावद्य प्रति पञ्चखेह ।
 जीव छोडावै नहिं तिकै, निज वस्त्रादिक देह ॥ ६ ॥
 खोटो सावद्य जाण कै, जे त्यागो मुनिराय ।
 ग्रहस्थ ते सावद्य कियां, धर्म पुण्य किम थाय ॥ ७ ॥

छेद्र करी जल आवतो, देखी ग्रहस्थ प्रतीह ।
 वतावणो नहिं जिन कच्छी, प्रत्यक्ष पाठ विषेह ॥२८॥
 उदक भराती नाव ए, देखूं तुरत वताव ।
 एहवुं पिण नवि सिन्तवे, मन माहीं मुनिराय ॥२९॥
 आप अने बहु अन्ध जन, डूबे उदक करेह ।
 सम भावै बैठो रहै, राग द्वेष टालेह ॥३०॥
 द्वितीय अङ्ग में आखियो. श्रुतखंघ द्वितीय विषेह ।
 पञ्चम अर्धयने प्रगट, तीसरी गाथा जेह ॥३१॥
 जीव सिंह व्याघ्रादि फुन, हिंसक देखी सन्त ।
 यह मारवा जोग छै, इम न कहै गुणवन्त ॥३२॥
 अथवा हिंसक देखे, यह हणवा जोग ज नाहिं ।
 एहवुं पिण कहिवुं नहीं, निपुण विचारो न्याय ॥३३॥
 हस्तिकार एहवुं कछुं, वद्यवा जोग ज नाहिं ।
 इम कहतां तसु कर्मा नी, अनुमोदना जु आय ॥३४॥
 कच्छा सिंह व्याघ्रादि जे, आदि शब्द रै माहिं ।
 घातक जे घटकाय ना, ते सह्य आब्या ताहि ॥३५॥
 हथै कसाई अज भणौ, तसु तारण अणगर ।
 त्याग करावै बध तथा, दे उपदेश उदार ॥३६॥
 पिण बकरा नुं जीवणो, बंछे नहिं मन माहिं ।
 असंयम जीवत बंछणो, बज्यो छै जिनराय ॥३७॥

राणी धारणी गर्भ नी, अनुकम्पा ने अर्थ ।
 पथ- अनादिक भोगव्या, ज्ञाता मांहि तदर्थ ॥१८॥
 सुलसां नी अनुकम्प करि, देवकी ना सुत आणि ।
 मूक्या हरण गवेषी सुर, अन्तगड में जाण ॥१९॥
 अभय कुमार तशी वली, अनुकम्पा चित्त आणि ।
 दोहलो पूखो मित्र सुर, ज्ञाता में जिन वाणि ॥२०॥
 रत्तन हीप देवी तशी, जिन ऋषि करुणा कौध ।
 ज्ञाता नवम अध्येन कञ्चू, सावद्य यह प्रसिद्ध ॥२१॥
 इत्यादिक अनुकम्प नी, जिन आज्ञा दे नाहिं ।
 ते माटे सावद्य तिष्ठी, देखोजी दिल मांहिं ॥२२॥
 जीव हथे मुज कारणे, चिन्तव नेम कुमार ।
 तोरण थी पाछा फिखा, ए अनुकम्पा सार ॥२३॥
 जीव हबंता नेम ना, विवाह निमित्त पिछाण ।
 ते टाल्यो पाप पोता तशी, जिन आज्ञा तिहां जाण ॥२४॥
 गज भव सुशलो नवि हण्यो, कष्ट भोगव्यो आप ।
 निर्वद्य ए अनुम्प छै, गज टाल्यो निज पाप ॥२५॥
 उत्तगध्ययन इकबीस में, चोर देख समुद्रपाल ।
 छोड़ायो आख्युं नथी, चरण लियो सुविशाल ॥२६॥
 दूजो श्रुतस्कन्ध अङ्ग धुर, तृतीय अध्ययन विचार ।
 प्रथम उद्देश कञ्चो मुनि, बेठो नाव मभार ॥२७॥

मात वचावा जठियो, भागो पोषह ताहि ।
 तो साधु वचावै तेहनुं, चारित्र भागै किम नाहिं ॥४८॥
 जे कार्य कौधे कृतै, पोषह चारित्र भागैह ।
 ते कार्य में धर्म किम, न्याय विचारी लेह ॥४९॥
 द्वितीय सुयगडाह पवर, कृटा अध्ययन रे माहि ।
 अठारमी गाथा अमल, आद्र मुनि कहिवाय ॥५०॥
 निज कर्म प्रते खपायवा, वा अन्य तारण ताहि ।
 धर्म देशना प्रभु दियै, निमल विचारो न्याय ॥५१॥
 असंजती जे जीव छै, तास वचावा हेत ।
 वीर प्रभू उपदेश दे, इम नवि आख्यो तेथ ॥५२॥
 द्वितीय आचारह ने विषै, द्वितीय अध्ययने ताहि ।
 प्रथम उद्देशै प्रभु किह्यो, ग्रहस्थ लडै माहोमाहि ॥५३॥
 देखी नवी चिन्तै मुनि, मारो एह प्रतेह ।
 अथवा इण ने मत हणो, राग द्वेष वर्जेह ॥५४॥
 द्वितीय आचारह ने विषै, द्वितीय अध्ययन विषेह ।
 प्रथम उद्देशै ग्रहस्थ वै, तेज आरम्भ करेह ॥५५॥
 देखी मन चिन्तै न मुनि, अग्नि उजालो एह ।
 अथवा अग्नि उजाल मति, इम पिण नवि चिन्तेह ॥५६॥
 तथा बुभावो अग्नि ए, अथवा मत बुभाव ।
 एहवुं पिण नवि चिन्तवै, राखै मुनि सम भाव ॥५७॥

दशमें अध्ययन द्वितीय अङ्ग, च्यार वीसमौ गाह ।
 जीवित मरण न बंछणो, असंयम जीवित ताह ॥३८॥
 तेरमे अध्ययने द्वितीय अङ्ग, तीन बीसमौ गाह ।
 जीवण मरण न बंछणो, असंयम जीवित ताह ॥३९॥
 पनरम अध्ययने द्वितीय अङ्ग, दशमी गाथा माहि ।
 असंयम जीवित प्रते, मुनि आदर दिये न ताहि ॥४०॥
 तृतीय अध्ययने द्वितीय अङ्ग, तूर्य उद्देश विषह ।
 जीवित मरण न बंछणो, असंयम जीवित तेह ॥४१॥
 इत्यादिक बहु स्थान के, असंयम जीवित तोय ।
 बाल मरण नहिं बंछणो, भाष्यो श्री जिनराय ॥४२॥
 आप तणो नहिं बंछणो, असंयम जीवित सोय ।
 तो पर नूं बंछ्या यकां, धर्म पुण्य किम होय ॥४३॥
 बाल मरण पिण आपणे, बंछै नहिं मुनिराय ।
 पर नूं पिण बंछै नहीं, बंछ्या धर्म न थाय ॥४४॥
 परिहृत मरण ज आप रो, बंछै महा मुनिराय ।
 पर नूं पिण बंछै तिको, विमल विचारो न्याय ॥४५॥
 कच्ची सातमा अङ्ग में, पोषह विषै पिच्छाण ।
 मात बचावण जठियो, चूलणीपिया जाण ॥४६॥
 अमा तसु इम आखियो, भागो पोषह सोय ।
 वलि व्रत भागो कच्ची, भागो नियम सु जोय ॥४७॥

निशौथ उद्देशै ग्यारमें, पर ने भय उपजाय ।
 डरावता प्रति अनुमोदै, दण्ड चौमासी आय ॥६८॥
 ग्रहस्थ नी रक्षा करै, रक्षा करि प्रतेह ।
 अनुमोद्यां पिण दण्ड कछो, निशौथ तेरमें लेह ॥६९॥
 दशकैकालिक तौसरै, ग्रहस्थ तणी मुनिराय ।
 साता पूछ्यां सोलमो, अणाचार कछो ताय ॥७०॥
 ग्रहस्थ ती व्यावच कियां, आठ बीसमं न्हाल ।
 अणाचार मुनिवर भणी, दाख्यो परम कृपान ॥७१॥
 करै करावै जे नथौ, करता प्रते अवलौय ।
 मुनि अनुमोदै पिण नही, तो धर्म कहै किम सोय ॥७२॥
 अशनादिक ग्रहस्थो भणी, दियां मुनि ने दण्ड ।
 अनुमोद्यां पिण दण्ड कछुं, निशौथ पनरमें मंड ॥७३॥
 शस्त्र है षट्काय नूं, ग्रहस्थ तणो जे शरीर ।
 तसु तौखो करवा तणौ, किम आज्ञा दे वीर ॥७४॥
 घातिक जे षटः काय ना, तास बचावै कीय ।
 तसु प्रते आज्ञा किम दिखै, न्याय बिचारी जीय ॥७५॥
 ॥ हिव साधूरी आज्ञा बाहर रो ग्रहस्थ व्यावच
 करै तसु उत्तर ॥
 कोइ कहै साधू तणौ, व्यावच ग्रहस्थ करेह ।
 तेह विषे स्थूं फल हुवै, तसु उत्तर हिव लेह ॥७६॥

नवम उत्तराध्ययने कक्षुं, मिथिला बलती देख ।
 साहसूँ नवि जोयो नमो, टाल्यो राग विशेष ॥५८॥
 दशवैकालिक सातवें, पञ्चासमौ जे गाह ।
 माहोमांही सुर भिडै, इम मनु माहोमांही ॥५९॥
 तिर्यञ्च माहोमांही लडै, एहनी थावो जीत ।
 इणरी जय थावो मती, मुनि न कहै ए रीत ॥६०॥
 दशवैकालिक सातवें, इक्कावनमौ गाह ।
 वर्षा ने फुन बायरो, सौत उष्ण अधिकाह ॥६१॥
 राज विरोध रहित फुन, थावो देश सुगाल ।
 उंपद्रव रहित हुवो बली, इम न कहै मुनि माल ॥६२॥
 ए सातों होवो तथा, ए सातों मत होय ।
 ए विधि पिण न कहै कदा, अमल न्याय अवलोक्य ॥६३॥
 दिशा मुढ़ जे ग्रहस्थ ने, मार्ग बतायां दण्ड ।
 निशोथ उद्देशे तेरमें, चौमामिक प्रचण्ड ॥६४॥
 ठाणा अङ्ग ठाणे तीसरे, तृतीय उद्देशक भांय ।
 आत्म रक्षक तीन जे, आख्या श्री जिनराय ॥६५॥
 हिन्सादिक देखौ करी, दिवै धर्म उपदेश ।
 अथवा मौन रहै मुनि, समभावे सुविशेष ॥६६॥
 अथवा ऊठी त्यां थकी, एकन्त जागां जाय ।
 आत्म रक्षक ए कक्षा, पिण छोडावणो कक्षो नांय ॥६७॥

पिटूची प्रति दुःख रे, दूठी भूती सम कही ।
 गृही ममलै करमुक्त्त रे, तेहने पिण तसु लेख पुण्य ॥८५॥
 अटवी विप्रै अचेत रे, हय खर मगट बैसाण ने ।
 आपौ गृही पुर तैथ रे, तेहने पिण पुण्य तसु मतै ॥८६॥
 मुनि थाको मग मांहि रे, बोभ घणो पोथ्यां तणी ।
 पगभर खिश्यो न जाय रे, ती बोभ उठायां पिण धर्म ॥८७॥
 अरग्य बलि पुर मांहि रे, सन्त तप्रातुर चेत नही ।
 मचित उदक गृही पाय रे, तेह ने लेखै धर्म तसु ॥८८॥
 ब्रथादिक् अवलीय रे, गृही मुनि ना कार्य करै ।
 हरस छेदां धर्म होथ रे, तसु लेखै सहू में धर्म ॥८९॥
 मुनि नी हरस छेदन्त रे, तेहने अनुमोदै मुनि ।
 दगड चौमासी हुन्त रे, तृतीय उद्देश निशीथ मे ॥९०॥
 अनुमोदां ही पाप रे, तो गृही छेदां पुण्य किम ।
 जिन आज्ञा चित्त स्थाप रे, आज्ञा विन नही धर्म पुण्य
 सामायक पचखाण रे, निर्वदा कार्य अन्य बलि ।
 ग्रहस्थ करै को जाण रे, तो मुनि अनुमोदै तसु ॥९१॥
 निर्वदा कार्य ताहि रे, गृही कौधे धर्म पुण्य तसु ।
 अनुमोदै मुनिराय रे, तेहने पिण धर्म पुण्य कै ॥९२॥
 विषज अने व्यपार रे, सावदा कार्य अन्य बलि ।
 ग्रहस्थ करै तिवार रे, धर्म पुण्य तेह ने नथी ॥९३॥

जे व्यावच मुनि नौ करै, तसु आज्ञा प्रभु देह ।
 निरदोषण अशणादि कर, तेह विषै धर्म लेह ॥७७॥
 जे व्यावच मुनि नौ करै, प्रभु आज्ञा नहिं देह ।
 तेह विषै नहिं धर्म पुण्य, न्याय विचारौ लेह ॥७८॥
 साधू री हरस छेयां पुण्य शुभ क्रिया कहै
 तेहनं उत्तर ॥

सीलम शतकी भगवती, तृतीय उद्देश विमास ।
 हरस छेदै जे मुनि तणी, क्रिया कही प्रभु तास ॥७९॥
 हरस छेदूं हूं तुम तणी, इम पूछां अणगार ।
 आज्ञा न दिये गृही भणी, तिण सुं आज्ञा वार ॥८०॥
 कार्यं करावै नहिं मुनि, गृहस्थ कने जे अंश ।
 जवरी सूं जो को करै, तो न करै तास प्रगंस ॥८१॥

॥ सोरठा ॥

गृहस्थ मुनि नौ पेख रे, हरम छेदवै धर्म पुण्य ।
 तो मुनि ना कार्यं अनेक रे, तसु लेखै कौधां धर्म ॥८२॥
 मुनि पग कांटो जाण रे, बलि फांटो चक्षु धकी ।
 गृही काछै विण आण रे, तसु लेखै धर्म गृही भणी ॥८३॥
 दूखै पेट अपार रे, मुनि चित्त व्याकुल दुःख घणी ।
 गृही मसलै करसार रे, तेहने पिण पुण्य लेख तसु ॥८४॥

क्लिष्ट ही गृहस्थ पञ्चखाण रे, हरस छेदावा ना किया ।
 जवरी सूं पहिछाण रे, वैद्य हरस छेदै तसु ॥१०५॥
 नेम भङ्ग तसु नाहिं रे, पिण त्याग भङ्ग करवा तणो ।
 कामी वैद्य कहिवाय रे, तिण सुं धर्म न तेहने ॥१०६॥
 तिम मुनि रे पञ्चखाण रे, हरसं छेदावा गृही कने ।
 जवरी सूं पहिछाण रे, वैद्य हरस छेदै तसु ॥१०७॥
 नियम भङ्ग तसु नाहिं रे, पिण त्याग भङ्ग करवा तणो ।
 कामी वैद्य कहाय रे, तिण सुं नहिं तसु धर्म पुण्य ॥१०८॥
 वैद्य हरस छेदेह रे, अनुमोदै नहिं जे मुनि ।
 किम तसु धर्म कहिह रे, न्याय विचारो देखल्यो ॥१०९॥
 अनुमोदां ही पाप रे, तो छेदै तसु पुण्य किम ।
 तृतीय कारण अघ स्थाप रे, प्रथम कारण तो अधिक अघ
 पाप हुवै धुर कारण रे, ते अघनी अनुमोदना ।
 तीजै कारण उच्चरण रे, तिण लेखि तसु पाप है ॥१११॥
 प्रथम कारण पुण्य होय रे, ते पुण्य नी करणी प्रते ।
 अनुमोदै जे कोय रे, तास पाप क्लिष्ट विध हुवै ॥११२॥
 कारण वाला ने पुण्य रे, ते अनुमोदां पाप कहै ।
 प्रत्यक्ष बधन जवुम्य रे, न्याय दृष्टि करि देखिये ॥११३॥
 छेदै तिण ने पुण्य रे, ते पुण्य री करणी प्रते ।
 अनुमोदां जो पुण्य रे, तास पाप क्लिष्ट विध हुवै ॥११४॥

सावद्य कार्य ताहि रे, गृही कौधे पिण्य पाप छै ।
 अनुमोदै मुनिराय रे, प्रायश्चित्त आवै तसु ॥६५॥
 हरस छेदण री ताहि रे, आत्ता जिन मुनि न दियै ।
 अनुमोदै पिण्य नांहि रे, तिण्य सुं ते सावद्य अछै ॥६६॥
 ग्रहस्थ पासै जाण रे, कार्य करावा मुनि तणै ।
 जावज्जीव पञ्चखाण रे, मर्णान्ते पिण्य नियम ए ॥६७॥
 हरस गुम्बडा आदि रे, गृही पै छेदावण तणा ।
 मुनि ने त्याग संवाद रे, गृही छेदै जवरी-थकी ॥६८॥
 मुनि अनुमोदै नांहि रे, तो तसु त्याग भागै नहौ ।
 पिण्य कामी कहिनाय रे, त्याग भगावा नो गृही ॥६९॥
 तिण्य सुं सावद्य एह रे, बलि अनुमोदै पिण्य नहौ ।
 आत्ता पिण्य नहिं देय रे, ते माटे नहिं धर्म पुण्य ॥१००॥
 जे कामी गृही थाय रे, त्याग भगावा मुनि तणो ।
 धर्म नहिं तिण्य मांहि रे, न्याय दृष्टि अवलोकिये ॥१०१॥
 किय गृही अट्टम कौध रे, आहार च्यार त्यागन किया ।
 व्याकुल तृषा प्रसिद्ध रे, थयां अचेतन अन्य गृही ॥१०२॥
 उसनोदक तसु पाय रे, कियो सचेतन अधिक मुख ।
 नेम भङ्ग तसु नांय रे, पिण्य कामी त्याग भांगण तणो ॥१०३॥
 तेम इहां अवलौय रे, नेम भङ्ग मुनि नो नथौ ।
 पिण्य कामी गृही होय रे, त्याग भगावा मुनि तणो ॥१०४॥

धर्म पुण्य नहिं होय रे, ते सघला बोलां मभौ ।
 तो पाप गृही ने जोय रे, जिण आज्ञा नहिं ते भणौ ॥१२५॥
 तिम ते हरस छेदन्त रे, अशुभ क्रिया ते वैद्य ने ।
 मुनि नहिं अनुमोदन्त रे, धर्म पुण्य किण विध हुवै ॥१२६॥
 हरस छेद्यां शुभ कर्म रे, तो आचारंग मे कछ्छा ।
 व्यां सघला में धर्म रे, कहवो तिण रै लेख ए ॥१२७॥
 धर्म नहिं अन्य मांहि रे, तो छेदै ब्रणादि गृही ।
 तिण मे पिण पुण्य नांहि रे, ए सावद्य आज्ञा नथी ॥१२८॥
 हरस छेद्यां धर्म हुन्त रे, तो मुनि शिर सेती गृही ।
 जंवा पिण काडंत रे, तिण में पिण तसु लेख पुण्य ॥१२९॥
 वलि मुनिवर नी सोय रे, पग चरुपौ मईन करै ।
 करै जो औषध कोय रे, तसु लेखै पुण्य सह मभौ ॥१३०॥
 वृत्ति विषे इम बाय रे, धर्म बुद्धि छेद्यां थकां ।
 क्रिया हुवै शुभ ताय रे, अशुभ क्रिया लोभादि करि ॥१३१॥
 विरुद्ध अर्थ छै एह रे; सूत्र थकी मिलतो नथी ।
 मुनि नहीं अनुमोदेह रे, तास क्रिया शुभ किम हुवै ॥१३२॥
 इम शुभ क्रिया जो होय रे, तो औषध तैलादि करि ।
 मुनि तनु मई कोय रे, तास क्रिया पिण शुभ हुवै ॥१३३॥
 वलि मुनि पग थो ताय रे, खौले कांटो काडियां ।
 तसु लेखै कांछिवाय रे, तेहने पिण हुवै शुभ क्रिया ॥१३४॥

धर्म विना पुण्य नाहिं रे, शुभं जीर्णं थी निरजरा ।
 पुण्य बन्ध मिण धाय रे, ज्युं गहुं लारै खाखली ॥११५॥
 द्वितीय आचारंग मांय रे, तीरम अध्वयन ने विषै ।
 पाठ कच्चा जिनराय रे, ग्रहस्थ करै साधु तणा ॥११६॥
 मुनि तनु ब्रणज थाय रे, गृही छेदै शस्त्रे करी ।
 मुनि मन कर बञ्छै नांय रे, न करावै बचकाय करि ११७
 ब्रण छेदो ने ताहि रे, रुधिर राधि काटे गृही ।
 मुनि मनकरि बञ्छै नांहि रे, न करावै बचकाय करि ११८
 गृही मुनि पगवलि काय रे, तैल चोपडै मईने ।
 मुनि मन कर बञ्छै नांय रे, न करावै बचकाय करि ११९
 गृही मुनि पग थी ताहि रे, खीलो कांटी काडियां ।
 मन करि बञ्छै नांहि रे, न करावै बचकाय करि १२०
 मुनि मस्तक थी ताहि रे, गृही काटे जूं लीख प्रते ।
 मन करि बञ्छै नांहि रे, न करावै बचकाय करि १२१
 बोल इत्यादिक ताहि रे, ग्रहस्थ करै साधु तणा ।
 बञ्छै नहिं मुनिराय रे, द्वितीय आचारंग तीरमे ॥१२२॥
 मुनि अनुमोदै नांहि रे, तो ग्रहस्थ करै ए ऋषि तणा ।
 धर्म पुण्य तिण मांहि रे, क्षिण ही बोल विषै नथी १२३
 मुनि तनु ब्रण छेदन्त रे, धर्म कहै इक बोल में ।
 तो तसु लीखै हुन्त रे, धर्म सर्व बोलां मभौ ॥१२४॥

दूखे पेट मुनी तणो, मौत घात अवल्लोय ।
 बाई मसलै उदर तो, तसु लेखै धर्म होय ॥ ३ ॥
 वलि क्किण ही माधू तणो, ठलो पेटूचो ताम ।
 बहु दुःख-फेरोपी घणो, अन्न नहिं भावै आम ॥ ४ ॥
 ते पेटूचो मुनि तणो, बाई मसलै कोय ।
 तो उणरै लेखे तदम, तिण में पिण धर्म होय ॥ ५ ॥
 क्किण ही मुनि रो गोळो चळ्यो, बहु दुःख बाई देख ।
 गोळो मसलै तेहनूं, धर्म हुवै तसु लेख ॥ ६ ॥
 अग्नि विषै पड़ता प्रति, बाई बांह पकडेह ।
 वारै काडै तेहने, तो धर्म तसु लेखिह ॥ ७ ॥
 ऊंचा थो पड़तो मुनि, बाई भेले तास ।
 तिण मांही पिण धर्म छै, तेहने लेख विमास ॥ ८ ॥
 आखड पड़तां मुनि भणो, बाई भाल राखिह ।
 पड़ता ने बैठो करै, हुवै धर्म तसु लेखिह ॥ ९ ॥
 माथो दूखे मुनि तणो, बाई शिर दावेह ।
 मलम लगवे दूखणै, तसु पिण धर्म कहेह ॥ १० ॥
 पाटो बांधे - दूखणै, मुच्छी फुन मुसलेह ।
 इत्यादिक बहु मुनि तणा, बाई कार्य करेह ॥ ११ ॥
 दुःखो देख साधू भणो, मरतो देखो ताय ।
 पीडाणो देखी करी, साता करै सवाय ॥ १२ ॥

वलि मुनि शिर थी सोय रे, जूवा लीखां काडिया ।
 तसु लेखै अवलोक्य रे, तेहने पिण हुवै शुभ क्रिया ॥१३५॥
 मुनि अति तृषा अचेत रे, सचित अचित जल पाय कर ।
 कौधो ग्रहस्थ सचेत रे, तसु लेखै हुवै शुभ क्रिया ॥१३६॥
 धाको मुनि लजाड रे, गाडै हय खर चाढ़ करि ।
 आणै याम मभार रे, तसु लेखै हुवै शुभ क्रिया ॥१३७॥
 ब्रह्मादिक अवलोक्य रे, मुनि ने जे कल्प्ये नहीं ।
 ते करै कार्य्य गृहो कोय रे, तसु लेखै पिण शुभ क्रिया १३८
 जो यां बोलां रे माहि रे, न हुवै गृहो ने शुभ क्रिया ।
 तो हरस छेदां पिण ताहि रे, किम शुभ क्रिया कहिजिए ॥
 हरस छेदण री ताम रे, जिन मुनि आज्ञा नहिं दिये ।
 जिन आज्ञा विन काम रे, कौधां नहिं कै धर्म पुण्य ॥१४०॥

॥ इति अनुकम्पा अधिकार ॥

॥ अथ चौवीसमूं सुभद्राधिकार ॥

॥ दोहा ॥

फांटो काड्यो आख थी, सती सुभद्रा जेह ।
 किणहो सूत्र में ए नहीं, कथा विषे छे एह ॥ १ ॥
 जो सुभद्रा ने धर्म छे, तो मुनि ना अवलोक्य ।
 अन्य कार्य्य बाई कियां, तसु लेखै धर्म होय ॥ २ ॥

जो यां सह बोलां मभौ, जिन आज्ञा दे नांहि ।
 तो धर्म पुण्य पिण को नहीं, धर्म जिन आज्ञा मांहि ॥२३॥
 जे मुनिवर ने त्याग छै, ते कार्य अवलोक्य ।
 ग्रहस्थ करै को मुनि तणा, तास धर्म नहीं होय ॥२४॥
 जिन रीते जिणवर कछो, तिण रीते अवलोक्य ।
 अज्झा ने मुनिवर भणी, बचावियां धर्म होय ॥२५॥
 जे प्रभु सीखावै नहीं, न करै तास प्रशंस ।
 आज्ञा पिण देवै नहीं, तिहां धर्म तयो नहि अंश ॥२६॥

॥ इति: सुभद्राधिकार ॥

॥ अथ पचीसमूं गोशालाधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै कृष्णस्य प्रभु, चीनाणी था जेह ।
 किम चृका कहो वीर ने, तसु उत्तर हिव लिह ॥ १ ॥
 वलि तुम्ह कहो गोशाल ने, दीचा दीधी खाम ।
 ते किण सूत्र विषै कह्युं, तसु उत्तर पिण ताम ॥ २ ॥
 वलि अनुकम्पा करि प्रभु, राख्यो जे गोशाल ।
 ते विषै पिण स्थुं ययुं, तसु उत्तर पिण न्हाल ॥ ३ ॥
 शतक पनरमें भगवती, आया सावत्थी खाम ।
 उत्पत्ति गोशाला तणी, गौतम पूछी ताम ॥ ४ ॥

फांटो काड्यो सुभद्रा, धर्म हुसी ज्यो तास ।
 तो यांनि पिण धर्म छै, तिण रै लेख विमास ॥१३॥
 साधू रा कारज करै, बाई जे जिण रीत ।
 तिम कारज भाई करै, श्रमणी ना धर प्रीत ॥१४॥
 जो सुभद्रा ने धर्म छै, तो श्रमणी नो जोय ।
 भाई फांटो चांख थौ, काड्यां पिण धर्म होय ॥१५॥
 वलि कांटो पग मांदि थौ, श्रमणी तणोज सोय ।
 भाई काटे तेह में, तसु लेखे धर्म होय ॥१६॥
 वलि गोली श्रमणी तणो, पेट पेटूचौ जोय ।
 भायो मसलै तेह में, तसु लेखे धर्म होय ॥१७॥
 शिर दावे श्रमणी तणूं, भायो तसु दुख देख ।
 इम मुच्छी मसलै तसु, धर्म होसी तसु लेख ॥१८॥
 मलमलगावै दूखणै, वलि अज्भा पड़ती जोय ।
 भायो भेलै तेहने, तसु लेखै धर्म होय ॥१९॥
 पड़ती ने बैठी करै, इत्यादिक अवलोय ।
 श्रमणी ना भायो करै, तसु लेखै धर्म होय ॥२०॥
 साधू रा बाई करै, तास धर्म छै सोय ।
 तो श्रमणी ना भायो कियां, तिण में अब किम होय ॥२१॥
 सुभद्रा फांटो काडियो, जो तिण में धर्म होय ।
 तो सारां में धर्म छै, न्याय सरिषो जोय ॥२२॥

तन्तुवाय शाला विषै, गोशालो तिहवार ।
 मुक्त प्रति तिण देख्यो नही, जोयोभयन्तर बार ॥१५॥
 मुक्त अण देख्ये निज उपधि, ब्राह्मण ने दे ताय ।
 मूंडी दाडी मूंक प्रति, मिळ्यो ज मुक्त सूं आय ॥१६॥
 तीन प्रदक्षिण दे करी, जाव नमी कहै मुज्ज ।
 ये धर्माचार्य माहरा, छ' धर्म अन्तेवासी तुज्ज ॥१७॥
 तब मै गोशालक तणां, एह अर्थ प्रति सोय ।
 अह्नीकार कौधो तदा, पाठ विषे इम जोय ॥१८॥
 वृत्तिकार कहुं एहवा, अजोग ने पिण जेह ।
 अह्नीकार कौधो प्रभु, ते अक्षीण राग पणेह ॥१९॥
 बलि तेहना परिचय थकी, ईषत् थोडी जाण ।
 स्नेह गर्भ अनुकम्पना, सद्भावे पहिछाण ॥२०॥
 प्रभु छद्मस्थ पणै करि, जेह अनागत काल ।
 तेह विषे जे दोष ना, अजाणवा थी न्हाल ॥२१॥
 अवश्य होणहार भाव थी, कियो प्रभु अंगीकार ।
 अभय देव सुरे कछो, वृत्ति विषे ए सार ॥२२॥

॥ ते टीका कहै छै ॥

अभ्युप गच्छामि यच्चेतस्य अयोगस्याप्यभ्युगमनं भगवत स्तदक्षीण
 रागतया परिचये नैपत्स्नेह गर्भानुकम्पासद्भावात् छद्मस्थ तयाऽजा-
 गत दोषानवगमाद्ऽवश्यं भावीत्वाच्च तस्यार्थेति भावनीयं ।

वीर कहै सुण गोयमा, गौ नी शाला मांय ।
 ए जन्म्यो तिण कारणै, नाम गोशाल कहाय ॥ ५ ॥
 हूं तीस वर्ष घर में रही, ग्रह्यं चरण मुख राशि ।
 प्रथम वर्ष पख पख सुतप, अट्टी ग्राम चौमास ॥ ६ ॥
 तप मास मास दूजै वर्ष, नगर राजग्रह वार ।
 नालंदा पाडा मझै, चौमासो सुविचार ॥ ७ ॥
 तन्तूवाय शाला विषै, हूं तप करत विशेष ।
 आय रञ्जो गोशाल पिण, ते शाला इक देश ॥ ८ ॥
 प्रथम मास नूं पारणो, विजय तणै घर कीध ।
 प्रगट हुषा जे पञ्च द्रव्य, महिमा देख प्रसिद्ध ॥ ९ ॥
 गोशालो कछो मुझ भणौ, ये धर्माचार्य सोय ।
 धर्मान्तिवासी प्रभु, हूं तुम्ह नो अवलोय ॥ १० ॥
 तब मैं तेहना बचन ने, आदर न दियो कोय ।
 मन में भलो न जाणियो, धारी मौन सु जोय ॥ ११ ॥
 द्वितीय मास नो पारणो, आणन्द ने घर कीध ।
 तिमहिज गोशाले कछो, मैं आदर नहीं दीध ॥ १२ ॥
 तृतीय मास नूं पारणो, कियो सुदर्शन गेह ।
 तिमहिज गोशाले कछो, मैं आदर नहीं देह ॥ १३ ॥
 तूर्य मास नूं पारणो, कोलाक संनिवेश ।
 ब्राह्मण बहुल तणै घरे, करि चाल्यो सुविशेष ॥ १४ ॥

माटो मूल सहित तिण, तुरत उपाडी जेह ।
 एकन्ते न्हाख्यो तदा, ते तिल थन्न प्रतेह ॥३२॥
 तत्तिण थोडी वृष्टि करि, थंन्यो तिल थन्न स्थान ।
 थया सप्त तिल फूल चवि, एक फलो मे आण ॥३३॥
 गोशाला साथे तदा, ह्यं आयो कुर्म ग्राम ।
 तेहि नगर रे बाहिरै, बाल तपस्वी ताम ॥३४॥
 नाम वैसियायिण तिको, तप छट्ट छट्ट करेह ।
 रवि सन्मुख आतापना, तिहां लेतो विचरेह ॥३५॥
 तमु शिर थी रवि ताप करि, यूंका भूमि पडन्त ।
 तास दया अर्थे तिको, बलि २ शिरै धरन्त ॥३६॥
 तब गोशालो मुक्त पाम थी, बाल तपस्वी पाहि ।
 धीरै धीरै आय मे, बोल्ह्यो एहवी वाय ॥३७॥
 स्युं तूं मुनि तपस्वी अछे, तथा तत्व नूं जाण ।
 यती तथा तूं कदाग्रही, कै जूं सिज्यातर माण ॥३८॥
 गोशाला ना बचन ने, तिण आदर नहिं दीव ।
 मन में भलो न जाणियो, साधी मौन प्रसिद्ध ॥३९॥
 बे वण वार गोशाल तब, बोल्ह्यो तिमहिज बाण ।
 स्युं तूं मुनि तपस्वी अछे, जाव जूंभां रो स्थान ॥४०॥
 बाल तपस्वी शीघ्र तब, कोप चढ्यो असराल ।
 जे आतापन भूमि थी, पाछो बलियो न्हाल ॥४१॥

॥ दोहा ॥

तदन्तर ह्रं गीयमा, गोशाला रे साथ ।
 भोगविया षट् वर्ष लग, लाभ अलाभे सञ्जात ॥२३॥
 सुख दुःख ने सत्कार फुन, असत्कार फुन सीय ।
 अनित्य जागरणा जागतो, ह्रं विचख्यो अवलौय ॥२४॥
 मृगशिर मासे एकदा, ह्रं गोशाला साथ ।
 जे सिद्धार्थ ग्राम थी, कुर्म ग्राम प्रति जात ॥२५॥
 तिल बूटो इक देख ने, मुक्त प्रति तब गोशाल ।
 ए तिल नौपजसेक नहीं, इम पूख्यो तिह काल ॥२६॥
 सप्त जीव तिल पुष्प ना, मरी २ ने ताय ।
 किहां उपजसे हे प्रभु ! तब ह्रं बोख्यो वाय ॥२७॥
 नौपजसे तिल थम्भ ए, फूल जीव जे सात ।
 मरी मरी ए एह ने, तिल थम्भ विषै विख्यात ॥२८॥
 एक फली जे तिल तणी, तेह विषै अवलौय ।
 ए तिल सप्त ह्रस्ये सही, इम मै' भाष्यो सीय ॥२९॥
 तब गोशाले मुक्त वचन, श्रद्धो नहिं मन मांहि ।
 प्रतीतियो पिण नहो तिणे, रोचवियो पिण नांहि' ॥३०॥
 मुक्त ने भूठो घालवा, धीरे धीरे तास ।
 पाछो बल ने आवियो, ते तिल बूटा पास ॥३१॥

॥ दोहा ॥

उष्ण तेजु प्रति संहरी, मुक्त प्रति बोल्यो वाय ।
जाण्या भगवन् आपने, जाण्या २ ताहि ॥५०॥
आप तणा ज प्रसाद थी, दग्ध हुआ नहिं एह ।
संभम थी गत शब्द ने, बार २ उचरेह ॥५१॥

॥ गीतक छन्द ॥

काच्युं वृत्ति में गोशाल नो भगवन्त संरक्षण कियो ।
सराग भावि करि प्रभु दूक दया रस थी राखियो ॥
जे उभय मुनि नवि राखस्ये ते बीतराग पणै वृत्ती ।
फुन लब्धि अण फोडण थकी बलि अवश्य भावी भाव थी ॥

॥ अत्र टीका ॥

इह च यद्गोशालकस्य संरक्षणं भगवताः कृतं तत्सरागत्वेन वद्यै
करसत्त्वाद्भगवतः यच्च सुनक्षत्रसर्वाणुभूति मुनिपुंगवयोर्न करिष्यति
तद्गीतरागत्वेन लब्धिनुपजीवकत्वात् अवश्यं भावित्वाद्दे त्यवसेयं ॥इति॥

॥ दोहा ॥

गोशालो तिण अवसरै, मुक्त प्रति बोल्यो वाय ।
जूं सिध्यातरियो किसूँ, तुक्त प्रति भाषै ताहि ॥५३॥
जाण्या भगवन्त तो भणी, जाण्या जाण्या सोय ।
तब हूँ गोशाला प्रति, इम बोल्यो अवलौय ॥५४॥

समुद्घात तेजस प्रति, करै करी अवलोक्य ।
 सात आठ पग ते तदा, पाछो उसरी सोय ॥४२॥
 मंखलि पुत्र गोशाल ने, हणवा काजे जाण्य ।
 काठे तेज शरीर थी, ए तेजु उष्ण पिच्छाण ॥४३॥
 तिण अवसर हूँ गोयमा, गोशालका नी जेह ।
 तेह मंखलि पुत्र नी अनुकम्पा अर्थेह ॥४४॥
 बेसियायण नामे तिको, बाल तपस्वी जेह ।
 तेह तणी जे तेज प्रति, दूर हरण अर्थेह ॥४५॥
 तापस ने गोशाल रै, इहां विचाली न्हाल ।
 शीतल तेजु लेश्य प्रति, मैं भूंकौ तिण काल ॥४६॥

चौपाई ॥

जा मुभ शीतल तेजुलेशं, तिण लेश्या करि ने सु-
 विशेषं । बेसियायण तापस नी जाणी, उन्ही तेजु लेश
 हणाणी ॥४७॥ बेसियायण तपस्वी तिह अवसर, मुभ
 शीतल तेजु लेश्या करि । पोता नी जे उष्ण पिच्छाणी,
 तेजु लेश्य हणाणी जाणी ॥४८॥ गोशाला मा तनु ने
 ताछो, जाण्यो किञ्चित पीड़ न पायो । देख्युं छवि छेद्
 अण्य करतो, ते उष्ण तेजु लेश्य संहरतो ॥ ४९ ॥

॥ दोहा ॥

तिण अवसर गोशाल ते, सांभल वच मुक्त पास ।
 बिह्नो यावत् पामियो, अत ही भय मन वास ॥६३॥
 मुक्त प्रति वन्दौ नमण करि, इम बोल्हो अवलोय ।
 संचिप्त विस्तीर्ण प्रभु, तेज लेश किम होय ॥६४॥
 तिण अवसर हूँ गोयमा, गोशाला प्रति ताहि ।
 तेह मंखली पुत्र प्रति, बोल्हो इह विध बाय ॥६५॥
 इक मूँठौ उडदै करी, फुन जे उठ्य जलैह ।
 इक पुशली तप छट छटे, अन्तर रहित करैह ॥६६॥
 ऊँची वांइ आतापना, सूर्य सनमुख लैह ।
 तमु केहडै षट् मास रै, तेजु लेश हूँ तेह ॥६७॥
 गोशालक तिण अवसरै, ए मुक्त अर्थ प्रतेह ।
 सम्यक् प्रकारे विनय करि, अंगीकृत करैह ॥६८॥
 तिण अवसर हूँ गोयमा, गोशालक संघात ।
 अन्य दिवस कुर्म ग्राम जे, नगर थकी विख्यात ॥६९॥
 सिद्धार्थ फुन ग्राम जे, नगरे आवत ताम ।
 जे तिल थम्भ मुक्त पूछियो, भट आब्यो ते ठाम ॥७०॥
 तव गोशालो मुक्त प्रते, बोल्हो एहवी बाय ।
 मुक्त ने प्रभु तुम्ह जद कछुं, तिल निपजसी ताहि ॥७१॥

हे गोशाला तू इहां, बेसियायण नामेह ।
 बाल तपस्वी प्रति तदा, देखी नेत्र करेह । ५५॥
 धीरै धीरै जसरी, मुक्त पासा थी ताहि ।
 जिहां बेसियायण तिहां, जई बोल्थो द्रम बाय ॥ ५६॥

चौपाई ॥

स्यं तूं मुनि तपस्वी छै कोई, तथा तत्व नो जाण
 सु होई । स्यं तूं यती कदाग्रही कहियो, के तूं जूं नूं
 सिद्धात्तरीयो ॥ ५७॥ बेसियायण तपस्वी तिहवारं, तुम्ह
 बच आदर न दिये लिंगारं । मन में पिण भलो न
 जाणे. रक्षो मून धरी तिह टाणै ॥ ५८॥ अहो गोशाला
 तूं तब हेर, तिण बाल तपस्वी प्रतिज फेर । तूं मुनि कै
 जाव जूं सीया तरियो, द्रम बी वण वार उच्चरियो ॥ ५९॥
 तब बाल तपस्वी शीघ्र कोप्यो, जाव पाछो जसर चित्त
 रोप्यो । तुम्ह हणवा तेजू लूकेह, तब हूं तुम्ह अनुकम्पा
 अर्थेह ॥ ६०॥ तिणरी उषण तेजू हणवा न्हाल, रूंकी
 शीतल तेजू अन्तराल । तब बाल तपस्वी चित्त ठाणी,
 उषा तेजू हणाणी जाणी ॥ ६१ ॥ धौड तुम्ह तनु नवि
 देखेह । उषण तेजु लीश्या संहरेह । तब मुक्त प्रति
 बोल्थो बाय, जाख्या २ हे भगवन् ताहि ॥ ६२ ॥

द्रुम निश्चय गोशालका, बनस्पति रै मांहि ।

पउट्ट परिहार करै तिकी, मरि मरि तमु तन आय ॥८२॥

॥ टीका ॥

पारिवृत्य २ मृत्वा २ यस्तस्यैव बनस्पति शरीरस्य परिहारः परि-
भोग स्तत्रे बोल्यादो सौ परिवृत्य परिहारस्त ।

॥ वार्त्तिका ॥

घनस्पति कहतां बनस्पति ना जीव जे पारिवृत्यं २ क० मरी मरी
ने पहिज बनस्पति ना शरीर नो परिहार क० परिभोग ते तिहाँइज
उपजनुं ते पारिवृत्य परिहार कहिइं ते प्रति परिहरति कहतां करै ॥

॥ दोहा ॥

तिण अवसर गोशाल ते, मुभा द्रुम कछे छतेह ।

एह अर्थ अइ नहौं, नहौं प्रतीत न रुचेह ॥८३॥

एह अर्थ अण अइतो, जिहां तिल स्यम्भ त्यां आय ।

ते तिल थम्भ थौ तिल तणी, सङ्गखी तोड़ै ताहि ॥८४॥

ते तिल सगली तोड़ने, करतल विषै ज सोय ।

सप्त तिल पाड़ै तदा, प्रगट पणै सु जोय ॥८५॥

तिण अवसर गोशाल ने, गिणतां ते तिल सात ।

एहवुं मन में चिन्तव्युं, जाव समुत्पन्न जात ॥८६॥

द्रुम निश्चय सह जीव पिण, पउट परिहार करेह ।

हे गोतम गोशाल नूँ, पउट वाद कछुं एह ॥८७॥

तिमज सप्त पुष्प जीव चवि, एक संगली मांय ।
 हुस्ये सप्त तिल तेह बच, मिथ्या प्रत्यक्ष दिखाय ॥७२॥
 ते तिल स्थम्भ न नोपनो, सप्त पुष्प ना जीव ।
 चवी सप्त तिल नवि थया, इक संगणौ मे अतीव ॥७३॥
 तिण अवसर हूं गोयमा, गोशालक प्रति बाय ।
 वोल्हो तैं मुक्त जद बचन, अह्यो नहि मन मांय ॥७४॥
 प्रतीतियो नहिं रोचव्यो, एह अर्थ अवलोय ।
 मनमे अश्रद्धतो छतो, भूँठो घालण मोय ॥७५॥
 ए मिथ्यावादी हुवो, इम मन करो विचार ।
 मुक्त थौ पाछो ऊसरी, धीरै धीरै धार ॥७६॥
 जिहां तिल थंभ तिहां आयने, यावत एकान्त ठाम ।
 न्हांख्यो ते उपाड ने, हे गोशालक तांम ॥७७॥
 तत्खिण वादल अम् दिख्य, प्रगट थयो तिहवार ।
 अम् बदल ते शौन्न हौ, तिमहिज यावत धार ॥७८॥
 तेह तिलनां स्थंभ नी, एक संगली मांहि ।
 तदा ऊपना सप्त तिल, जेम कह्युं तिम ताहि ॥७९॥
 हे गोशाला तेह ए, तिल नूं स्थंभ निप्यन्न ।
 नथौ तेह अण नोपनूं, निश्चय करो सुजन्न ॥८०॥
 तेह सप्त पुष्प जीव चवि, ए तिल स्थंभ नौ जाण ।
 एक सगली ने विषै, थया सप्त तिल आण ॥८१॥

रे काशव तूं इम कहै, मखलो सुत गोशाल ।
 धर्मान्तेवासी मांहरो, पिण छं नही तेन्हाल ॥६६॥
 मखलो सुत गोशाल ते, धर्मान्तेवासी तोय ।
 ते तो काल करौ गयो, सुरलोकि अवलोय ॥६७॥
 महाकल्य चौरासी लक्ष, सप्त देव भव सार ।
 सप्त संयूथा सन्नि गर्भ, सप्त पडट परिहार ॥६८॥
 इत्यादिक निज शास्त्र नी, वक्तिका कही बणाय ।
 जीव उदाई नाम छं, पिण गोशालो नांय ॥६९॥
 गोशाला रै तनु विषै, अम्हे कौधूं प्रवेश ।
 सप्तम् पौट परिहार ए, इत्यादिक जे अशेष ॥१००॥
 चोर तणो दृष्टान्त प्रभु, गोशाला ने दौध ।
 तब गोशालो बोलियो, अगल डगल बहु विध ॥१०१॥
 श्रवानु भूक्ति मुनि तदा, गोशाला पै आय ।
 भगवन्त ने अनुराग करि, बोल्यो एहवौ बाय ॥१०२॥
 समय माहण पै एक पिण, आर्य्य बच धारिह ।
 तो पिण तसु बन्दै नमै, यावत सेव करेह ॥१०३॥
 तो स्युं कहियो गोशाल तुम्ह, भगवन्त प्रवर्या दौध ।
 निश्चय भगवन्त मंडियो, शिष्य पणै सुप्रसिद्ध ॥१०४॥
 वृत्ति पणै करिने बली, सेव्यो भगवन्त तोय ।
 सीखावौ भगवन्त तुम्ह, तेजु लेश अवलोय ॥१०५॥

हे गोतम गोशाल नूं, मुझ पासा थी जेह ।
आत्मइं करि कै तसु, पडिवुं जुदो कहैह ॥८८॥
॥ वार्त्तिका ॥

आयाए पाठ नो अर्थ, वृत्तोकार आयाए पाठ ना वे अर्थ क्रियाः—
भगवन्त कहै म्हाए पासा थी आयाए कहतां आत्मई करी अपक्रम ते
जुदो पडयो निसखो अथवा आयाए कहतां आदाय तेजू लेश्या नूं
उपदेश ग्रहण करी ने जुदो पडयो ।

॥ इति आयाए पाठ नूं अर्थ ॥

तिण अवसर गोशाल ते, इक मुठि उडदेह ।
इक पुसलो उणोदकी, छट् यावत् विहरैह ॥८९॥
तिण अवसर गोशाल ते, षट् मासे अवलीय ।
संक्षिप्त विस्तोर्ण तिका, तेजु लिख्यवन्त होय ॥९०॥
तिण अवसर गोशाल पै, पाष्वर्धनाथ ना जोय ।
षट् साधू भागल हुन्ता, आवी मिलिया सोय ॥९१॥
गोशाला ने गुरु पणै, पडिवज्ज्म रहिता जेह ।
ते साथै तिमहिज सहू, पूर्व कछ्छा तिम लेह ॥९२॥
यावत् ए अजिन कृतो, पिण जिन शब्द उच्चार ।
प्रकाशमान कृतो ज ए, विचरै छै इहवार ॥९३॥
मोटौ प्रषध ने विषै, वीर कहौ ए बात ।
गोशालो सुण कोपियो, निज संघ प्रति ले साथ ॥९४॥
वीर समीपै आय ने, बोल्यो एहवी वाय ।
भलो कहै रे काशवा, आछो कहै रे ताहि ॥९५॥

छद्मस्थ थकी छः मास मे, काशव काल करेह ।
 प्रभु कहै ह्रं वर्ष सोल लग. गन्ध गज जिम विचरेह ॥११६॥
 ते मूँकी तेज तिका, पेठौ तुम्ह तनु न्हाल ।
 तेह थौ सप्तम निशि मझै. तूं करसी छद्मस्थ काल ॥११७॥
 पुर मे जन कहै उभय जिन, लवै माहो मांहि वाय ।
 कुण मांचो भूँठो कंवण, आश्चर्य ए अधिकाय ॥११८॥
 गोशालो निज स्थान जई, सप्तम निशि सुविचार ।
 सम्यक्त पामो आत्म निन्द, काल कियो तिहवार ॥११९॥
 प्रभु वेदन षट् मास सही, पछे विजोरा पाक ।
 लोधै तनु प्राक्रम वध्यो, प्रभुजी होगया चाक ॥१२०॥
 गोथम तत्र वे मुनि तणो, पूछो फुन पूछेह ।
 अन्तेवासी आपरो, कुशिष्य गोशालक जेह ॥१२१॥
 काल करौ ने किहां गयो. प्रभु भाष्यो सुविशाल ।
 अन्तेवासी मांहरौ, कुशिष्य गोशालक न्हाल ॥१२२॥
 श्रमण घातक छद्मस्थ थकी, काल करौ सुजगौस ।
 अच्युत् कल्पै ऊपनो, स्थिति सागर बाबौस ॥१२३॥
 भगवतो पनरमे शतक मे, छै बहुलो विस्तार ।
 इहां संक्षेप थकी कछो, गोशालक अधिकार ॥१२४॥
 कही सूत्र में तिमज कछुं, हिव तसु कहिये न्याय ।
 प्रभु शिष्य कियो गोशाल ने, बलि वचायो ताय ॥१२५॥

वलि भगवन्त बहु श्रुत क्रियो. भगवन्त थकी ज सोय ।
 भाव अनार्य पडिवज्जियो, ते माटे अवलोय ॥१०६॥
 मति इम हे गोशाल तुम्ह, कारण योग नहिं एह ।
 तेहिज छाया ताहरौ, नही अनेरौ जेह ॥१०७॥
 सुण गोशालो कोपियो, तेजु लेश करि ताम ।
 श्रवानु भूति मुनि प्रते, भस्म क्रियो तिण ठाम ॥१०८॥
 द्वितीय वार गोशाल फुन, कठिन बचन अधिकाय ।
 नष्ट विणष्टादिक कच्चा, तब सुनच्च मुनिराय ॥१०९॥
 जिम श्रवानुभूति कच्चो, तिमहिज कच्चो विचार ।
 गोशालो तब तेज करि, परितापै तिहवार ॥११०॥
 प्रभु पै आवी बन्दि नम, महाव्रत प्रति आरोप ।
 सन्त सत्यां ने खाम ने, कीधो काल अकोप ॥१११॥
 तृतीय वार गोशाल फुन, प्रभु प्रति निठुर वदेह ।
 तब प्रभु गोशाला प्रते, मुनि कच्चो तिमज कहिह ॥११२॥
 हे गोशाला तो भणी, मैं प्रवर्ज्या दीध ।
 यावत मैं बहु श्रुति क्रियो, म्लेच्छ भाव ते कीध ॥११३॥
 गोशालो सुण कोपियो, तनु थौ काटै तेज ।
 प्रभु तनु परितापै तदा, पिण तनु नहिं पेसिज ॥११४॥
 गोशाला रा तनु विषै, पाछी पैठी आय ।
 लागी दाह शरीर में, बोळ्यो प्रभु प्रति वाय ॥११५॥

॥ दोहा ॥

अक्षीण राग पणो करी, अङ्गीकार प्रति ख्यात ।
 ते राग भाव में धर्म किम, समभो सुगण सुजात । १३४।
 बलि परिचय करी ने कछो, ईषत् स्नेह अनुकम्प ।
 एह कार्य आछो हुवै, तो इह विध क्षेम पर्यम्प ॥ १३५ ॥
 अक्षीण राग पणा विषै, परिचा विषय मुजोय ।
 स्नेह अनुकम्पा ने विषै, भलो कार्य किम होय । १३६।
 बलि अनागत दोष ना, अजाणवा थो जोय ।
 अङ्गीकार कौधो कछो, ते दोष किसी अवलोय । १३७।
 ए तिल नौपजसे कछो, तिणदौधो तुरन्त उपाड़ ।
 हिन्सा जीवारीं हुई, ए अवगुण अवधार ॥ १३८ ॥
 बलि लब्ध फोड गोशाल नो, रक्षक कौधो ताय ।
 तिण बहु मिथ्यात बधावियो, ए पिण अवगुण थाय । १३९।
 बलि तेजु लेश्या प्रते, सौखावो भगवान ।
 तिण लेश्याइ मुनि हण्णा, ए पिण अवगुण जान । १४०।
 बलि प्रतापना प्रभु ने करी, तेजु लेश्य करेह ।
 वेदन अति षट् मास सही, प्रत्यक्ष अवगुण एह ॥ १४१ ॥
 बलि तिल बूटो नौपनो, एम कछो भगवान ।
 तत्क्षिण तिणे उपाडियो, ए पिण अवगुण जान ॥ १४२ ॥

गोशाला नौ वारता, प्रभुजी धुर सूं ख्यात ।
 मास २ तप द्वितीय वर्ष, म्हे कौधो सुविख्यात ॥१२६॥
 प्रथम मास ने पारणै, विजय तणै घर कौद्ध ।
 गोशालो कच्छो आप गुढ, ह्रं तुम्ह शिष्य प्रसिद्ध ॥१२७॥
 तसु अङ्गीकार मै नवि कियो, द्वितीय मास ने जाण ।
 पारण गोशालै कच्छुं, तिणहिज रीत पिछाण ॥१२८॥
 अङ्गीकार न कियो तदा, तृतीय मास रै जेह ।
 पारण फुन गोशाल कच्छुं, पिण मै अङ्गीकृत न करेह ॥१२९॥
 जो शिष्य करवा नी रीत ह्रुवै, ती प्रथम वार ही पेख ।
 अङ्गीकार करता प्रभु, न्याय विचारौ देख ॥१३०॥
 तूर्य मास ने पारणै, तिमज कच्छुं गोशाल ।
 मुम्ह धर्माचार्य तुम्हे, ह्रं धर्मअन्तेवासौ न्हाल ॥१३१॥
 मै अङ्गीकार कौधो तसु, इम कच्छो सूत्र विषेह ।
 वृत्तिकार एहवो कच्छुं, सांभलजो चित्त देह ॥१३२॥

॥ गीतक छन्द ॥

अक्षीण राग पंणा थकी, परिचय करौ ने जानियं ।
 ईषत् स्नेह अनुकम्पना, सद्भाव थी पहिछानियं ॥
 अह्वा अनोगत दोष ना, अजाणवा थी आइतं ।
 फुन अवश्य भावी भावधीज, अजोग प्रति अङ्गीकृतं ॥

प्रभु कच्चो अन्तेवासौ मुक्त, कुशिष्य गोशाल जगौश ।
 अच्युत्कल्पै जपनो, स्थित सागर बावीस ॥१५३॥
 नवमें शतकी भगवती, तैतीसम उद्देश ।
 गौतम पूछ्यो वीर प्रति, सांभल जो सुविशेष ॥१५४॥
 अन्तेवासौ कुशिष्य तुक्त, जमाली अणगार ।
 काल करौ किहां जपनो, प्रभु भाषै तिहवार ॥१५५॥
 अन्तेवासौ कुशिष्य मुक्त, जमाली अणगार ।
 लन्तक कल्पै जपनो, किल्विष पणै विचार ॥१५६॥
 जमाली ने कुशिष्य कच्चुं, तिमहिज कुशिष्य गोशाल ।
 ते माटे बिहुं शिष्य हुन्ता, देखो नयण निहाल ॥१५७॥
 अन्तेवासौ बिहुं भणी आख्या श्री जगनाथ ।
 बलि कुशिष्य बिहुं ने कच्चा, देखी तज पखपात ॥१५८॥
 कुपूत कहिवै पूत धुर, तिणहिज रौत पिछाण ।
 कुशिष्य कहिवै शिष्य धुर, समभो चतुर मुजाण ॥१५९॥
 अंगीकृत आख्यो प्रथम, श्रवानुभूति ख्यात ।
 कच्चो मुनचत्र मुनि बलि, फुन प्रभु कच्चो विख्यात ॥१६०॥
 तास कुशिष्य कच्चो बलि, ए पञ्च ठाम पहिछान ।
 दीक्षा गोशाला तणी, देखीजी बुद्धिवान ॥१६१॥
 नवमें ठाणै वृत्ति में, जिन छद्मस्थ मुजोय ।
 दीक्षा न दिये इम कच्चो, शिष्य वर्ग ने सोय ॥१६२॥

एम अनागत दोष ना, अजाणवा थी न्हाल ।
 प्रभु छद्मस्थ पणै कियो, अङ्गीकृत गोशाल ॥१४३॥
 जो ए अवगुण जाणता, तो केम करै अङ्गीकार ।
 पिण उपयोग दियो नहौं, वारुं न्याय विचार ॥१४४॥
 जो अपर अनागत दोष हुवै, तो कहिये तसु नाम ।
 प्रगट वृत्ति में आखियो, दोष अनागत ताम ॥१४५॥
 कोई कहै गोशाल ने, अङ्गीकार कृत ख्यात ।
 पिण दीक्षा दीधी इसो, किहां पाठ अवदात ॥१४६॥
 श्रवानु भूति मुनि कछो, हे गोशाला तोय ।
 प्रवर्ज्या दीधो प्रभु, बलि प्रभु मूढो सोय ॥१४७॥
 वृत्ति पणै सेव्यो प्रभु, सीखायो भगवान ।
 बलि बहुश्रुति प्रभु कियो, प्रगट पाठ पहिछान ॥१४८॥
 द्रमज सुनचत्र मुनि कछो, द्रम प्रभु कछो प्रसिद्ध ।
 हे गोशाला तो भणी, रूहे ज प्रवर्ज्या दीध ॥१४९॥
 यावत् मै' बहु श्रुत कियो, मुझ सेती इहवार ।
 भाव अनाथ्यै पडिबज्यो, द्रम आख्यो जगतार ॥१५०॥
 तब गोशाले जिन उपरै, मंकी तेजू लेश ।
 प्रभु षट् मास लगे सहौ, वैदन अधिक विशेष ॥१५१॥
 जे षट् मास थयां पकै, प्रभु तनु थयो निराम ।
 गौतम पूछ्यो कुशिष्य तुझ, मर उपनो किण ठाम ॥१५२॥

भावै स्नेह अनुकम्प कहो, भावै मोह अनुकम्प ।
 श्री जिन आज्ञा बार है, सावद्य ते प्रपञ्च ॥१७०॥
 मोह कर्म ना उदय थी, स्नेह राग ए होय ।
 तिण सुं स्नेह अनुकम्प ते, मोह अनुकम्पा जोय ॥१७१॥
 स्नेह किण सुं करिवो नहिं, भाष्यो श्री जिनराय ।
 उत्तराध्ययने आठमें, दूजी गाथा मांय ॥१७२॥
 ईषत् स्नेह अनुकम्प कही, ते अनुकम्पा सोय ।
 सावद्य पाप सहित्त है, अथवा निर्वद्य जोय ॥१७३॥
 जो निर्वद्य अनुकम्प ए, तो ईषत् क्युं ख्यात ।
 पूरण कृपा करि प्रभु, द्रुम कहता अवदात ॥१७४॥
 ईषत् स्नेह अनुकम्प ए, जो सावद्य है सोय ।
 तो सावद्य में धर्म नहीं, हिये विमासी जोय ॥१७५॥
 ईषत् लोभ भलो नहीं, ईषत् भलो न मान ।
 ईषत् माया नहीं भली, तिम ईषत् स्नेह जान ॥१७६॥
 ईषत् भूठ भलो नहीं, ईषत् भलो न क्रुद्ध ।
 ईषत् अदत्त भलो नहीं, तिम ईषत् स्नेह अशुद्ध ॥१७७॥
 गोतम ने जिन स्नेह थी, अटक्यो केवल ज्ञान ।
 तो गोशाला रा स्नेह थी, धर्म पुण्य किम जान ॥१७८॥
 काल अनागत दोष पिण, वृत्तिकार आख्यात ।
 तो प्रशंसवा योग्य ए, कार्य्य किम कहात ॥१७९॥

॥ अथ ठाणांग नवमें ठाणौ टीका में कह्यो
छै तीर्थकर छद्मस्थ थका दीक्षा न दियै
ते गाथा लिखिए छै ॥

न परोवए सिया नय, छउमत्था परोवए ।
संपि दिविनय सौस वग्गां, दिरकन्ति जिणां जहासव्वे ॥
केवल उपजियां विना, दौद्धा दीधौ आप ।
अच्चौण राग पणै करौ, परिचय स्नेह प्रताप ॥१६३॥
वलि अजाण पणा थकौ, जेह अनागत दोष ।
वृत्तिकार पिण इम कच्चो, तो मुझ थी क्यं अपसोस ॥
अयोग ने अंगीकार कृत, एम कच्चुं वृत्तिकार ।
जे दौद्धा देवा योग्य नहीं, तेह अयोग विचार ॥१६५॥
अच्चौण राग पणै कच्चो, ते राग भाव रै मांहि ।
आणां केवली नौ अछै, अथवा आज्ञा नाहिं ॥१६६॥
वलि परिचय करि ने कच्चो, ते परिचय पहिछान ।
आछो छै अथवा बुरो, न्याय विचार मुजान ॥१६७॥
ईषत् स्नेह गर्भानुकम्प, सभाव थी अवलौय ।
अंगीकृत कच्चुं वृत्ति में, तास न्याय हिव जोय ॥१६८॥
जे अनुकम्पा ने विषै, स्नेह रच्चो छै ताय ।
स्नेह गर्भ अनुकम्प ते, मोह अनुकम्प कहाय ॥१६९॥

इहा सराग पणो कच्चो, ते सराग पणा रे मांय ।
 धर्म पुण्य किण विध ह्वै, देख विचारो न्याय ॥१६०॥
 सराग पणो कहि न पछै, दया एक रस ख्यात ।
 जिसो सराग पणो ह्वै, तिसीं दया ए थात ॥१६१॥
 सराग भाव निर्वद्य नहीं, तिम दया न निर्वद्य एह ।
 दोनूं सावद्य जाणवा, न्याय विचारो लेह ॥१६२॥
 बे साधु नवि राखिया, ते वीतराग भावेह ।
 दयावन्त पिण जद हुन्ता, पिण सावद्य दया न तेह ॥१६३॥
 वीतराग थयां पछै, भाव सराग न होय ।
 तिम वीतराग थयां पछै, सावद्य दया न कोय ॥१६४॥
 कोई कहै सावद्य दया, किहां कही छै ताम ।
 न्याय कहूं छूं तेहनो, मुण राखो चित्त ठाम ॥१६५॥
 हेमि नाम माला विषै, आठ दया रा नाम ।
 दया शुक कारुण्य फुन, करुणा घृणा जु ताम ॥१६६॥
 कृपा अने अनुकम्प फुन, वलि अनुक्रोश कहाय ।
 नाम एकार्य आठ ए, त्वयीय कांड रै मांय ॥१६७॥
 ॥ अथ हेमिनाम माला में आठ दया रा
 नाम कह्यो ते लिखिये छै ॥
 सूक्तोय दयाशुकः कारुण्यं करुणा घृणा कृपानु कम्पानु क्रोशो ॥इति॥
 जिन ऋष रूहामो जोवियो, रत्तन द्वीप नौ जेण ।
 देवी नौ करुणा करी, ज्ञाता नवम् अध्ययन ॥१६८॥

होणहार निस्त्रय तिको, टाल्यो नहीं टलन्त ।
 तिण कारण गोशाल ने, दीक्षा दी भगवन्त ॥१८०॥
 वृत्तिकार पिण ड्रम कच्चो, तुम ने पिण तिण रीत ।
 कहिवुं तेहिज उचित है, वारुं बचन बदीत ॥१८१॥
 कोई कहै ए वृत्ति ने, तुम्हे न मानो कोय ।
 तो बात वृत्ति नी किम कहो, हिव उत्तर अवलोय ।१८२।
 भगवती शतक अठारमें, प्रभुजी भणी प्रत्यक्ष ।
 सोमिल प्रश्नज पूछिया, शरसव भक्ष अभक्ष ॥१८३॥
 जिन कच्चो जे ब्राह्मण तणा, शास्त्र विषे आख्यात ।
 शरसव ना बे भेद है, इत्यादिक अवदात ॥१८४॥
 तो ब्राह्मण ना शस्त्र प्रते, स्युं मान्युं जगनाथ ।
 पिण तेहने समभायवा, तसु मतनी कही बात ।१८५।
 तिम मिलतौ ए वार्ता, वृत्ति तणी आख्यात ।
 जे वृत्ति मानै तेहने, समभावा कही बात ॥१८६॥
 वलि प्रभु गोशाला तणी, अनुकम्पा चित्त ल्याय ।
 शीतल तेलू फोड़वी, रक्षण कौघो ताय ॥१८७॥
 वृत्तिकार ड्रम आखियो, तेह सराग पणेह ।
 एक दया ने रस थकी, रक्षण कौघो एह ॥१८८॥
 बे मुनि ने न बचावसी, तब वीतराग भावेह ।
 लब्धि अण फोड़वा थकी, अवश्य भावी एह ॥१८९॥

तिण सूं तेजु लब्धि प्रति, फोड़ी ने भगवान ।
 गोशाला ने राखियो, कृद्मस्थ थकां पिछाण ॥२०६॥
 केवल ज्ञान थयां पछै, लब्धि फोडवणी नाहिं ।
 बहु ठामे वर्जो प्रभु, देखी सूत्रे मांहि ॥२१०॥
 पद कृत्तोसम पन्नवणा, वैक्रिय लब्धिज ताय ।
 फोड्यां क्रिया जघन्य तण, उत्कृष्ट पञ्च ही पाय ॥२११॥
 इमहिज आहारिक लब्धि प्रति, फोड्यां थी पहिछान ।
 जघन्य तीन क्रिया कही, उत्कृष्ट पञ्च मुजान ॥२१२॥
 इमहिज तेजु लब्धि प्रति, फोडे तेहने जोय ।
 जघन्य तीन क्रिया कही, उत्कृष्ट पञ्च न होय ॥२१३॥
 तेजु लब्धि जे फोडवी, प्रभु कृद्मस्थ पणेह ।
 केवल लब्धां क्रिया कही, वैक्रिय नी परै एह ॥२१४॥
 सराग भाव करि कार्य कृत, तास स्थाप स्युं होय ।
 केवल लब्धां पछै कछो, तास स्थाप छै सोय ॥२१५॥
 कोर्द कहे अनुकम्प करि, प्रभु राख्यो गोशाल ।
 ते माटै इहां धर्म छै, उत्तर तास निहाल ॥२१६॥
 ब्रह्म तणी अनुकम्प करि, कृष्णे ईंट उपाड़ ।
 तास घरे मेली कही, अन्तगडे अधिकार ॥२१७॥
 सुलसां नी अनुकम्प करि, पुत्र देवकी नां ज ।
 संक्या हरण गवेषि सुग, सूत्र अन्तगड साज ॥२१८॥

करुणा नाम दया तणो, ते माटे सुविचार ।
 एह दया सावद्य है, श्री जिन आज्ञा वार ॥१६६॥
 उत्तराध्ययन बावौस में, नेमनाथ भगवान ।
 जीव देख अनुक्रोश मन, पाठ विषै पहिछान ॥२००॥
 अनुक्रोश ते करुणा कही, अविचरि में अर्थ ।
 ते माटे करुणा दया, निर्वद्य एह तदर्थ ॥२०१॥
 तिण सूं भाव सराग नौ, दया ज सावद्य सोय ।
 अष्टादश में देखलो, दशमूं राग सुजीय ॥२०२॥
 लब्धि अणफोड़ववा थको, वीतराग भाविह ।
 बे साधू नवि राखस्ये, ए पिण वृत्ति विषेह ॥२०३॥
 तिण सूं सराग भाव करि, शीतल तेजु लेश ।
 लब्धि फोड़वी राखियो, गोशालक सुविशेष ॥२०४॥
 गोशालक हणवा भणी, बाल तपखौ जेह ।
 उष्ण तेजु लेश्या प्रति, मूंकौ पाठ विषेह ॥२०५॥
 भगवन्त अनुकम्पा करी, लेश्या शीतल तेह ।
 मूंकौ गोशालक भणी, रक्षण करण कहेह ॥२०६॥
 उष्ण तेजु लेश्या कही, शीतल तेज हो लेश ।
 तेजु लेश ए बिहू कही, पाठ विषै सुविशेष ॥२०७॥
 उष्ण तेज लेश्या प्रति, तापस मूंकौ सोय ।
 लेश्या शीतल तेज प्रति, प्रभू मूंकौ अवलोय ॥२०८॥

भगवतो गौतम गुण मभौ, तेजु लेश्या प्रति ताहि ।
 संकोचै ते गुण कच्चो, फोड्यां गुण कच्चो नाहिं ॥२२६॥
 इत्यादिक बहु सूत्र में, तेजु बैक्रिय आदि ।
 मुनि ने लब्धि न फोडणी, देखो धर अहह्लाद ।२३०॥
 जो लब्धि फोड गोशाल ने, राख्यां धर्मज होय ।
 तो बे मुनि प्रति राख्या न क्युं, न्याय विचारौ जोय ।२३१॥
 जब कहै बे मुनिवर तणो, मृत्यु जाण भगवान ।
 तिण कारण राख्या नहौं, हिव तसु उत्तर जाण ॥२३२॥
 वृत्तिकार तो इम कच्चो, वीतराग भावेह ।
 लब्धि अण फोड्यां थकौ, वलि अवश्य भावौ छै एह ॥२३३॥
 शीतल तेजु लब्धि प्रति, अण फोडवा थौ ख्यात ।
 तिण मुं शीतल तेजु पिण, किम फोडै जगनाथ ॥२३४॥
 ज्यो प्रभु बे मुनिवर तणो, जाण्यो मृत्यु जिवार ।
 तो मुनि गौतम आदि त्यां, क्युं नहिं कौधी सार ।२३५॥
 गौतम आदि विषै हुन्तो, शीतल तेजु लेश ।
 त्यां लब्धि फोड राख्या न क्युं, बे मुनि प्रति सुविशेष ॥
 जब कहै गौतम आदि प्रते, वर्ज्या प्रभुजौ तोय ।
 तिण सुं मुनि राख्या न बे, निसुणो तेहनो न्याय ॥२३७॥
 प्रभु तो आनन्द ने कच्चो, तूं मुनि प्रते कहैह ।
 धर्म प्रति चोयण मत करो, गोशालक थी जेह ॥२३८॥

पथ्य धारणी भोगव्यो, गर्भ अनुकम्पा आण । -
 अभय अनुकम्पा सुर करी, दोहलो पूख्यो जाण ॥२१६॥
 हरकेशी मुनिवर तणी, अनुकम्पा करि यक्ष ।
 रुधिर वमन्ता छात्र कृत, उत्तराध्ययन प्रत्यक्ष ॥२२०॥
 वलि मुनि नी व्यावच अर्थ, छातां ने दुःख देह ।
 ए पिण सावद्य जाणवौ, तिम अनुकम्प कहैह ॥२२१॥
 अनुकम्पा तस जीवनी, आणी ने मुनिराय ।
 बांधै बांधतां प्रति, अनुमोद्यां दण्ड आय ॥२२२॥
 इमहिज छोडे छोडतां प्रति, मुनि जे अनुमोदेह ।
 निशीथ उद्देशे वारमें, दण्ड चौमासी कहैह ॥२२३॥
 अनुकम्पा ए सहू कही, पाठ विषे पहिछाण ।
 जिन आज्ञा नहिं तेह में, तिण सुं सावद्य जाण ॥२२४॥
 तिम प्रभु गोशाला तणी, अनुकम्पा चित्त आण ।
 तेज लब्धिज फोडवौ, तिण सुं सावद्य जाण ॥२२५॥
 आहारिक लब्धि फोडवै, अधिकरण कछो तास ।
 शतक सोलमें भगवती, प्रथम उद्देश विमाम ॥२२६॥
 वैक्रिय लब्धि फोडवै, कछो विराधक ताहि ।
 भगवती तीजे शतक में, तूर्य उद्देशा मांहि ॥२२७॥
 जड्ढा विद्या चारणा, लब्धि फोडवौ जाय ।
 ते थानक विन पडिकम्यां, कछा विराधक ताय ॥२२८॥

छेदै हरश मुनि तणी, क्रिया वैद्य ने ख्यात ।
 शतक सोलमें भगवती, तृतीय उद्देश सञ्जात ॥२४६॥
 आज्ञा श्री जिनवर तणी, जेह कार्य मे नांय ।
 तेह कार्य कौधां छतां, धर्म पुण्य किम थाय ॥२५०॥
 तिमज लब्धि फोड़ण तणी, श्री जिन आण न देह ।
 धर्म पुण्य किम तेह में, न्याय विचारो एह ॥२५१॥
 कोर्ड कहै छद्मस्थ प्रभु, फोड़ी लब्धि जिंवार ।
 दण्ड लियो रयुं तेहनो, हिव तसु उत्तर सार ॥२५२॥
 राजमती ने बोलियो, विषय बचन रहनेम ।
 प्रायश्चित चाल्यो न तसु, पिण लियो हुस्ये धर पेम ॥२५३॥
 जल विच पात्री नाव जिम, आद्रमुते ऋषि कौध ।
 प्रायश्चित चाल्यो न तसु, पिण लौधो हुस्ये प्रसिद्ध ॥२५४॥
 मोह बशे सीहो मुनी, रोयो मोटै साद ।
 प्रायश्चित चाल्यो न तसु, पिण लौधो हुस्ये संवाद ॥२५५॥
 धर्म घोष ना सन्त जे, आवी चोहटा मांहि ।
 नाग श्री हेली निन्दी, तसु दण्ड चाल्यो नांहि ॥२५६॥
 हणसे हय नृप सारथी, नाम सुमङ्गल सन्त ।
 प्रायश्चित चाल्यो न तसु, शतक पनरम् उहन्त ॥२५७॥
 कोर्ड कहै आलोचना, पडिक्कमणा कहौ तास ।
 तिण सुं ए दण्ड तेहनुं, हिव उत्तर सुविमास ॥२५८॥

पिण मुनि प्रते न बचावणा, इम तो आख्यो नांय ।
 तिण सुं गौतम आदि जे, मुनि नहौं राख्या कांय ॥२३६॥
 पिण जे लब्धि फोडण तणौ, श्रीजिन आज्ञा नांय ।
 तिण सुं शोतल तेजु प्रति, किम फोडे मुनिराय ॥२४०॥
 लब्धि फोड गोशाल ने, राख्यो श्री भगवान ।
 जद कृद्मस्थ पणो हुन्ता, मोह स्नेह बश जान ॥२४१॥
 जल थो नाव भरौजतौ, देखौ ने मुनिराय ।
 गृही प्रते बतावणो नहौं, द्वितीय आचारङ्ग मांय ॥२४२॥
 डूवै आप अने बली, जे डूवै बहु जीव ।
 तसु अनुकम्प करै नहौं, रहै समभाव अतीव ॥२४३॥
 मात बचावा ऊठियो, चूलणि पिया मिक्काण ।
 तसु पोषह भागो कछो, सप्तम अङ्गे जाण ॥२४४॥
 मिथिला बलतौ देख नमि, रहामौं जोयो नाहिं ।
 देखो उत्तराध्ययन में, नवमें अध्ययने ताहि ॥२४५॥
 दशवैकालिक सातमे, देव मनुष तिर्यञ्च ।
 विग्रह लडता परस्पर, देखी ने मुनि सञ्च ॥२४६॥
 एहनौ होवै जीत फुन, एहनौ होवै हार ।
 एहवुं न कहै महा मुनी, हिव तसु न्याय विचार ॥२४७॥
 हार जीत नबि बञ्कवौ, तो तास विचै पड़ सन्त ।
 कीम करावै हार जय, देखोजौ मति सन्त ॥२४८॥

छट्टा गुणठाणा विषे, आखी च्यार कषाय ।
 षट् लैरया संज्ञा चिहुं, अशुभ जोग पिण आय ॥२६६॥
 परिचय स्नेह अनुकरूप करि, अक्षीण राग पणोह ।
 सराग भाव फुन लब्धि नूं, फोडवुं पिण लेह ॥२७०॥
 प्रथम छट्टा गुणठाण ना, प्रगट भाव ए पेख ।
 निर्वद्य किम कहिये तसु, न्याय विचारौ देख ॥२७१॥
 जेह कार्य नौ केवली, आज्ञा न दिये कोय ।
 धर्म पुण्य नहिं तेह में, हिये विमासी जोय ॥२७२॥
 जेह कार्य नौ केवलो, आज्ञा देवै आप ।
 धर्म पुण्य छै तेह में, तिहां नहिं किञ्चित पाप ॥२७३॥
 केई जिन आज्ञा में पाप कहै, धर्म जिन आज्ञा बार ।
 बिहुं विध अशुद्ध प्ररूपवै, किम पामै भव पार ॥२७४॥
 जिन धर्म जिन आज्ञा दियै, जिन धर्म सिखावै आप ।
 जे धर्म कहै आज्ञा बिना, ते कंवर प्ररूप्यो थाप ॥२७५॥
 आज्ञा बारै धर्म रो, कवण धणो अवलोय ।
 हाथ जोडि पूज्यां थकां, कुण आज्ञा दे सोय ॥२७६॥
 देव गुरू तो मौन रहै, नहिं अनुमोदै अंश मात ।
 तो आज्ञा बाहिर धर्म रौ, उत्पति रो कुण नाथ ॥२७७॥
 संबर ने बलि निरजरा, दोय प्रकारे धर्म ।
 जिन आज्ञा में ए बिहुं, ते थौ शिवमुख परम ॥२७८॥

चर्म समय नूं पाठ ए, खन्वक धन्नो आदि ।
 बहु मुनि नो समुच्चय कच्चो, तिम ए पिण संवाद ॥२५६॥
 जङ्घा विद्या चोरणा, तस्स ठाणस्स सोय ।
 भालोद्वय पडिक्कमिय, एहवो पाठ सुजोय ॥२६०॥
 लब्धि फोडो ते स्थान प्रति, आलोवो गुणवन्त ।
 वलि पडिक्कमे ते मुनो, पद आराधक हुन्त ॥२६१॥
 मुनो सुमङ्गल स्थान के, तस्स ठाणस्स नांहि ।
 तिण सुं लब्धि फोडण तणो, दण्ड कच्चो नहिंताहि ॥२६२॥
 पिण नृप हय अरु सारथी, हणसे दण्डज तास ।
 तेह मुनो लेस्ये सहो, कच्चुं सव्वठ सिद्ध वास ॥२६३॥
 इत्यादिक्क बहु ठाम ही, प्रायश्चित्त चाल्या नांहि ।
 पिण लिया हुस्ये महा मुनो, गुणी देखोजी दिल मांछि ॥२६४॥
 तेजु लब्धि जे फोडवै, तास क्रिया चण पच्च ।
 केवल लच्छां कच्चो प्रभु, तिण सुं दण्ड सुसच्च ॥२६५॥
 कल्पातीत हुन्ता प्रभु, कै ए साचो वाण ।
 पिण किण गुणठाणे तिके, कहिये चतुर मुजाण ॥२६६॥
 प्रभुजी चरित्त लियां पछो, अणो चव्वा पहलांज ।
 सप्तम गुण छट्टै वली, वे गुणठाण समाज ॥२६७॥
 सप्तम गुणठाणा तणी, उत्कृष्टी अवलोय ।
 अन्तर महरत स्थिति कै, छट्टै बहु स्थित जोय ॥२६८॥

गुणवन्त री निन्दा कियां, कर्म तणुं बन्ध हीय ।
 तेह कर्म थी दुःख लहै, नरक निगोदैं सोय ॥२८८॥
 तिण सुं हित शिक्षा भली, धारै सुगण सुजाण ।
 राग द्वेष छांडी करी, आराधै जिन आण ॥२८९॥

॥ कलश ॥

॥ चाल गीतक छन्द ॥

जिन बयण गुण मणी रयण सार उदार देखी
 संयच्छा, अवि तथ्य पथ्य सु अर्थ जे मुक्त भ्यासना में
 जिम कच्छा । अति श्रेष्ठ मिष्ट गरिष्ठ प्रवर विशिष्ट जिन
 वच आद्यतं ॥ वच विरुद्ध को आयो हुवै मुक्त तास
 मित्थ्या दुःकृतं ॥ १ ॥ उगणीसै तेतीस वर्ष विद् द्वादशी
 फागुण वही, वर शहर नौदासर विषै हृद् अमण एका-
 वन सही । फुन अर्ज का द्वाकश्य तिहां गणी आण
 सम्प्रति शोभती । वर समय सार उदार निर्णय कीध
 जय जश गणपति ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

भिन्नु भारीमाल फुन, तृतीय पाट ऋषिराय ।
 तास पसाए सुगण वृद्धि, जय जश हर्ष सवाय ॥ १ ॥

दोय प्रकारे धर्म वलि, श्रुत फुन चरित पिछांण ।
 जिन आज्ञा ए बिहुं विषै, समझी सुगण सुजाण ॥२७६॥
 पञ्च महाव्रत साधुग, श्रावक ना व्रत बार ।
 जिन आज्ञा में ए बिहुं, आज्ञा बार असार ॥२८०॥
 तिण सुं जिन आज्ञा तणी, राखी सुगण प्रतीत ।
 धर्म जिन आज्ञा धारियो, ते गया जमारो जीत ॥२८१॥

॥ अथ हित शिक्षा ॥

दुःख बहु नरक निगोद ना; सञ्जा अनन्ती बार ।
 धर्म जिन आज्ञा शिर धरै, हुवै तास निस्तार ॥२८२॥
 मनुष जन्म दोहिलो लच्छो, लही सामथी सार ।
 पञ्च महाव्रत आदरी; आराध्यां भव पार ॥२८३॥
 जो चरित धर्म ग्रही नहिं सकै, तो श्रावक ना व्रत बार ।
 निर अतिचारे पाखियां, पामै भव दधि पार ॥२८४॥
 जो बार व्रत ग्रही न सकै, तो समदृष्ट उदार ।
 देव गुरू धर्म ओलख्यां, सुख पामै श्रीकार ॥२८५॥
 जो पूरै समझ पडै नहीं, तो गुणवन्त रा गुण गाय ।
 कोइक रसायण आवियां, पातिक दूर पुलाय ॥२८६॥-
 पोतै व्रत पालै नहीं, पालै ज्यासूं द्वेष ।
 दोय मूर्ख तिण ने कछो, प्रथम आचारइ देख ॥२८७॥

उत्तराध्ययन इकवीस में, समुद्रपाल सम्बेग ।
 पायो तस्कर देखने, देखो तज उद्देग ॥ ५ ॥
 सम्बेग पाठ तणो अर्थ, अविचूरि में ख्यात ।
 सम्बेग ना हेतु भणौ, सम्बेग चोर कहात ॥ ६ ॥

॥ सूत्र गाथा ॥

तं पसि ऊणं सम्बेगं, समुद्रपालो इण मब्बी, अहो असुहाण
 कम्माणं, निरुक्काणं पावगं इमं ॥ उत्तराध्ययन २१ वें गाथा ६ मी ॥

॥ अत्र अविचूरी ॥

तमिति तथा विध द्रव्यं दृष्ट्वा संवेग संसार वैमुख्यतो मुक्तय
 ऽमिलापस्तद्वेतुत्वात्सोपि संवेगस्तं समुद्रपाल इदं वक्षमाणं अत्रवीत्
 यथा अशुभानां पापकानां कर्मणा मनुष्यानां निर्यातं अवसानं पापकं
 अशुभं इदं प्रत्यक्ष असौवराकौ वद्वार्थं मित्यंतीय ते इति भावः ।

॥ वार्त्तिका ॥

इहां कह्यो तं कहतां ते, तथा विध द्रव्य देखी ने सम्बेग ते संसर
 विमुखणो मुक्तिनी अमिलापा ते सम्बेग ना हेतु पणा थकी, सोपि
 कहतां तिको चोर पिण सम्बेग, जिम पापकारी कर्म ते अनुष्ठान ना
 छेहद्वै अशुभ ए प्रत्यक्ष रांक वध ने अर्थे इह विध लेजाय छे, एदले
 सम्बेग नो हेतु चोर ते देखी ने समुद्रपाल बोल्यो अशुभ कर्म ना फल
 ए भोगावै छे ।

॥ दोहा ॥

सम्बेग नो हेतु कह्यो, तसकर ने अवलोय ।
 पिण गुण नहिं छै ते भणौ, वन्दन योग न कोय ॥ ७ ॥

तिणकाले भिन्नू गणे, मुनिवर सित्तर दोय ।
 इक सह वाणु अर्जका, गणी आणा अवलोय ॥ २ ॥
 उत्तर तुम्हे मंगाविया, हमे लिखाव्या नांय ।
 ते माटे ए प्रश्न ना, उत्तर दोहा वणाय ॥ ३ ॥
 दोहा गहस्य कंठे करी, निज मति थकी लिखेह ।
 तिकी खोट ज्यो को लिखी, तो मुझ दोषण मत देह ॥४॥

॥ इति गोशालाधिकार ॥

॥ अथ छब्बीसमूं प्रतिमा वैराग्य नो
 हेतु कहे तेहनं उत्तर ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहे वैराग्य नो, हेतु प्रतिमा पह ।
 जिन प्रतिमा देखी करी, वर वैराग्य लहेह ॥ १ ॥
 ते माटे वन्दनीक है, निज प्रतिमा जग मांय ।
 हिव तेहनं उत्तर कहूं, सांभल जो चित्तलाय ॥ २ ॥
 वृषभ देख प्रति वृभियो, कर कंडू नरराय ।
 दु मुह इन्द्रध्वज स्यम्ब प्रति, देख संवेग सुपाय ॥ ३ ॥
 चूडि सं प्रति वृभियो, नमि नृपति तिह काल ।
 अम्ब देख प्रति वृभियो. नगई नाम भूपाल ॥ ४ ॥

द्वेष तणा हेतु प्रभु, पिण ते गुणा सहीत ।
 तिण सुं ते निन्दनीक नहिं, देखोजी धर प्रीत ॥१८॥
 वस्तु जे गुण सहित प्रति, देखी द्वेष लहेह ।
 द्वेष तणो हेतु तिका, पिण निन्दनीक नहिं जेह ॥१९॥
 वस्तु जे गुण हीण प्रति, देखि संबेग लहेह ।
 संबेग नो हेतु तिका, पिण वन्दनीक नहिं तेह ॥२०॥

॥ अथ सत्तावीसम् ब्राह्मी लिपि अधिकार ॥

॥ दोहा ॥

कोई कहै अह पञ्चमें, ब्राह्मी नी लिपि सार ।
 नमस्कार तेहने कखुं, हिव तसु उत्तर धार ॥ १ ॥
 नमो वंभीए लिबो ए, लिपि कर्ता नामेय ।
 चरण सहित जिन धुलिपिक, अर्थ धर्मसौ एह ॥ २ ॥
 पाथा ना कर्ता भणी, पाथो कहिए ताहि ।
 एवं भूत नयने मतै, अनुयोग द्वार रै मांहि ॥ ३ ॥
 अथवा लिपि जे भाव लिपि, जे मुनि ने आधार ।
 नमस्कार छै तेहने, एहवुं दीसै सार ॥ ४ ॥
 तीर्थ नाम जिम सूत्र नूं, ते संघ ने आधार ।
 तिण सुं सङ्घ ने तीर्थ कछुं, तिमभावे लिपि सार ॥ ५ ॥

वृषभादिक देखी करी, कर कंडू आदेह ।
 बूम्या पिण वृषभादि ते, वन्दनीक न कहेह ॥ ८ ॥
 मुनि वेषे जे पासथो, तसु देखी ने सोय ।
 वैराग पावै पिण तिको, वन्दन योग न कोय ॥ ९ ॥
 तिम जिन प्रतिमा देखने, पावै जे वैराग ।
 पिण ते वन्दन योग नहीं, देखो मत पक्ष त्याग ॥ १० ॥
 ज्ञान दर्शन चारित तथा, गुण नहिं कै जे मांय ।
 ते सम्बेग नो हेतु हुवै, पिण वन्दनीक नहिं थाय ॥ ११ ॥
 मुनिवर प्रति देखी करी, द्वेष धरै मन कोय ।
 द्वेष तणो हेतु मुनो, पिण निन्दनीक नहिं होय ॥ १२ ॥
 श्रवानु भूति मुनि तथा, वचन सुणौ गोशाल ।
 कोप्यो शीघ्र उवावलो, भस्म कियो तेह काल ॥ १३ ॥
 कोप तणो हेतु मुनो, पिण गुण सहित सुसन्त ॥
 ते माटै निन्दनीक नहीं, देखोजी बुद्धिवन्त ॥ १४ ॥
 सुनचत्र ना वचन सुणि, धर्युं गोशालै द्वेष ।
 द्वेष तणो हेतु तिको, पिण निन्दनीक नहिं पेख ॥ १५ ॥
 वीर प्रभूना वचन सुणि, कोप्यो शीघ्र गोशाल ।
 कोप तथा हेतु प्रभू, पिण निन्दनीक मत न्हाल ॥ १६ ॥
 छद्म वीर प्रति देखि ने, जन बहु द्वेष धरैह ।
 दुःख दौधा अति आकरा, आख्यो घुर अङ्गेह ॥ १७ ॥

वैदिक विकथा वारता, मन्त्र जन्त्र फुन तन्त्र ।
 कौक सामुद्रिक शास्त्र ए, लिपि में सहु आवन्त ॥१६॥
 पाप शास्त्र गुणतीस फुन, वर्ण स्थापना पेख ।
 ए अठारै लिपि विषै, वन्दनीक तुम्ह लेख ॥१७॥
 वीतराग तो तेहने, पाप शास्त्र आख्यात ।
 द्रव्य लिपि कहिए तेहने, वन्दनीक किम घात ॥१८॥
 जो वन्दनीक द्रव्य लिपि ह्वै, द्रव्य लिपि कहौ अठार ।
 तेह विषै सहु आविया, किम वन्दे अणगार ॥१९॥
 ते माटे ते भाव लिपि, वा करता नाभेय ।
 ऋषभ चर्ण गुणयुक्त ने, नमस्कार सुगुणेह ॥२०॥

॥ वार्त्तिका ॥

कोई कहै भगवती रै आदि में णमोवमीप लिपिए । ए शब्द कही
 पछै कह्यो णमो सुयस्स ते लिपि ने नमस्कार करी सूत्र ने नमस्कार
 कसुं ते भाव श्रुत ने नमस्कार क्ये छतै ते भाव सूत्र ने विषैभावलिपी
 पिण आय गई तो पूर्वे भाव लिपी ने नमस्कार किधो तेहनं स्युं कारण
 नमोवमीप लिपिए अने नमो सुयस्स ए बे पद किम कहाा तेहनु उत्तर ॥
 दशवैकालिक अध्ययन आठमें गाथा ४१ मी में कह्यो कुम्भुवं अल्लिण
 पल्लिण गुत्तो, फालवा नी परै, अल्लिण ते इषत् गुत्त पल्लिण ते प्रकृष्ट
 लीन घणो गुत्त इहाँ बे पद कहाा तथा दशवैकालिक अध्ययन चौथे
 कह्यो पृथ्वीकाय ऊपर न लिहेज्झा कहितां थोड़ोसो अथवा एक
 बार लिखै नहीं, न विलिहेज्झा कहतां बहुवार लिखै नहीं इहाँ पिण
 बे पद कहाा, तथा उत्तराध्ययन पहले आलवन्ते लवन्ते वा न सिपज्झ
 कायाइवि गुरुं, आलवन्ते कहतां एकवार बोलाव्यो वा ते अथवा लवन्ते

वृत्तिकार द्रव्य लिपि कही, तेह लिपि गुण सून्य ।
 नमस्कार तेहने करेइ, ते तो बात जवुन्य ॥ ६ ॥
 द्रव्य निचेपो गुण रहित, वन्दन जोम्य न ताम ।
 समवायङ्गे देखल्यो, द्रव्य भाव जिन नाम ॥ ७ ॥
 भरत एरवत खेव ना, अनागते जिन नाम ।
 समचे चौबीस नाम जिन, वन्दे पाठ न ताम ॥ ८ ॥
 वले एरवत खेव नी, चउबीसौ वर्तमान ।
 ठाम ठाम वन्दे कहुं, ए गुन सहित सुजान ॥ ९ ॥
 वर्तमान चउबीस ए, भरत खेव नी ताहि ।
 ठाम ठाम वन्दे कहुं, जोवो लोगस्स मांहि ॥ १० ॥
 ते लेखे द्रव्य लिपि भणी, द्रव्य सूत्र ने सोय ।
 नमस्कार किम कीजिये, हिये विमासी जोय ॥ ११ ॥
 वृत्तिकार द्रव्य लिपि भणी, थाप्यो छे नमस्कार ।
 सूत्र थकी मिलतो नथी, एह अर्थ अवधार ॥ १२ ॥
 तथा पत्र में जे लिख्या, अक्षर ना आकार ।
 वन्दनीक जो ते हुवै, तो लिपि अष्टादश धार ॥ १३ ॥
 अष्टादश लिपि ने विषै, वेद पुराण संपेख ।
 कुरान जोतिष पिण हुवै, वन्दनीक तुभ लेख ॥ १४ ॥
 अष्टादश लिपि ने विषै, वर्ण संज्ञा संपेख ।
 सह पुस्तक में जे लिख्या, वन्दनीक तुभ लेख ॥ १५ ॥

कहतां बार बार बोलाव्यो नं० शिष्य बैठो रहै नहीं कदाचित् पिण इहाँ
पिण बे पद कहा, तथा उत्तराध्ययन इग्यारमें नासीले कहितां सर्वथा
चारित्र नी विराधना नथी विसीले कहतां थकी चारित्र नी विराधना
नथी इहां पिण देश अने सर्व ए बे पद कहा, तथा बृहत्कल्पलक्ष्मी तीसरै
अन्तर घरने विपै साधू ने न कल्पै निहा इत्तएवा कहिता थोडी नींद लेवी
पयला इत्तएवा कहिनां विशेष ऊंघबो इहाँ पिण बे पद कहा, इत्यादिक
अनेक ठामें बे पद कहा तिम इहाँ पिण बे पद जाणवा लिपि शब्दे भाव
लिपि ते देश थकी श्रुत ज्ञान अने नमो सुयस्स ते सर्व श्रुत ज्ञान कह्यो
तथा लिपिना करता ऋषभदेव ने लिपिक कहिए ते चारित्र युक्त प्रथम
जिनने नमस्कार ।

॥ अत्र टीका ॥

अर्थ च प्राग् वाख्याता नमस्कारादिकाग्रन्थ वृत्ति कृता न व्याख्यातो
कृतोप कारणा दिति, ए भगवती नी वृत्ति मे अमय देव सूरे कह्यो ।

॥ सौरठा ॥

नमस्कारादिक ताहि रे, रचना पूर्व कही जिका ।
मूल वृत्ति रै मांहि रे, न कही किण कारण तिका । १ ।
इम कछो वृत्तिकार रे, ते माटै हिव तेहनुं ।
प्रवर न्याय जे सार रे, बुद्धिवन्त हिये विचारज्यो ॥ २ ॥
॥ इति ॥ श्रीमद् जयाचार्य्य कृत हित शिक्षावली प्रश्नोत्तर तत्त्वबोध ॥

